

# परमाणु

Gandhi Memorial College of Education Bantala Jammu

और

# मानव

चन्द्र कुमार सिन्हा

.1  
IS  
54



‘परमाणु से संहार या समृद्धि’  
‘परमाणु से मृत्यु या जीवन’  
‘परमाणु से रोग या रोग-निदान’

अथवा

परमाणु स्वास्थ्य और सुन्दर जीवन हेतु पारस पत्थर ?

या

विश्व को प्रलय के कगार तक पहुंचाने वाला आयुध ?

उक्त प्रश्नों का उत्तर आप इस पुस्तक में पा सकेंगे ।

परमाणु और रेडियोधर्मिता से सम्बद्ध खोजें किसी एक राष्ट्र में नहीं हुईं । परमाणु-सिद्धांत का प्रतिपादन भारत में हुआ । फिर ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, इटली और डेनमार्क में अनेक खोजें हुईं जिन्हें अमरीका ने परमाणु बम में परिणत किया । विश्व ने परमाणु के महत्त्व को एकाएक 6 अगस्त, 1945 में उस समय जाना जब अमरीका ने प्रथम परमाणु बम-प्रहार जापान के हिरोशिमा नगर पर किया ।

इधर भारत में, जापान पर प्रथम परमाणु बम-प्रहार से एक वर्ष पूर्व, स्व० डॉ० होमी जहांगीर भाभा ने अपनी दूरदर्शिता का परिचय देकर एक ऐसे स्कूल के स्थापना की कल्पना की जो कालांतर में परमाणु के शांति-पूर्ण उपयोगों की आधारशिला बना सके । डॉ० भाभा की कल्पना स्व० जवाहरलाल नेहरू की उस विशाल कल्पना के साथ जुड़ गई जिसके द्वारा वे भारत को विश्व के अग्रणी देशों में से एक बनाना चाहते थे और इस प्रकार भारत उन गिने-चुने देशों में से एक है जो परमाणु का दोहन शांतिपूर्ण उपयोगों के लिए कर रहे हैं ।

अथक प्रयास और शोध के उपरांत लिखी इस पुस्तक में परमाणु के मानवीय पक्ष को उजागर किया गया है । क्या परमाणु ऊर्जा सुरक्षित है ? यदि परमाणु-युद्ध होता है तो आपको क्या करना चाहिए ? उक्त मानवीय प्रश्नों का उत्तर आपको इस पुस्तक में प्राप्त होगा ।

भारत में हुए परमाणु ऊर्जा संबंधी कार्यों की विस्तृत और प्रामाणिक जानकारी भी इस पुस्तक में प्राप्य है ।



"केन्द्रीय सह-  
शिक्षा विभाग"







## परमाणु और मानव



LIBRARY



ज्ञान भारती

4/14, रूपनगर दिल्ली-110007

# प्रमाण और मानव

चन्द्रकुमार मिश्र

Gandhi Memorial College  
SRINAGAR

Acc. No: 764

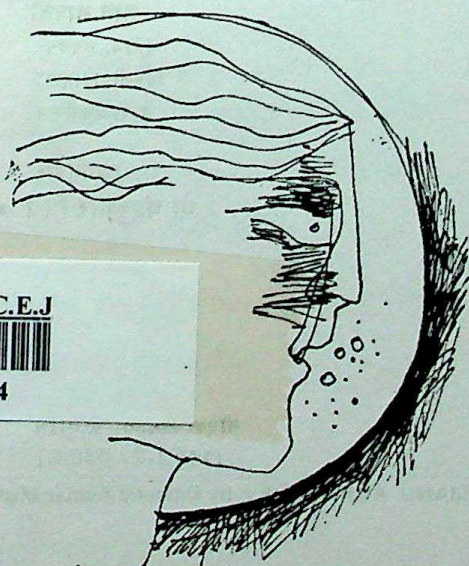
Dated: 1992

8 (VI)

G.M.C.E.J



764





ज्ञान भारती

4/14, रूपनगर  
दिल्ली-110007  
द्वारा प्रकाशित

सर्वाधिकार

श्री चंद्रकुमार मिश्र • मूल्य : 35.00

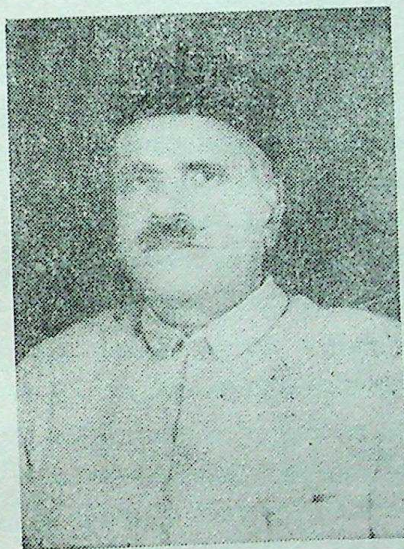
प्रथम संस्करण  
1988

सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस  
ए-95, सेक्टर-5  
नोएडा-201301 में मुद्रित  
[145.1-22-588/G]

---

PARMANU AUR MANAV by Chandra Kumar Mishra Rs. 35.00

पूज्य पिताजी स्व० पं० शिवगोविंद मिश्र की  
पुण्य स्मृति में



श्रद्धा सुमन





## भूमिका

बात 16 जुलाई, सन् 1945 ई० की है। संयुक्त राज्य अमरीका के दक्षिणी भाग में स्थित न्यू मैक्सिको नगर के समीपवर्ती प्रदेश में प्रातः पांच बजे एकाएक अलौकिक सूर्योदय हुआ जो कुछ क्षणों के उपरांत अस्त हो गया। जिन व्यक्तियों ने उसे देखा, वे आश्चर्यचकित रह गये किंतु वे यह न जान सके कि इस सूर्योदय के साथ एक नवीन युग का जन्म हो गया जिसे 'परमाणु युग' कहते हैं।

उस दिन सर्वप्रथम 'परमाणु विस्फोट' हुआ था। यह परमाणु विस्फोट इतना भयंकर था कि विस्फोट के स्थान के आसपास की रेत पिघल गयी थी तथा इतना तीव्र प्रकाश हुआ था कि दर्शकों को एकाएक दोपहर के सूर्य के उदय होने का आभास हुआ था। कहते हैं, उक्त प्रकाश को देखकर अनायास प्रमुख परमाणु विज्ञानी राबर्ट ओपेन हाइमर के मुख से निम्नांकित श्लोक मुखरित हो उठा :

दिवि सूर्यं सहस्रस्य भवेद्युगप दुत्थिता ।

यदि भाः सदृशी सा स्याम्बास स्तस्य महात्मनः ॥

[“आकाश में हजार सूर्यों के साथ उदय होने से उत्पन्न जो प्रकाश हो, वह भी उस विश्वरूप परमात्मा के प्रकाश के सदृश कदाचित ही हो।”  
श्रीमद्भागवद्गीता, अध्याय 11, श्लोक 12]

उन गिने-चुने वैज्ञानिकों को छोड़कर, जिन्होंने उस तीव्र प्रकाश को देखा था, शेष संसार उससे अनभिज्ञ था। किंतु 6 अगस्त, 1945 ई० को जापान के हिरोशिमा नगर पर हुए परमाणु बम-प्रहार ने शेष मानव जाति को झकझोर दिया। उस दिन तक मानवता के इतिहास में एक युग से दूसरे युग में परिवर्तन शांतिपूर्ण होता आया था किंतु इस बार परिवर्तन हिंसा तथा विनाश से हुआ। इस विनाश और हिंसा से भयभीत होकर अनेक परमाणविक विज्ञानी परमाणु विस्फोटों का विरोध करने लगे।

उपर्युक्त के संदर्भ में एक जापानी लोक-कथा याद आती है। एक गरीब मछुवा समुद्र में प्रतिदिन केवल एक बार जाल फेंकता था और जो कुछ मछलियां उसमें आ जातीं, उनसे अपना भरण-पोषण करता। एक दिन उसके जाल में



मछलियों के स्थान पर सीलबंद घड़ा फंस गया। जब उसने घड़ा खोला तो उसमें से धुआं निकला जिसने दैत्य का आकार ग्रहण कर लिया। उस दैत्य को सम्राट सोलोमन ने घड़े में बंद कर दिया था अतः वह बहुत क्रोधित था। स्वतंत्र हो जाने पर दैत्य ने मछुवे को ही मार डालना चाहा किंतु मछुवा बहुत चालाक था। उसने दैत्य से कहा कि “यह संभव नहीं कि आपका-सा दैत्य इस घड़े में आ जाय। घड़े में पुनः प्रवेश तो करिए।” दैत्य उसकी बातों में आ गया और मछुवे को प्रमाण देने के लिए वह पुनः घड़े में समा गया। दैत्य के घड़े में प्रवेश कर लेने पर मछुवे ने घड़े का ढक्कन बंद कर दिया और दैत्य से बोला, “मैं तुम्हें फिर समुद्र में फेंक दूंगा और अपने मित्रों तथा संबंधियों को आगाह कर दूंगा कि वे कभी भी यहां पर जाल न फेंकें।” ऐसा सुन दैत्य घबड़ाया और उसने वचन दिया कि वह सेवक की भांति कार्य करेगा। इस वचन पर मछुवे ने दैत्य को स्वतंत्र कर अपना सेवक बना दिया।

लोक-कथा के विपरीत परमाणु-विस्फोट का जो धुआं 16 जुलाई, 1945 को प्रथम बार उठा था, बढ़ता ही चला गया और वह पूरे विश्व पर छा-सा गया। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर शक्ति-संतुलन को बनाये रखने के लिए विभिन्न प्रमुख शक्तियों विशेष कर अमरीका, रूस, ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस ने दूर निजन प्रदेशों में वायुमंडल तथा भूमि के अंदर विभिन्न परमाणु आयुधों के परीक्षण किये और सामान्य जनता इनके दुष्प्रभावों से अनभिज्ञ रही।

स्व-सुरक्षा के लिए किये गये इन अनेक प्रयोगों के फलस्वरूप विश्व के प्रमुख राष्ट्रों ने अपने चारों ओर परमाणु आयुधों का अभेद कवच निर्मित कर लिया। साथ ही कुछ ऐसे शांतिपूर्ण उपयोग (विद्युत उत्पादन, रोग निदान इत्यादि) भी विकसित किए जो आधुनिक जीवन को प्रगतिशील एवं स्वस्थ तथा विकासोन्मुखी बना रहे हैं।

लोक-कथा और परमाणु-विस्फोट में एक और अंतर है। मछुवारे ने अनजान में ढक्कन खोल दिया था और दैत्य स्वतंत्र हो गया था। किंतु परमाणु विस्फोट-रूपी दैत्य को स्वतंत्र करने में अनेक देशों ने जान-बूझकर योगदान दिया है। मछुवा एक गरीब मानव था और उक्त राष्ट्र शक्तिशाली, धनवान तथा ज्ञानी हैं तथा वे जानते थे कि वे क्या कर रहे हैं।

परमाणु ऊर्जा प्रारंभ से ही अमीर तथा विकसित राष्ट्रों का खिलौना रहा है। जब इन राष्ट्रों ने समझ लिया कि परमाणु-रूपी दैत्य उनके काबू में है तथा उसका उपयोग विनाश हेतु कर सकते हैं, तब उनका ध्यान उसके लाभप्रद एवं शांतिपूर्ण उपयोगों की ओर गया। यदि यह कहा जाय कि जो कुछ शांतिपूर्ण उपयोग विकसित हुए हैं, वे सुरक्षा प्रयत्नों के उपजात हैं तो गलत न होगा। एक



अन्य कटु सत्य है कि उक्त अनुसंधान के पार्श्व में भी धनार्जन एवं शोषण की प्रवृत्ति है।

गरीब मछुवे के अनुरूप भारत सदृश्य अनेक राष्ट्र हैं, जो उस 'दैत्य' का उपयोग केवल शांतिपूर्ण कार्यों के लिए करना चाहते हैं। आज भारत में तीन परमाणु विद्युत घर हैं तथा दो निर्माणाधीन हैं। पोखरण (राजस्थान) में किया गया परमाणु विस्फोट भी शांतिपूर्ण उपयोगों की ओर ही प्रयास है।

वर्तमान मानव-जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र अब शेष नहीं है जो परमाणु ऊर्जा तथा उसके उपयोगों से प्रभावित न हो। परमाणु ऊर्जा के क्रमिक विकास, उपयोगों एवं दुष्प्रयोगों तथा दुष्प्रभाव का अध्ययन आप इस पुस्तक में करेंगे।

इस पुस्तक में दी गयी सूचनाएं एवं तथ्य भारत सरकार, परमाणु ऊर्जा विभाग से प्रकाशित वार्षिक रिपोर्टों, न्यूक्लीयर इंडिया तथा अन्य रिपोर्टों से एकत्र की गयी हैं जिनके लिए परमाणु ऊर्जा आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष डॉ० राजा रामन्ना, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र अंबई के सूचना अधिकारी डॉ० वी० ए० कामथ तथा न्यूक्लीयर इंडिया के भूतपूर्व संपादक श्री जगन्नाथ शर्मा का अत्यंत आभारी हूं। पुस्तक के अनेक चित्र मुझे भारत सरकार के पत्र सूचना कार्यालय से प्राप्त हुए अतः कार्यालय के अधिकारी, विशेष कर श्री एस० सी० पांड्या एवं कर्मचारी धन्यवाद के पात्र हैं। केंद्रीय हिंदी निदेशालय के नयी दिल्ली के शिक्षा अधिकारी श्री एस० टी० दास भी धन्यवाद के पात्र हैं। श्री दास ने पांडुलिपि को देखने की कृपा की थी।

पुस्तक की टाइप प्रति को मूल प्रति से मिलान करने हेतु मैं चि० डॉ० आलोक वाजपेई, अभय, शरद एवं कु० विनीता को भी धन्यवाद देता हूं।

मैं इस पुस्तक के प्रेरणास्रोत पूज्य पं० शालिग्राम मिश्र का भी आभारी हूं जिन्होंने मुझे समय-समय पर प्रोत्साहित किया और उन्हीं के मार्गदर्शन के फल-स्वरूप पांडुलिपि पुस्तक का रूप ग्रहण कर सकी।

इस पुस्तक के प्रकाशन के लिए श्री सुरेन्द्र मलिक भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने शीघ्र पुस्तक प्रकाशित की।

पाठकों से मेरा विनम्र निवेदन है कि वे अपनी प्रतिक्रिया एवं सुझाव अवश्य लिखें।

—चंद्रकुमार मिश्र

8/129, ग्रायं नगर, कानपुर  
शिवरात्रि, 1988 ई०







## विषय सूची

|                                                       |     |
|-------------------------------------------------------|-----|
| भूमिका                                                | vii |
| 1. पदार्थ एवं परमाणु                                  | 1   |
| 2. रेडियधर्मिता                                       | 4   |
| 3. परमाणु संरचना                                      | 10  |
| 4. कृत्रिम रेडियधर्मिता                               | 13  |
| 5. परमाणु विखंडन                                      | 17  |
| 6. द्वितीय महायुद्ध एवं रेडियधर्मिता                  | 22  |
| 7. प्रथम श्रृंखलित क्रिया                             | 27  |
| 8. परमाणु बम : प्रारंभिक प्रयास                       | 31  |
| 9. परमाणु युग का उदय                                  | 35  |
| 10. परमाणु बम-प्रहार                                  | 38  |
| 11. परमाणु आयुधों में होड़                            | 40  |
| 12. भारत में परमाणु ऊर्जा का आरंभ                     | 44  |
| 13. संयुक्त राष्ट्रसंघ एवं परमाणु ऊर्जा               | 47  |
| 14. परमाणु से शक्ति                                   | 50  |
| 15. भारत में परमाणु शक्ति                             | 61  |
| 16. रेडियो आइसोटोप : स्वस्थ एवं सुंदर जीवन के लिए     | 68  |
| 17. रेडियो समस्थानकों (आइसोटोपों) का भारत में उत्पादन | 77  |
| 18. भारत में परमाणु ऊर्जा एवं खाद्य                   | 80  |
| 19. परमाणु ऊर्जा : कुछ अन्य संभावनाएं                 | 86  |
| 20. भारत और परमाणु विस्फोट                            | 89  |



|                                                             |     |
|-------------------------------------------------------------|-----|
| 21. रेडियधर्मी विकरण : सभ्यता को समाप्त करने<br>का षड्यंत्र | 94  |
| 22. परमाणु युद्ध : नागरिक-सुरक्षा के प्रयत्न                | 102 |
| 23. तीव्र प्रजनक परमाणु भट्टी                               | 110 |
| 24. क्या परमाणु ऊर्जा सुरक्षित है ?                         | 117 |
| पारिभाषिक शब्दावली                                          | 122 |



## पदार्थ और परमाणु

मानव के मुख्य गुण हैं उसकी जिज्ञासा तथा अपनी सुख-सुविधाओं को उत्तरोत्तर बढ़ाने की क्षमता। आदि काल से वह प्रयत्न करता रहा है कि प्राकृतिक प्रक्रियाओं का मर्म जान सके तथा उनका उपयोग जीवन को और अधिक उपयोगी, सुन्दर तथा सार्थक बनाने के लिए कर सके। मानव जाति कभी भी अपने वर्तमान से संतुष्ट नहीं रही और इस जन्म-जात असंतोष के कारण वह उन्नति करती रही है तथा करती रहेगी।

हमारे आपके पूर्वज अपने चारों ओर की वस्तुओं को देखकर चकित रह जाते थे। वे बहुधा विचार करते थे, ये सब वस्तुएं कैसे बनीं या बनती हैं और क्या वे उन्हें बना सकते हैं! सम्भवतः उन्होंने विचारा होगा कि यदि किसी वस्तु को छोटे-छोटे कणों में विभाजित कर दिया जाए तो अन्त में क्या प्राप्त होगा। उदाहरणार्थ, यदि पानी की बूंद को विभाजित करते जाएं तो क्या वह क्रम अनिश्चित काल तक चल सकेगा या यह क्रम कुछ समय पश्चात् समाप्त हो जाएगा और जो कुछ अन्त में प्राप्त होगा वह अटूट होगा। इस सम्बन्ध में कुछ व्यक्तियों ने विचार किया कि प्रत्येक वस्तु कुछ 'मूलमूल कणों की बनी है'।

सब सभ्य देशों में विभिन्न दार्शनिकों तथा वैज्ञानिकों ने अपने-अपने ढंग से प्राकृतिक प्रक्रियाओं तथा वस्तु निर्माण की व्याख्या की। भारत में महर्षि कणाद ने वस्तु निर्माण की व्याख्या की। उन्होंने कहा, "वस्तुएं छोटे-छोटे कणों की बनी होती हैं।" उनके इस सिद्धान्त का विस्तृत विवेचन उनकी पुस्तक 'वैशेषिका' में मिलता है।

ईसा से 500 वर्ष पूर्व यूनानी वैज्ञानिक डिमाक्रिट्स ने भी स्वतंत्र रूप से इस परिकल्पना को प्रतिपादित किया। उनके कुछ प्राप्त लेखों से उनकी विचार-धारा पर प्रकाश पड़ता है। उन्होंने कहा कि यदि पदार्थ को विभाजित किया जाय तो अन्त में जो सूक्ष्म कण शेष रहेगा, अर्थात् जिसका और विभाजन संभव



## 2 / परमाणु और मानव

न हो वह 'परमाणु' है। इस न टूट सकने वाले कण को उन्होंने 'एटम' का नाम दिया। 'एटम' शब्द दो यूनानी शब्दों का मिश्रण है जिसका अर्थ है 'न काटने वाला'। यद्यपि डिमाक्रिट्स का सिद्धांत सही था, किन्तु प्रमाणों के अभाव तथा सिद्ध दार्शनिक अरस्तू के विरोध के कारण उसे मान्यता प्राप्त न हुई। इसी समय के अन्य दार्शनिक एम्पेडोक्लीस ने पदार्थ को पृथ्वी, वायु, जल तथा अग्नि का बना बताया। एम्पेडोक्लीस का यह सिद्धांत लगभग 2000 वर्षों तक मान्य रहा। भारत में भी कणाद महर्षि का कणवाद केवल पुस्तकों में ही सीमित रह गया। केवल कुछ व्यक्ति ऐसे थे जो परमाणु के अस्तित्व में विश्वास रखते थे।

### गैलीलिओ तथा डाल्टन के सिद्धान्त

गत 350 वर्षों में जैसे-जैसे आधुनिक विज्ञान की प्रगति हुई, वैसे वैसे वैज्ञानिक विशेषकर भौतिकविद तथा रसायनज्ञ डिमाक्रिट्स की विचारधारा की ओर झुकने लगे।

सत्रहवीं शताब्दी के आरंभ में दूरदर्शक (टेलिस्कोप) अन्वेषक गैलीलिओ ने कहा कि सम्भवतः स्वाद तथा गंध पदार्थ के छोटे-छोटे कणों में परिवर्तित हो जाने के कारण होती है। यह कण जब नाक या जीभ के सुग्राही स्थानों का स्पर्श करते हैं तो गंध तथा स्वाद का अनुभव होता है।

इसी शताब्दी के अंत में ब्रिटिश वैज्ञानिक रॉबर्ट बॉयल ने कहा कि वायु तथा अन्य गैसों ऐसे व्यवहार करती हैं जैसे कि वे छोटे-छोटे कणों की बनी हों।

रॉबर्ट बॉयल ने प्रत्येक वस्तु को कुछ तत्वों या एक तत्व का बना माना। उन्होंने तत्वों की परिभाषा करते हुए कहा, "मेरे विचार से तत्व प्रायः प्राथमिक, साधारण या पूर्णतया अमिश्रित वस्तु है जो अन्य वस्तुओं से मिलकर नहीं बने हैं।"

उपर्युक्त विचार केवल परिकल्पना स्तर पर ही रह गये तथा उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक वैज्ञानिक परमाणु के अस्तित्व पर एकमत न हो सके। जॉन डॉल्टन सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे जिन्होंने परमाणु की स्पष्ट व्याख्या की।

जॉन डॉल्टन का जन्म एक गरीब जुलाहे के घर सन् 1766 ई० में हुआ था। अपने परिश्रम तथा अध्ययन के फलस्वरूप वे एक महाविद्यालय में अध्यापक हो गये थे। उनकी विशेष रुचि रसायनशास्त्र और गणित में थी।

डॉल्टन के जन्म के पूर्व रसायनज्ञों ने यह स्वीकार कर लिया था कि कुछ पदार्थों से कुछ सामान्य पदार्थ (या मूल पदार्थ) अलग किये जा सकते हैं, किन्तु कुछ पदार्थ ऐसे हैं जिनसे अन्य पदार्थ अलग नहीं किये जा सके। उदाहरणार्थ, जल को हाइड्रोजन और आक्सीजन और नमक को सोडियम और क्लोरीन में

परिवर्तित कर सकते हैं, किन्तु हाइड्रोजन, आक्सीजन, सोडियम इत्यादि से अलग-



अलग अन्य पदार्थ प्राप्त नहीं किये जा सकते हैं। ऐसे पदार्थों को, जिनसे अन्य पदार्थ प्राप्त करना सम्भव न हो रासायनिक तत्व कहा जाता है। रासायनिक तत्व की परिभाषा आप ऊपर पढ़ चुके हैं। उन पदार्थों को, जो दो या अधिक तत्वों के रासायनिक संयोग से बनते हैं, रासायनिक यौगिक कहते हैं।

डॉल्टन के समय में केवल 30 तत्व ज्ञात थे किन्तु अब 100 से अधिक तत्व ज्ञात हैं।

डॉल्टन ने इस प्रश्न पर “क्या परमाणु तत्वों के अस्तित्व को सिद्ध कर सकता है तथा उनके गुणों के अंतर की स्पष्ट व्याख्या कर सकता है” गूढ़ विचार तथा अनेक प्रयोग किये। प्रयोगों तथा अनवरत अध्ययन के फलस्वरूप वे जिन निष्कर्षों पर पहुँचे, उन्हें उन्होंने सन् 1810 ई० में प्रकाशित किया। ये निष्कर्ष ‘डॉल्टन के परमाणु सिद्धांत’ के नाम से प्रसिद्ध हैं।

डॉल्टन के परमाणु सिद्धांतों के अनुसार परमाणु तत्व का वह छोटे से छोटा खंड है जो स्वतंत्र अवस्था में उसी तत्व के गुण प्रदर्शित करे जिसका वह खंड है। इस बात को हम यों समझ सकते हैं कि यदि लोहे का एक परमाणु लिया जाय और उसे किसी विधि से बड़ा करके देखा जाय तो वह सदैव लोहा ही प्रतीत होगा तथा उसमें लोहे के सब गुण होंगे। डॉल्टन ने यह भी कहा कि विभिन्न तत्वों के परमाणु संयुक्त होकर रासायनिक यौगिक बनाते हैं, जैसे हाइड्रोजन के दो परमाणु तथा आक्सीजन का एक परमाणु संयुक्त होकर जल बनाते हैं।

डॉल्टन के अनुसार ये परमाणु रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप परिवर्तित नहीं होते हैं, एक तत्व में एक प्रकार के होते हैं, इनका और विभाजन सम्भव नहीं है अर्थात् परमाणु अखण्डनीय है।

परमाणु कितने लघु आकार का होता है, इसका अनुमान आप यों कर सकते हैं कि यदि 1000 लाख परमाणु एक के बाद एक रखे जायें तो वे 2.5 सेंटीमीटर में आ जाएंगे।

डॉल्टन के उपरोक्त सिद्धांत प्रयोग की कसौटी पर खरे उतरे। किन्तु उनका एक सिद्धांत बाद में असत्य सिद्ध हुआ। कुछ समय तक डॉल्टन का परमाणु अखण्डनीय माना जाता रहा, किन्तु शीघ्र ही उस पर प्रहार होने लगे और वह खण्डनीय सिद्ध हो गया।



## 2

## रेडियधर्मिता (रेडियो एक्टिविटी)

### हेनरी बेकरल का प्रयोग

सन् 1895 ई० में जर्मन वैज्ञानिक विल्हेल्म रंटयेन ने एक्स किरणों की खोजकर वैज्ञानिक जगत में तहलका मचा दिया। इन अदृश्य किरणों ने यदि एक ओर वैज्ञानिकों, चिकित्सकों तथा इंजीनियरों को समस्या समाधान में सहायता की तो दूसरी ओर वैज्ञानिकों को परमाणु की प्रकृति समझने के लिए भी प्रेरित किया।

एक्स किरणें विभिन्न धातुओं की पतली चादरों से आर-पार हो जाती हैं। इन्हें रक्त मांस-मज्जा भी रोक नहीं पाती है, किन्तु हड्डी के आर-पार नहीं निकल पाती हैं। इसके अतिरिक्त यह कुछ पदार्थों को उत्तेजित कर उनसे प्रकाश भी उत्सर्जित करती है।

सन् 1896 ई० में विल्हेल्म रंटयेन ने पेरिस की विज्ञान अकादमी में एक्स किरणों से सम्बन्धित प्रयोगों का प्रदर्शन किया। इस प्रदर्शन का अवलोकन वैज्ञानिक हेनरी बेकरल ने भी किया था। बेकरल एक्स किरणों से अत्यन्त प्रभावित हुए और उन्होंने ऐसे पदार्थ खोजने का निश्चय किया जो एक्स किरणों की भांति के विकिरण उत्सर्जित करते हों। अतः उन्होंने प्रतिदीप्त पदार्थों पर प्रयोग करने का निश्चय किया।

कुछ पदार्थ सूर्य के प्रकाश तथा अन्य विकिरणों को सोख लेते हैं और अंधेरे में विभिन्न प्रकार के प्रकाश को उत्सर्जित कर देते हैं। ऐसे पदार्थों को प्रतिदीप्त पदार्थ कहते हैं।

बेकरल का प्रयोग अत्यन्त सरल था। वे यूरैनियम के टुकड़े को सर्व-प्रथम सूर्य के प्रकाश में रखते और फिर उस टुकड़े को फोटोग्राफिक प्लेट पर रखते और प्रतिदीप्त प्रक्रिया का अध्ययन करते। उपर्युक्त प्रयोग के फल-

स्वरूप उन्होंने देखा कि यूरैनियम का टुकड़ा ऐसे विकिरण उत्सर्जित करता है जो काले कपड़े से लिपटी फोटोग्राफिक प्लेट को प्रभावित कर देता है। इन प्रयोगों



को दोहराते समय भाग्य ने चमत्कार दिखलाया। जिस दिन उन्हें प्रयोग करना था, उस दिन बादल हो गये और उन्होंने प्रयोग न करने का निश्चय किया। अतः उन्होंने मेज की दराज में काले कपड़े से लिपटी अनेक फोटोग्राफिक प्लेटें रख दीं। इन प्लेटों पर उन्होंने एक यूरेनियम टुकड़ा डिब्बे में बंद कर रख दिया। उस दिन के बाद कई दिनों तक सूर्य न निकला था, किन्तु भूलवश भी कोई त्रुटि न होने पाये इस विचार से उन्होंने ऊपर की प्लेट को धोया जिस पर टुकड़ा डिब्बे में रखा था। उस समय वे आश्चर्यचकित रह गये जब उन्हें प्लेट पर डिब्बे का चित्र मिला। इस प्रयोग से यह निश्चित हो गया कि यूरेनियम के टुकड़े से ऐसे विकिरण निकलते हैं जो फोटोग्राफिक प्लेट को प्रभावित कर देते हैं।

उन्होंने इस उपलब्धि पर और आगे खोज की तथा ज्ञात किया कि इन सब पदार्थों से जिनमें यूरेनियम होता है, इस प्रकार के विकिरण निकलते हैं जो फोटोग्राफिक प्लेट को प्रभावित करते हैं और मोटे काले कपड़े से भी आर-पार हो जाते हैं।

उपर्युक्त विकिरणों का नाम, उन्होंने 'बेकरेल किरणें' रखा तथा पदार्थ के इस गुण को रेडियधर्मिता (रेडियो एक्टिविटी) कहा गया।

लगभग 30 वर्ष पश्चात् एक अन्य वैज्ञानिक ने श्री बेकरेल के कार्य को बढ़ाया। पोलैण्डवासी मेरी क्यूरी नामक महिला वैज्ञानिक ने ऐसे अन्य अनेक तत्वों को खोज निकाला जो यूरेनियम की भाँति व्यवहार करते थे।

साधारण परिवार में जन्मी इस नारी ने वच्चों के अभिभावक के रूप में कार्य कर कष्ट झेलकर, अपमान सहकर, धन एकत्र किया तथा पोलैण्ड छोड़ फ्रांस में अध्ययन के लिए आई। फ्रांस में उनकी मित्रता भौतिकशास्त्री 'पियरे क्यूरी' से हुई, जिनसे उन्होंने सन् 1897 ई० में विवाह कर लिया।

पियरे क्यूरी की सलाह पर मैडम क्यूरी ने बेकरेल किरणों पर और आगे कार्य करने का निश्चय किया। तब तक प्राप्य अनेक तत्वों तथा उनके यौगिकों पर अनुसंधान कर उन्होंने थोरियम (Thorium) की खोज की। यह तत्व यूरेनियम की भाँति रेडियधर्मो किरणें उत्सर्जित करता है। इस खोज से यह सिद्ध हो गया कि रेडियधर्मिता एक सर्व व्यापी गुण है जो अनेक तत्वों तथा उनके यौगिकों में विद्यमान है।

### पोलोनियम की खोज

रेडियधर्मो पदार्थों पर अनुसंधान करते समय उन्होंने यूरेनियम के अग्रस्क 'पिच ब्लैण्ड' पर भी प्रयोग किये। इस कार्य में उन्हें यह ज्ञात हुआ कि उपर्युक्त पदार्थ से निकले विकिरणों की तीव्रता यूरेनियम और थोरियम से काफी अधिक है। अतः यह निश्चय हो गया कि इसमें कोई अन्य तत्व है जो यूरेनियम और



अपनी सफलताओं तथा प्रयासों से बिना प्रभावित हुए मैडम क्यूरी अपना कार्य करती रहीं। उन्होंने स्वास्थ्य की भी चिन्ता न की। अनेक व्यक्तियों



शरीर में, रेडियम से उत्सर्जित विकिरण सुरक्षित सीमा से अत्यन्त अधिक पहुंच चुका था। इन विकिरणों ने उन्हें धीरे-धीरे मृत्यु के द्वार पर पहुंचा दिया और 6 जुलाई, 1934 ई० को उनकी मृत्यु हो गई।

### डॉल्टन के परमाणविक सिद्धांतों में परिवर्तन

यद्यपि डॉल्टन के परमाणविक सिद्धांतों में अनेक वैज्ञानिकों जैसे बरजीलियस, गेलूसक तथा एवोग्रेडो ने समय-समय पर सुधार कर समयानुकूल बनाया किन्तु कैथोड किरणों की खोज के कारण परमाणविक सिद्धांतों के लिए मौलिक समस्या उत्पन्न हो गई। सर विलियम क्रुक्स ने प्रयोगों के आधार पर घोषणा की थी कि कैथोड किरणें ऋण आवेश वाले लघु कणों की बनी हैं क्योंकि चुम्बक इन किरणों को अपने मार्ग से विक्षेपित कर देता है।

### कैथोड किरणें

लगभग एक मीटर लम्बी तथा 3 से० मी० व्यास की नली के दोनों सिरों पर इलेक्ट्रोड लगे होते हैं। इस नली से वायु को निकाल कर लगभग निर्वात उत्पन्न करते हैं तथा इलेक्ट्रोडों के मध्य 30,000 वोल्ट से अधिक का विभवांतर उत्पन्न करते हैं। जब नली के अन्दर की वायु का दाब लगभग 0.001 से० मी० पारे के स्तम्भ के बराबर हो जाता है तो पूरी नली काले रंग के विद्युत विसर्जन से भर जाती है और ऋण इलेक्ट्रोड अर्थात् कैथोड के सामने का कांच प्रकाशित हो जाता है। इस समय कैथोड से कैथोड किरणें उत्सर्जित होती हैं जो धन इलेक्ट्रोड अर्थात् एनोड की ओर जाती हैं।

जैसा कि आप ऊपर पढ़ चुके हैं, सर क्रुक्स ने कैथोड किरणों को ऋण आवेशित कणों का बना माना था, किन्तु अनेक वैज्ञानिक उनके इस कथन से सहमत न थे।

प्रमुख आंग्ल वैज्ञानिक जे० जे० थामसन ने भी इस समस्या पर प्रयोग किये तथा वे सफलतापूर्वक प्रदर्शित कर सके कि कैथोड किरणें ऋण आवेशित कणों की बनी हैं। उनका कथन था : (1) डॉल्टन का सैद्धांतिक परमाणु अखण्डनीय नहीं है क्योंकि परावर्णनी किरणें (Ultraviolet rays) ऊष्मा, विद्युत बल तथा वेगवान परमाणुओं की सहायता से, अन्य परमाणुओं से ऋण आवेशित कणों को प्राप्त किया जा सकता है, (2) ये विद्युत कण समान द्रव्यमान के हैं तथा इन पर समान आवेश होता है, और (3) इस कण का द्रव्यमान हाइड्रोजन परमाणु के हजारवें भाग से भी कम है।

थामसन कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय इंग्लैण्ड में स्थित कैवेंडिश प्रयोगशाला के निदेशक थे। इस प्रयोगशाला में उनके निर्देशन में कार्य करने वालों में रदरफोर्ड



## 8 / परमाणु और मानव

विश्वविख्यात हुए।

न्यूजीलैण्ड में जन्मे रदरफोर्ड (1871-1937) ने थामसन को उनके कैथोड किरणों सम्बन्धी प्रयोगों में सहायता की थी। इसी प्रयोगशाला में रदरफोर्ड ने यह ज्ञात किया कि यूरेनियम से ऐसे विकिरण निकलते हैं जो गैस के अणुओं से टकराकर उन्हें आयनित कर देते हैं। रदरफोर्ड 27 वर्ष की आयु में कनाडा की मकगिल विश्वविद्यालय मानट्रियल में प्रोफेसर हो गये थे। सौभाग्य से विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला मूल्यवान उपकरणों से सुसज्जित थी।

अनेक वर्षों के सतत् प्रयत्न के पश्चात् वे दृढ़तापूर्वक कह सके कि यूरेनियम से विकिरित विकिरण अनेक प्रकार के विकिरणों से बना है। इन विकिरणों में से एक का नाम 'अल्फा किरण' रखा गया। ये किरणें धन आवेशित हीलियम नाभिक की बनी होती हैं। हीलियम नाभिक का द्रव्यमान हाइड्रोजन परमाणु के द्रव्यमान से चार गुना है। इस पर दो धन आवेश भी होते हैं।

यूरेनियम से प्राप्त दूसरी किरण का नाम उन्होंने 'बीटा किरण' रखा। ये किरणें इलेक्ट्रॉनों की बनी होती हैं तथा तेजवान होती हैं। कुछ समय उपरान्त एक फ्रांसीसी भौतिकविद ने तीसरी प्रकार की किरणें भी खोज निकालीं जिन्हें 'गामा किरणें' कहा गया। इनकी प्रकृति प्रकाश या एक्स किरणों की भांति है, किन्तु उनकी अपेक्षा अधिक भेदनशील होती हैं।

इन किरणों की खोज ने भौतिकविज्ञान को नवीन दिशा प्रदान की। अभी तक डॉल्टन द्वारा प्रतिपादित परमाणु अखण्डनीय माना जाता था, किन्तु इन किरणों की खोज ने परमाणु को खण्डनीय सिद्ध कर दिया तथा यह कल्पना की जाने लगी कि परमाणु में अत्यधिक ऊर्जा केंद्रित है, क्योंकि ये किरणें परमाणु से ही निकलती हैं।

रदरफोर्ड ने अपने प्रयोगों के आधार पर उपर्युक्त किरणों तथा प्रक्रिया की व्याख्या की। उन्होंने कहा कि रेडियधर्मी परमाणुओं का स्वतः विखण्डन होता है तथा अल्फा, बीटा, गामा किरणें उत्सर्जित होती हैं। कुछ योगिकों से केवल अल्फा या बीटा या गामा किरणें निकलती हैं अथवा कोई दो किरणें भी निकल सकती हैं। इन किरणों के उत्सर्जित होने के कारण वह परमाणु जिससे ये किरणें निकलती हैं, दूसरे तत्व से परमाणु में परिवर्तित हो जाता है। वास्तव में यह परिवर्तन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यदि आपने रसायन विज्ञान का इतिहास पढ़ा होगा तो आप जानते होंगे कि मानव सदैव इस बात के लिए प्रयत्न करता रहा है कि वह एक तत्व को दूसरे तत्व में रासायनिक विधि से परिवर्तित कर सके। दूसरे शब्दों में, वह सदैव प्रयोगशालाओं में 'पारस पत्थर' को



धातु में परिवर्तित कर सके किन्तु सफलता प्राप्त न हुई और अंत में उसने मान लिया कि एक तत्व का दूसरे तत्व में परिवर्तन असम्भव है।

परन्तु अब रदरफोर्ड के अनुसार, "एक तत्व दूसरे तत्व में परिवर्तित हो सकता है।" इस तथ्य को उन्होंने प्रयोगों की सहायता से भी सिद्ध कर दिया। उन्होंने कहा, यदि हम रेडियम के परमाणु विखण्डन पर विचार करें तो हमें ज्ञात होगा कि परमाणु विखण्डन में एक अल्फा कण तथा गामा किरणें उत्सर्जित होती हैं और रेडियम परमाणु रेडान में परिवर्तित हो जाता है। रेडियम तथा रेडान दोनों विभिन्न रेडियधर्मी तत्व हैं। रेडान के परमाणु भी विखण्डित होकर अल्फा कण विकिरित करते हैं तथा नवीन रेडियधर्मी परमाणु बनाते हैं।

रेडियधर्मी परमाणुओं के इस विखण्डन को 'क्षय' कहते हैं। हम कह सकते हैं कि रेडियम क्षय होकर रेडान में परिवर्तित हो गया है। रदरफोर्ड ने अपने अन्य प्रयोगों में देखा कि जैसे-जैसे रेडियधर्मी पदार्थ का क्षय होता जाता है, उसकी सक्रियता कम होती जाती है। जितने समय में रेडियधर्मी तत्व की सक्रियता प्रारम्भिक सक्रियता की आधी रह जाती है, उस समय को 'अर्द्ध आयु' कहा जाता है। प्रत्येक रेडियधर्मी पदार्थ के लिए अर्द्ध आयु भिन्न-भिन्न होती है। जिन पदार्थों की सक्रियता धीरे-धीरे कम होती है उनकी 'अर्द्ध आयु' अधिक होती है। कुछ ऐसे पदार्थ हैं जिनकी सक्रियता रोकड़ के सौवें भाग तक भी नहीं रहती। इन पदार्थों की अर्द्ध आयु बहुत कम होती है। यूरेनियम की अर्द्ध आयु 45,000 लाख वर्ष है और रेडियम की अर्द्ध आयु 1,560 वर्ष है।

उपर्युक्त खोजों ने एक तथ्य निश्चित कर दिया कि परमाणु में ऊर्जा है। किन्तु क्या इसको परमाणु से प्राप्त किया जा सकता है? यह एक बड़ा प्रश्न है, इसका उत्तर अगले अध्यायों में मिलेगा।



## परमाणु संरचना

रेडियधर्मिता के अध्ययन ने परमाणु के सम्बन्ध में यह निश्चित कर दिया कि परमाणु ही पदार्थ का मौलिक कण नहीं है। जे० जे० थामसन के प्रयोगों से यह निश्चित हो गया कि परमाणु में इलेक्ट्रॉन है। वैज्ञानिकों ने यह विचार किया चूंकि स्वतन्त्र परमाणु उदासीन होता है अतः इलेक्ट्रॉन के आवेश को उदासीन करने वाला कण भी होना चाहिए। इस कण पर धनावेश (पॉजिटिव चार्ज) होना चाहिए क्योंकि इलेक्ट्रॉन पर ऋण आवेश (निगेटिव चार्ज) होता है। प्रयोगों से उपर्युक्त विचार की सत्यता सिद्ध हुई। इन कणों को प्रोटॉन के नाम से जाना गया। एक प्रोटॉन पर इलेक्ट्रॉन के समान किन्तु विपरीत आवेश होता है। एक परमाणु के इलेक्ट्रॉन तथा प्रोटॉनों की संख्या बराबर होती है।

प्रोटॉन को प्रायोगिक विधि से कैसे प्राप्त किया गया ? रदरफोर्ड ने कल्पना की कि अल्फा कण परमाणु खण्डन कर सकते हैं। अतः उन्होंने रेडियम से निकले अल्फा कणों का उपयोग नाइट्रोजन पर किया। इन अल्फा कणों में संहति तथा वेग होता है। संहति तथा वेग के कारण इन कणों में गतिज ऊर्जा होती है। अतः जब इन कणों ने नाइट्रोजन परमाणुओं पर प्रहार किया तो परमाणु खण्ड-खण्ड हो गया। ये खण्ड तीन प्रकार के थे तथा उन पर इलेक्ट्रॉन के समान किन्तु विपरीत आवेश था। इस कण की संहति हाइड्रोजन परमाणु के समान थी। इन कणों को प्रोटॉन कहा गया।

### न्यूट्रॉन की खोज

सन् 1932 ई० में ब्रिटिश वैज्ञानिक जेम्स चाडविक ने बेरीलियम पर अल्फा कणों का प्रहार किया। इस प्रहार के फलस्वरूप एक नवीन कण का जन्म हुआ जो आवेश रहित अर्थात् उदासीन था। इस कण की संहति प्रोटॉन के बराबर थी। इस कण को न्यूट्रॉन कहा गया।



में ही इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन तथा न्यूट्रॉन हैं। अब प्रश्न यह है कि परमाणु में ये किस भांति रहते हैं। रदरफोर्ड ने प्रयोगों से ज्ञात किया कि परमाणु के सब प्रोटॉन एक स्थान पर होते हैं, जिसे परमाणु नाभिक (न्यूक्लियस) कहते हैं। इस परमाणु नाभिक में ही न्यूट्रॉन रहते हैं। चूंकि प्रोटॉनों पर धनावेश होते हैं अतः नाभिक पर भी धनावेश होता है। परमाणु नाभिक अत्यन्त कम स्थान घेरता है (परमाणु का व्यास, परमाणु नाभिक के व्यास का 20,000 गुना होता है)। अतः परमाणु में काफी स्थान खाली रहता है। प्रोटॉन, न्यूट्रॉन तथा इलेक्ट्रॉन की संख्या प्रत्येक तत्व के लिए भिन्न-भिन्न होती है।

### परमाणु के प्रतिरूप

रदरफोर्ड ने परमाणु की आंतरिक रचना की कल्पना की। उन्होंने कहा कि परमाणु नाभिक के चारों ओर इलेक्ट्रॉन भिन्न-भिन्न कक्षाओं में चक्कर लगाते हैं। ये कक्षा अंडाकार होते हैं। रदरफोर्ड का परमाणु प्रतिरूप सौर मंडल के समान है जिसमें सूर्य का स्थान परमाणु ने और ग्रहों का स्थान इलेक्ट्रॉनों ने लिया है।

परमाणु में अनेक कक्षाएँ होती हैं जिन्हें 'इलेक्ट्रॉन कक्षा' कहते हैं। इन कक्षाओं में अधिक से अधिक  $2n^2$  इलेक्ट्रॉन रह सकते हैं। यहां पर 'n' परमाणु कक्षा की संख्या प्रदर्शित करती है। इस नियम के अनुसार प्रथम कक्षा में  $2 \times (1)^2 = 2$  इलेक्ट्रॉन, दूसरी कक्षा में  $2 \times (2)^2 = 8$  इलेक्ट्रॉन, तीसरी कक्षा में  $2 \times (3)^2 = 18$  इलेक्ट्रॉन और चौथी कक्षा में  $2 \times (4)^2 = 32$  इलेक्ट्रॉन हो सकते हैं। अंतिम कक्षा पूरी नहीं हो पाती है और उसमें केवल 8 इलेक्ट्रॉन हो सकते हैं।

यह तो निश्चित हो गया कि इलेक्ट्रॉन परमाणु के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। किन्तु इलेक्ट्रॉनों के चक्कर लगाने से रचना पूरी नहीं होती है। यांत्रिकी के गति सिद्धांतों के अनुसार वृत्त में घूमते हुए इलेक्ट्रॉन के वेग में वृद्धि होनी चाहिए। इस वेग वृद्धि के फलस्वरूप इलेक्ट्रॉन को ऊर्जा उत्सर्जित करना चाहिए। यदि इलेक्ट्रॉन लगातार ऊर्जा का उत्सर्जन करेगा तो उसकी ऊर्जा शीघ्र व्यय हो जायेगी तथा वह नाभिक में गिर जायेगी और परमाणु नष्ट हो जायेगा। किन्तु ऐसा नहीं होता।

### नील्स बोर की परिकल्पना

सन् 1953 ई० में डेनमार्क के वैज्ञानिक नील्स बोर ने इस कठिनाई का निराकरण किया। इसके लिए उन्होंने प्लैंक के क्वाण्टम सिद्धांत का उपयोग किया। इस सिद्धान्त के अनुसार कम ऊर्जा का आदान-प्रदान निश्चित मात्रा में ही हो



## 12 / परमाणु और मानव

सकता है अर्थात् ऊर्जा के निश्चित पैकट होते हैं जिनका उत्सर्जन हो सकता है। इन ऊर्जा पैकटों को क्वाण्टा कहते हैं।

बोर के अनुसार परमाणु नाभिक के चारों ओर कुछ कक्षाएं होती हैं जिन्हें स्थिर कक्ष कहते हैं। इन कक्षों में घूमने वाले इलेक्ट्रॉन सर्वमान्य सिद्धांतों के अनुसार ऊर्जा का विकिरण नहीं करते हैं तथा इनकी अपनी विशेष ऊर्जा होती है। ये इलेक्ट्रॉन जब एक स्थिर कक्ष से दूसरे स्थिर कक्ष में जाते हैं तो वे एक निश्चित मात्रा अर्थात् एक या अनेक क्वाण्टा ऊर्जा विकिरण करते हैं।

बोर का परमाणु प्रतिरूप परमाणु के सब गुणों को प्रदर्शित करता था तथा उन्होंने क्लिष्ट गणित का उपयोग कर जो फल प्राप्त किये थे वे प्रायोगिक फलों के लगभग समान थे।

सबसे साधारण परमाणु हाइड्रोजन का होता है। इसका नाभिक एक प्रोटॉन का बना होता है। हाइड्रोजन की परमाणु संख्या (परमाणु में प्रोटॉनों की संख्या) एक तथा परमाणु भार (वह संख्या जो बतलाती है कि किसी तत्व का एक परमाणु हाइड्रोजन के परमाणु से कितना गुना भारी है) भी एक है।

हीलियम के परमाणु नाभिक में दो प्रोटॉन तथा दो न्यूट्रॉन होते हैं। नाभिक के चारों ओर दो इलेक्ट्रॉन चक्कर लगाते हैं। इसकी परमाणु संख्या 2 तथा परमाणु भार 4 होता है।

यूरेनियम का परमाणु एक क्लिष्ट परमाणु है। यूरेनियम के नाभिक में 92 प्रोटॉन, 146, 142 या 143 न्यूट्रॉन होते हैं। नाभिक के चारों ओर 92 इलेक्ट्रॉन विभिन्न कक्षाओं में बंटकर चक्कर लगाते हैं। यूरेनियम के तीन आइसोटोप होते हैं। (आइसोटोपों का परमाणु भार भिन्न-भिन्न होता है किन्तु रासायनिक गुण एक समान होते हैं।) इन आइसोटोपों का परमाणु भार 234, 235 या 238 होता है। इनमें 238 परमाणु भार वाला आइसोटोप अधिक आसानी से प्राप्त है।



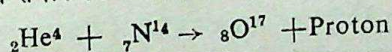
## 4

## कृत्रिम रेडियधर्मिता

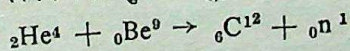
रेडियम से निकलने वाले अल्फा कणों ने परमाणु विज्ञान को नवीन दिशा प्रदान की। इन कणों के प्रहार के फलस्वरूप नवीन विचार तथा पदार्थ उत्पन्न हुए। सबसे आश्चर्यजनक खोज कृत्रिम रेडियधर्मिता के रूप में हुई। तब तक केवल प्राकृतिक रेडियधर्मिता ज्ञात थी किन्तु अब मानव निमित्त रेडियधर्मी पदार्थ के उत्पादन की संभावना बढ़ गई थी।

### कृत्रिम रेडियधर्मिता की खोज

जब रदरफोर्ड ने नाइट्रोजन पर अल्फा कणों का प्रहार किया तब नाइट्रोजन ने अल्फा कण को ग्रहण कर एक प्रोटॉन को निष्कासित किया था। इस प्रकार कण को ग्रहण करने के कारण जो नवीन तत्व बना था, वह आक्सीजन था। इस क्रिया को निम्न समीकरण से दिखलाया जा सकता है :



इसी प्रकार जब चाडविक ने बेरीलियम परमाणु पर अल्फा कणों का प्रहार किया था, तब कार्बन परमाणु तथा न्यूट्रॉन की उत्पत्ति हुई थी।



(परमाणु के दाएं ऊपर की संख्या परमाणु भार तथा बाएं नीचे की संख्या परमाणु संख्या प्रदर्शित करती है।)

इन परिवर्तनों को आंखों से देखा जा सकता था वहीं परिवर्तित परमाणुओं को अन्य सामान्य परमाणुओं से अलग भी किया जा सकता था। किन्तु इस प्रकार के प्रयोगों से परमाणुओं की आकृति और प्रकृति समझने में सहायता मिलती थी। अतः विभिन्न तत्वों के परमाणुओं पर अल्फा कणों का प्रहार किया जाता रहा।

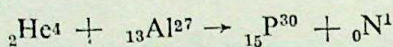
कुछ वर्ष पश्चात् सन् 1934 ई० में क्यूरी परिवार को फिर वैज्ञानिक सफलता प्राप्त हुई। इस बार मैडम क्यूरी की पुत्री इरेने क्यूरी और उनके पति



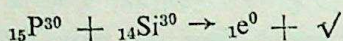
## 14 / परमाणु और मानव

फ्रेडेरिक जोलियट ने कृत्रिम रेडियधर्मिता की खोज कर सम्मान प्राप्त किया था।

क्यूरी-जोलियट भी अन्य वैज्ञानिकों की भांति विभिन्न पदार्थों पर अल्फा कणों का प्रहार कर रहे थे। जब उन्होंने एल्यूमीनियम पर अल्फा कणों का प्रहार किया तो उन्होंने देखा कि अल्फा कण स्रोत को हटा लेने के उपरान्त भी एल्यूमीनियम से ऊर्जावान कण निकलते रहते थे। उन्होंने प्रयोग को फिर दोहराया किन्तु पूर्व की भांति फल प्राप्त हुआ। वास्तव में एल्यूमीनियम के नाभिक ने अल्फा कण को बंदी कर लिया था और स्वयं रेडियधर्मी फासफोरस में परिवर्तित हो गया था। इसके अतिरिक्त न्यूट्रॉन भी निकलते थे। उपर्युक्त क्रिया को निम्न समीकरण से प्रदर्शित किया जा सकता है :



रेडियधर्मी फासफोरस स्थायी तत्व नहीं है। यह तत्व अपने भे से पोसीट्रॉन निकालता है और स्वयं सिलिकॉन में बदल जाता है।



पोसीट्रॉन पर आवेश इलेक्ट्रॉन के बराबर किन्तु विपरीत होता है। फासफोरस के लिए P तथा सिलिकॉन के लिए Si का उपयोग होता है।

जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं, एक तत्व के परमाणुओं को दूसरे तत्व के परमाणुओं में अल्फा कणों के प्रहार से बदला जा सकता है। ये अल्फा कण प्राकृतिक रेडियधर्मी तत्वों से प्राप्त किये जाते थे और उनके वेग को कम या अधिक करना सम्भव न था। जब तक अल्फा कणों में अधिक ऊर्जा नहीं होती है, वे परमाणु नाभिक तक नहीं पहुँच पाते हैं। क्योंकि नाभिक अल्फा कणों पर विकर्षण का बल लगाता है और इस बल का सफल विरोध तभी सम्भव है जबकि अल्फा कण अधिक ऊर्जावान हो अर्थात् उनका वेग अधिक हो।

इस कठिनाई के कारण किसी पदार्थ के कुछ परमाणु ही अल्फा कण प्रहार के कारण परिवर्तित हो पाते थे। इस कठिनाई का एक सम्भावित हल न्यूट्रॉनों से प्राप्त हुआ। चूँकि न्यूट्रॉनों पर कोई भी आवेश नहीं होता है अतः वे नाभिक तक बिना किसी रुकावट के पहुँच जाते हैं।

किन्तु न्यूट्रॉनों को प्राप्त करना सरल कार्य न था। न्यूट्रॉन अल्फा कणों की भांति, रेडियधर्मी पदार्थ से विकिरित नहीं होते हैं वरन् उन्हें अल्फा कणों की सहायता से बेरीलियम धातु से उत्पन्न किया जाता है। अतः कठिनाई ज्यों की त्यों बनी रही। अल्फा कणों के उपयोग में कठिनाई वेग की थी और न्यूट्रॉन के उपयोग में उनको प्राप्त कर पाना ही कठिन था। यदि किसी प्रकार न्यूट्रॉनों को इच्छानुसार प्राप्त किया जा सके तो कृत्रिम रेडियधर्मी पदार्थों का उत्पादन सरल



इन सब कठिनाइयों के होने पर भी राम विश्वविद्यालय के भौतिकविद एनरिको फरमी ने सब प्राप्त तत्वों पर न्यूट्रॉन प्रहार करने का निश्चय किया। इस कार्य के लिए उन्होंने न्यूट्रॉन-गन बनाई। यह 'गन' वास्तव में कांच की नली थी, जिसमें रेडियम से प्राप्त रेडान गैस तथा बेरीलियम चूरा भरा था। इस 'गन' से प्राप्त न्यूट्रॉनों का उपयोग उन्होंने हाइड्रोजन, बेरीलियम, बोरान, कार्बन तथा नाइट्रोजन पर अलग-अलग किया। रेडियधर्मिता की उपस्थिति ज्ञात करने के लिए 'गाइगर काउंटर' का उपयोग करते हैं। इस यंत्र का आविष्कार रदरफोर्ड के एक साथी हैंस गाइगर ने किया था। उन्हीं के नाम पर इसका नाम 'गाइगर काउंटर' पड़ा। रेडियधर्मि पदार्थ से विकिरित हुआ आवेशित कण 'काउंटर' में पहुँचकर विद्युत विसर्जित करता है। इस विसर्जन के फलस्वरूप काउंटर 'क्लिक' करता है। इन 'क्लिकों' की गणना कर ली जाती है।

हाइड्रोजन, बेरीलियम, बोरान, कार्बन तथा नाइट्रोजन पर न्यूट्रॉन प्रहार से कृत्रिम रेडियधर्मिता उत्पन्न न हुई। किन्तु फरमी क्लोरीन में रेडियधर्मिता उत्पन्न कर सके। उन्हें कुछ तत्वों के परमाणुओं को अन्य तत्वों के परमाणुओं में परिवर्तित करने में भी सफलता प्राप्त हुई।

जब फरमी ने न्यूट्रॉनों का प्रहार यूरेनियम पर किया तो प्राप्त फल अनिश्चित थे। फरमी विश्वासपूर्वक न कह सके कि उन्होंने यूरेनियम को किन तत्वों में परिवर्तित किया है। किन्तु यह निश्चित था कि तत्व एक से अधिक हैं तथा उन प्राप्त तत्वों में एक तत्व ऐसा है जिसके गुण आवर्त-सारणी में यूरेनियम के आसपास के तत्वों के गुणों से मेल न खाते थे। उपर्युक्त परिवर्तन के पूर्व अभी तक जो भी तत्व परिवर्तित हुए थे, वे पास के तत्वों में ही परिवर्तित हुए थे। किन्तु इस बार विचित्र परिस्थिति थी। फरमी को लगा कि उन्होंने तत्व-93 की खोज कर ली है। तत्व-93 यूरेनियम के आगे का सम्भावित तत्व था (यूरेनियम तत्व-92 है क्योंकि उसमें 92 प्रोटॉन होते हैं)। यह तत्व प्राकृतिक रूप से प्राप्य नहीं है। प्रयोग में उत्पादित तत्व-93 की मात्रा इतनी कम थी कि वे उसकी उपस्थिति की सत्यता की परख न कर सके।

तत्व-93 की इस अनिश्चितता ने फरमी को बाध्य कर दिया कि वे किसी भांति तत्व-93 की अधिक मात्रा उत्पन्न करें। अतः उन्होंने वह विधियाँ ज्ञात करने का प्रयास किया जिनकी सहायता से वे अपने न्यूट्रॉनों को प्रभावकारी बना सकें।

अनेक प्रयोगों के फलस्वरूप उन्होंने देखा कि यदि न्यूट्रॉन स्रोत और उस धातु जिसमें कृत्रिम रेडियधर्मिता उत्पन्न करना हो, के मध्य सीसे की पतली पट्टी रखी जाती है तो रेडियधर्मिता बढ़ जाती है। इसी प्रयोग को जब सीसे के स्थान पर पैराफिन का उपयोग कर दोहराया गया तो देखा गया कि रेडिय-



## 16 / परमाणु और मानव

धर्मिता सीसे की अपेक्षा 100 गुनी थी ।

फरमी ने इस प्रक्रिया की व्याख्या करते हुए बतलाया कि न्यूट्रॉन का द्रव्यमान और हाइड्रोजन परमाणु का द्रव्यमान लगभग बराबर होता है तथा पैराफिन में हाइड्रोजन परमाणुओं की संख्या अधिक होती है । अतः संवेग के नियमों के अनुसार न्यूट्रॉनों का संवेग, न्यूट्रॉन तथा हाइड्रोजन परमाणु में लगभग बराबर-बराबर बंट जायेगा और न्यूट्रॉनों का वेग घट जायेगा । इन मंद न्यूट्रॉनों को परमाणु नाभिक आसानी से बंदी बना लेते हैं ।

फरमी ने अपने कथन की सत्यता परखने के लिए न्यूट्रॉन-गन तथा चांदी के टुकड़े को एक पानी के झरने में डुबा दिया । चांदी की रेडियधर्मिता उनकी कल्पना से अधिक बढ़ गई थी ।

यह खोज अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । इन कम वेग के न्यूट्रॉनों को 'मंद न्यूट्रॉन' कहते हैं । इनका परमाणु ऊर्जा उत्पादन में विशेष योगदान है ।



## 5

## परमाणु विखण्डन

आप पिछले अध्याय में तत्व-93 की खोज के बारे में जान चुके हैं। इस तत्व-93 की तथाकथित खोज ने विज्ञान जगत में हलचल उत्पन्न कर दी थी। अनेक प्रमुख भौतिकविदों ने इस नवीन तत्व को स्वीकार न किया। उनमें से कुछ वैज्ञानिकों का मत था कि यह तत्व-91 अर्थात् प्रोटोएक्टीनियम का आइसोटोप है।

सन् 1935 ई० में ऑटोहान तथा लाइज माइटनर ने फरमी के प्रयोग को दुबारा करने का निश्चय किया। इन्हीं व्यक्तियों ने लगभग 20 वर्ष पूर्व प्रोटो-एक्टीनियम को खोजा था। अतः उनका विश्वास था कि वे इस तत्व को सरलतापूर्वक पहचान लेंगे। उपर्युक्त व्यक्ति भी, प्रयोग के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि फरमी का कथन ठीक है तथा तत्व-93 वास्तव में प्राप्त हुआ था।

तथापि इस निष्कर्ष को इरीने क्यूरी तथा उनके सहयोगी पॉल साविन ने स्वीकार न किया और उन्होंने भी इस प्रयोग को अनेक बार दोहराया। लगभग 2 वर्षों के अथक परिश्रम के उपरान्त सन् 1938 ई० में उन्होंने घोषणा की कि उपर्युक्त तत्व के गुण आवर्त-सारिणी के मध्य में स्थित तत्व लेनथानम के लगभग समान हैं।

यह वक्तव्य ऑटोहान तथा लाइज माइटनर की खोज के विपरीत था। अतः हान, माइटनर, स्ट्रासमैन ने अपने प्रायोगिक फलों की दुबारा परख प्रारम्भ की। किन्तु शीघ्र ही लाइज माइटनर को जर्मनी छोड़ना पड़ गया। (यह घटना सन् 1938 ई० की है। उस समय तक तानशाह हिटलर का शासन जर्मनी में पूर्णरूप से छा गया था। हिटलर को यहूदियों से घृणा थी और वह उनको नष्ट कर देना चाहता था अतः यहूदी विशेषकर वैज्ञानिक जर्मनी छोड़कर भाग रहे थे।)

अब हान और स्ट्रासमैन ने अपने प्रयोग को आगे बढ़ाया। इस प्रयोग में उन्हें एक ऐसा पदार्थ मिला जिसके गुण रेडियम से मिलते-जुलते थे। इस रेडियम



## 18 / परमाणु और मानव

उपयोग किया है जिस विधि से मैडम क्यूरी ने 40 वर्ष पूर्व रेडियम प्राप्त किया था।

यूरेनियम पर न्यूट्रॉन प्रहार के उपरान्त उन्होंने उसमें बेरियम मिलाया। बेरियम और रेडियम के रासायनिक गुण लगभग एक समान हैं। बेरियम तथा रेडियम एक दूसरे में मिल जाते हैं तथा अवक्षेप के रूप में बैठ जाते हैं। इस अवक्षेप से बेरियम तथा रेडियम को अलग किया जा सकता है किन्तु हान तथा स्ट्रासमैन उपरोक्त अवक्षेप से रेडियम को अलग न कर सके।

उनकी इस असफलता ने उन्हें बाध्य कर दिया कि वे तथाकथित रेडियम को रेडियम न कहें। अतः उन्होंने उसका नाम 'क्यूरोसियम' रखा। अनेक प्रयोगों के पश्चात् उन्हें विश्वास हो गया कि इरीने क्यूरी का कथन सही है और वे क्यूरोसियम को बेरियम से इस कारण अलग न कर पा रहे थे क्योंकि क्यूरोसियम वास्तव में बेरियम है।

उपर्युक्त खोज विचित्र थी। उनको स्वयं अपनी खोज पर विश्वास न था। इसका कारण यह था कि वे रसायनज्ञ थे और उनका भौतिकविज्ञान का ज्ञान सीमित था। इस खोज के पूर्व जब उन्होंने रेडियम (1) की खोज के बारे में भौतिकविदों को बतलाया तो उन्होंने यह कहकर कि एक न्यूट्रॉन 4 आवेशित कणों को निकाल नहीं सकता है, उन्हें निराश कर दिया था।

तथापि हान और स्ट्रासमैन ने अपनी इस खोज को जर्मन विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित करवाया और लाइज माइटर को भी इसकी सूचना दी।

लाइज माइटर सर्वप्रथम विदेशी वैज्ञानिक थीं जिन्हें इस खोज के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त हुई थी। उन्होंने इस खोज की व्याख्या की। उन्होंने कहा कि सम्भवतः यूरेनियम परमाणु दो लगभग बराबर टुकड़ों में टूट गया है जिनमें से एक बेरियम है जिसकी परमाणु संख्या 56 है। कुछ समय पश्चात् दूसरे टुकड़े क्रिप्टन (परमाणु संख्या 36) को भी ज्ञात कर लिया गया। क्रिप्टन एक विरल गैस होती है। इसकी परमाणु संख्या तथा बेरियम की परमाणु संख्या का योग यूरेनियम की परमाणु संख्या के बराबर हो जाता है।

लाइज माइटर के इस नवीन खोज की तुलना जीवविज्ञान की उन घटनाओं से की गयी जिनमें जीवित कोशीय दो बराबर टुकड़ों में टूट जाता है। इस घटना को जीवविज्ञान में विखण्डन कहा जाता है। अतः परमाणु खण्डन को भी परमाणु विखण्डन का नाम दिया गया। लाइज माइटर का यह भी विचार था कि सम्भवतः जब यूरेनियम परमाणु टूटता है तो अत्यधिक ऊर्जा उत्पन्न होती होगी तथा दोनों टुकड़े तीव्र वेग से एक दूसरे से दूर हटते होंगे।

रेडियम की खोज के समय से ही वैज्ञानिकों का मन था कि वे किसी भी धातु में विद्यमान ऊर्जा को प्राप्त कर सकें। सन् 1935 ई० में इरीने



क्यूरी ने नोबेल पुरस्कार भाषण में इस ओर संकेत करते हुए कहा, “यदि हम विज्ञान की बढ़ती हुई प्रगति की ओर ध्यान दें तो विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि वे वैज्ञानिक जो परमाणु निर्माण या खण्डन कर सकते हैं, कुछ ही समय में नाभिकीय शृंखलित क्रिया प्राप्त कर लेंगे। यदि ऐसी क्रियाएं पदार्थ में सम्भव हो सकीं तो जो ऊर्जा उत्पन्न होगी उसकी कल्पना भी असंभव होगी।”

इरीने क्यूरी की भांति लाइज माइटनर भी परमाणु ऊर्जा प्राप्त करने की सम्भावना तथा प्रयत्नों को जानती थीं। अतः उन्होंने कल्पना की कि ‘संभवतः विखण्डन वह ताली है जो परमाणु ऊर्जा के भण्डार को खोल सकती है’।

विखण्डन का समाचार लाइज माइटनर को क्रिसमस अवकाश के समय मिला था। उस समय भौतिकविद आटो फ्रिश उनसे मिलने आया था। वह भी जर्मनी से भाग आया था। पहले तो आटो फ्रिश ने विखण्डन की कल्पना को मानने से इंकार कर दिया, किन्तु लाइज माइटनर की व्याख्या से उसके मत में अंतर आया। आटो फ्रिश और लाइज माइटनर ने विखण्डन के समाचार को नील्स बोर तक पहुंचाने का निश्चय किया। (नील्स बोर का परमाणु सम्बन्धी ज्ञान काफी विस्तृत था।)

चूंकि इस समाचार को पत्र द्वारा नहीं भेजा जा सकता था, अतः वे दोनों बोर से मिलने कोपेन हेगेन (डेनमार्क) गये। जिस दिन वे लोग ‘बोर’ से मिले, उसी दिन ‘बोर’ को अमरीका प्रस्थान करना था। किन्तु बोर उन लोगों की बातों में इतने तल्लीन हो गये कि ट्रेन के छूटने का समय ही भूल गये।

उपर्युक्त घटना वैज्ञानिक चिंतन का एक उदाहरण है। वैज्ञानिक जब चिंतन करता है तो उसे केवल चिंतन विषय स्मरण रहता है, शेष अन्य बातें उसे गौण लगती हैं और सामान्यतः ध्यान में नहीं आतीं। इसके अतिरिक्त वार्तालाप का विषय इतना महत्वपूर्ण था कि उसमें किसी का भी लीन हो जाना आश्चर्यजनक न था।

बोर से वार्तालाप के उपरान्त माइटनर और फ्रिश अपने देश वापस आ गये। वहां उन्होंने बोर के बतलाए प्रयोग को किया। इस प्रयोग में उन्होंने परमाणु विखण्डन में उत्पन्न ऊर्जा को भी नापा। इस प्रकार यह निश्चित हो गया कि यूरेनियम परमाणु का विखण्डन सम्भव है और इस विखण्डन में उत्पन्न ऊर्जा भी बहुत अधिक है।

इस खोज के पूर्व इटली के वैज्ञानिक फरमी भी तानाशाह मुसोलिनी के शासन से उकता कर अमरीका आ गये थे और कोलम्बिया विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हो गये थे। जब फरमी को विखण्डन खोज का समाचार मिला तो उन्हें

अपना यूरेनियम पर किया हुआ प्रयोग स्मरण हो आया। वास्तव में उन्होंने भी यूरेनियम परमाणु विखण्डन प्राप्त कर लिया था, किन्तु वे उसे पहचान न सके



## 20 / परमाणु और मानव

थे। अतः परमाणु विखण्डन खोज का श्रेय फरमी को न मिला।

अन्य प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि यूरेनियम विभिन्न प्रकार से टूट सकता है और अनेक तत्व बन सकते हैं जिनकी परमाणु संख्या तथा परमाणविक द्रव्यमान यूरेनियम के आधे के लगभग समान होगी।

इस खोज से एक प्रमुख प्रश्न का उत्तर भी मिला। हम जानते हैं कि प्रकृति में 92 तत्व ही प्राप्य है। ऐसा क्यों होता है? इसका उत्तर भी परमाणु विखण्डन से मिला। यूरेनियम परमाणु नाभिक में एक न्यूट्रॉन के पड़ने पर यूरेनियम परमाणु टूट जाता है। अतः यह निश्चित हो गया कि प्रकृति में तत्व-92 से अधिक परमाणु भार वाला तत्व नहीं रह सकता। यदि कोई बनेगा भी तो शीघ्र टूट जायेगा।

## द्वितीयक न्यूट्रॉन

मार्च 1939 ई० में जोलियट हांस हालवान तथा लियू कोवारस्की ने घोषणा की कि उन्होंने यूरेनियम परमाणु विखण्डन में उत्पन्न दो तत्वों तथा ऊर्जा के अतिरिक्त अनेक न्यूट्रॉन भी प्राप्त किये हैं। इन न्यूट्रॉनों को उन्होंने द्वितीयक न्यूट्रॉन कहा।

द्वितीयक न्यूट्रॉन की खोज अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी। इस खोज ने यह निश्चित कर दिया कि विखण्डन केवल कुछ परमाणुओं तक सीमित न रहेगा वरन् वह ऊष्मा की भांति एक परमाणु से दूसरे परमाणु में होता हुआ पूरे पदार्थ में फैल जायेगा। उपरोक्त कथन को निम्न उदाहरण से समझ सकते हैं:

यदि हम यह मान लें कि जब यूरेनियम परमाणु टूटता है तो उसमें से दो न्यूट्रॉन निकलते हैं तो ये दो न्यूट्रॉन दो अन्य परमाणुओं पर प्रहार करेंगे जिनका विखण्डन तो होगा ही, साथ ही दोनों परमाणुओं से दो-दो न्यूट्रॉन निकलेंगे। इस प्रकार उत्पन्न चार न्यूट्रॉन अन्य चार परमाणुओं पर प्रहार करके और उन्हें खंडित करके उनमें से 8 परमाणु निकालेंगे। इस प्रकार परमाणु मंजन के साथ ही दूने न्यूट्रॉन भी प्राप्त होते जायेंगे जो अन्य परमाणुओं का खण्डन करते रहेंगे। यदि क्रिया कुछ समय तक चलती रहेगी तो अनेक परमाणुओं का विखण्डन हो जायेगा।

इस क्रिया को वैज्ञानिकों ने शृंखलित क्रिया कहा। शृंखलित क्रिया का महत्त्व इस तथ्य में है कि प्रत्येक परमाणु विखण्डन पर ऊर्जा उत्पन्न होती रहती है। यद्यपि एक परमाणु के विखण्डन के कारण उत्पन्न ऊर्जा अधिक नहीं होती है, किन्तु शृंखलित क्रिया में कुछ समय में इतने अधिक परमाणु खंडित हो जाते हैं कि कुल प्राप्त ऊर्जा की मात्रा अत्यधिक होती है। इस ऊर्जा का अनुमान आप यों कर सकते हैं कि यदि एक औंस (28 ग्राम) यूरेनियम का विखण्डन हो जाय



तो उत्पन्न ऊर्जा से 20,000 बल्ब 12 दिन तक जलाए जा सकेंगे।

यद्यपि उपर्युक्त विचार सैद्धांतिक रूप से ठीक था। किन्तु भौतिकविद इस बात पर एकमत न थे कि यह व्यावहारिक रूप में खरी उतरेगी या नहीं। इसका कारण यह था कि अभी तक के प्रयोगों में विखण्डन तो हुआ था किन्तु शृंखलित क्रिया न हुई थी और यदि हुई भी थी तो यह प्रायोगिक रूप से नहीं के समान थी, क्योंकि यूरेनियम के विखण्डन से उत्पन्न अधिकतर न्यूट्रॉन इधर-उधर भाग जाते थे। अनेक वैज्ञानिकों का मत था कि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न की जा सकती है जिसमें उत्पन्न न्यूट्रॉन इधर-उधर न भागें वरन् परमाणु विखण्डन में सहयोग दें और शृंखलित क्रिया को जीवित रखें।

इस विचार के विरोधियों का कथन था कि स्वयं लार्ड रदरफोर्ड ने परमाणु खण्डन के अनेक वर्षों के पश्चात् कहा था कि हम लोग परमाणु ऊर्जा को नियंत्रित न कर सके हैं तथा निकट भविष्य में ऐसी कोई सम्भावना नहीं है कि इस ऊर्जा को नियंत्रित करके व्यापारिक रूप से इसका प्रयोग सम्भव हो। अतः इस समस्या पर प्रयोग करने से केवल समय तथा धन की हानि होगी, मिलेगा कुछ नहीं।

किन्तु लार्ड रदरफोर्ड के उपर्युक्त विचारों के विरुद्ध, वैज्ञानिकों ने विश्वास तथा अथक परिश्रम के फलस्वरूप परमाणु ऊर्जा को नियंत्रित कर लिया।



## द्वितीय महायुद्ध और रेडियधर्मिता

द्वितीय महायुद्ध के आरम्भ के पूर्व वैज्ञानिक विश्वास करने लगे थे कि परमाणु विखण्डन का उपयोग सैनिक तथा शांतिपूर्ण कार्यों के लिए किया जा सकता है। समाचारपत्र भी इस अभूतपूर्व खोज पर अनेक प्रकार की कल्पनाएं करने लगे थे। इन कल्पनाओं में परमाणु बम का स्थान महत्त्वपूर्ण था।

यह उस समय की बात है जब यूरोप में युद्ध का उन्माद बढ़ता जा रहा था। धुरी राष्ट्रों (जर्मनी, जापान और इटली) तथा मित्र राष्ट्रों (ब्रिटेन, अमरीका तथा फ्रांस) में युद्ध कभी भी भड़क सकता था। जर्मनी, इटली तथा अन्य यूरोपीय देशों के अनेक वैज्ञानिक अपना-अपना देश छोड़कर मित्र राष्ट्रों में पहुंच गये थे। इनमें इटली के फरमी, हंगेरी के लिओ स्जीलार्ड, जर्मनी के लाइज माइटनर और आटो फ्रिश तथा डेनमार्क के नील्स बोर मुख्य थे।

परमाणु बम की सम्भावना पर सबसे अधिक विश्वास भौतिकविद लिओ-स्जीलार्ड को था यद्यपि अन्य अनेक वैज्ञानिक भी इस पर कम या अधिक विश्वास करते थे। मित्र राष्ट्रों के वैज्ञानिकों को यह डर था कि सम्भवतः जर्मनी उनसे आगे है क्योंकि विखण्डन की खोज जर्मनी में हुई थी। चूंकि जर्मन वैज्ञानिकों का सम्बन्ध मित्र राष्ट्रों के वैज्ञानिकों से समाप्त हो गया था, अतः यह भी ज्ञात न हो पा रहा था कि वास्तविक स्थिति क्या है ?

इन सब बातों को ध्यान में रखकर लिओ स्जीलार्ड ने एक सुझाव दिया कि परमाणु सम्बन्धी अनुसंधान तथा उपलब्धियों को गुप्त रखा जाय। यह सुझाव अनेक वैज्ञानिकों को विचित्र लगा। अभी तक वैज्ञानिक ज्ञान का स्वतंत्र आदान-प्रदान होता था तथा एक ही समस्या पर कार्य करने वाले अनेक वैज्ञानिकों के मध्य अपनी उपलब्धियों को प्रकाशित करने में होड़ लग जाती थी। खोज का श्रेय उस वैज्ञानिक को मिलता था जो खोज को सर्वप्रथम प्रकाशित करवा लेता था।

ऐसी खोज का महत्त्वपूर्ण उदाहरण द्वितीयक न्यूट्रॉन है। पेरिस में जोलियट



तथा उनके साथियों द्वारा ज्ञात किये जाने के एक सप्ताह पश्चात् फरमी तथा उनके साथियों ने भी इसे न्यूयार्क में खोज लिया था, किन्तु खोज का श्रेय जोलियट और उनके साथियों को मिला।

तथापि सम्भावित युद्ध की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर वैज्ञानिकों ने स्वयं मान लिया कि रेडियधर्मी खोजों को गुप्त रखा जाय। इस प्रकार वैज्ञानिक ज्ञान कुछ सीमाओं में बंध कर रह गया।

युद्ध में रेडियधर्मिता के सम्भावित उपयोगों की ओर फ्रांस, ब्रिटेन और अमरीका ने प्रयास किये। सर्वप्रथम प्रयास फ्रांस ने किया, किन्तु अंतिम सफलता अमरीका को प्राप्त हुई।

### फ्रांसीसी प्रयास

परमाणु ऊर्जा के संभावित सामरिक उपयोगों की ओर सर्वप्रथम प्रयास फ्रांस ने किया। युद्ध आरम्भ होने के पूर्व जोलियट, हालवान कोवारस्की तथा पेरिन ने ज्ञात किया था कि प्राकृतिक यूरेनियम में सामान्यतः दो आइसोटोप होते हैं। यूरेनियम-235 और यूरेनियम-238। यूरेनियम-235 (U-235) में शृंखलित क्रिया हो सकती है, किन्तु यूरेनियम-238 (U-238) में शृंखलित क्रिया नहीं हो सकती। (यद्यपि U-238 को प्लूटोनियम में परिवर्तित किया जा सकता है जो खण्डनीय है तथा उसमें शृंखलित क्रिया हो सकती है।)

मई 1938 ई० में इन सिद्धांतों के आधार पर परमाणु ऊर्जा संबंधी उपलब्धियों को पेटेंट कराने के लिए फ्रांस में सर्वप्रथम आवेदन किया गया।

### मंद न्यूट्रॉनों का उपयोग

प्रयोगों के फलस्वरूप यह देखा गया कि यूरेनियम-235 का विखण्डन मंद न्यूट्रॉन अधिक सफलतापूर्वक कर सकते हैं। न्यूट्रॉनों को मंद करने के लिए अनेक प्रकार के मंदक उपयोग में लाये जाते हैं जिनमें कम परमाणु भार वाले तत्व मुख्य हैं।

यांत्रिकी के सिद्धांतों के अनुसार यदि कोई वेगवान वस्तु अपने समान द्रव्यमान की वस्तु से टकराती है तो उसके वेग में अत्यधिक कमी हो जाती है। हाइड्रोजन-परमाणु का द्रव्यमान न्यूट्रॉन के द्रव्यमान के लगभग समान होता है। अतः हाइड्रोजन परमाणु अच्छे मंदक का कार्य कर सकता है। इसी भांति कम परमाणु भार वाले तत्व अच्छे मंदक हो सकते हैं।

जोलियट तथा उनके सहयोगियों ने मंदकों पर प्रयोग कर ज्ञात किया कि हाइड्रोजन न्यूट्रॉनों को बंदी कर लेता है। अतः उपयोगी न्यूट्रॉनों की संख्या घट जाती है। अन्य प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि ग्रेफाइट (शुद्ध कार्बन) तथा भारी पानी



## 24 / परमाणु और मानव

(ड्यूटेरियम तथा आक्सीजन के संयोग से बना पानी) अच्छे मंदक हैं। यद्यपि ड्यूटेरियम भी न्यूट्रॉनों को बंदी करता है किन्तु उनकी संख्या हाइड्रोजन के द्वारा शोषित किये गये न्यूट्रॉनों की अपेक्षा बहुत कम होती है। भारी पानी को अमरीकी वैज्ञानिक यूरे ने सन् 1932 ई० में खोजा था। भारी पानी के उत्पादन के लिए सामान्य जल को बार-बार आसवन करना पड़ता है। अतः इसका मूल्य काफी होता है। किन्तु नारवे की एक कंपनी भारी पानी को कम मूल्य पर विक्रय करती थी। इस कंपनी से फ्रांस सरकार ने समझौता किया जिसके अनुसार कंपनी का संपूर्ण उत्पादन फ्रांस को मिल गया था। इसी प्रकार बेलजियम सरकार से फ्रांस ने यूरेनियम के लिए समझौता किया। इसके अनुसार कांगो में उत्पादित कुल यूरेनियम फ्रांस को मिल जाना था।

फ्रांस का विचार परमाणु पनडुब्बी तथा परमाणु शक्ति संयंत्र बनाने का था। किन्तु द्वितीय महायुद्ध में शीघ्र ही पराजय के कारण वह कुछ कर न सका।

### आंग्ल प्रयास

सन् 1939 ई० में तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल को उनके सलाहकार भौतिकविद लिडमान ने परमाणु आयुधों के बारे में सावधान किया था। तथापि लिडमान का विचार था कि परमाणु आयुधों का निर्माण निकट भविष्य में सम्भव नहीं है क्योंकि निर्माण की कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करना सरल न होगा।

सन् 1940 ई० में ब्रिटिश सरकार ने एक सलाहकार समिति बनाई, जिसमें प्रमुख वैज्ञानिक चाडविक, काक क्राफ्ट, ओलीफेन्ट और आटो फ्रिश थे। (आटो फ्रिश डेनमार्क से इंग्लैंड आ गये थे।) इस समिति को यह निर्णय लेना था कि क्या परमाणु बम का निर्माण संभव है और यदि है तो क्या सामरिक दृष्टि से निर्माण महत्त्वपूर्ण होगा ?

### परमाणु बम निर्माण समस्या

परमाणु बम निर्माण समस्या को समझने के लिए आपको शृंखलित क्रिया के महत्त्व को समझना होगा। संभवतः आपको वह ऐतिहासिक कथा ज्ञात होगी, जिसके अनुसार शतरंज के अन्वेषक ने सम्राट से पारितोषिक के रूप में गेहूं मांगा था। किन्तु गेहूं की गणना इस प्रकार करनी थी कि यदि पहले खाने में एक गेहूं का दाना हो तो दूसरे में दो, तीसरे में चार, चौथे में आठ और इसी भांति अन्य खानों में क्रमशः गेहूं बढ़ता जाए। यह गेहूं इतना अधिक होगा कि इसकी गणना कठिन है। इसी भांति यदि हम यह मान कर कि एक परमाणु विखण्डन पर दो न्यूट्रॉन निकलते हैं, शुद्ध यूरेनियम-235 में हो सकने वाली शृंखलित क्रिया पर



विचार करें तो हम देखेंगे कि कुछ ही पीढ़ियों पश्चात् इतने अधिक न्यूट्रॉन उत्पन्न हो जायेंगे जिनकी हम कल्पना नहीं कर सकते। (दसवीं पीढ़ी में 1000 तथा 18वीं पीढ़ी में 100 करोड़ न्यूट्रॉन उत्पन्न होंगे) इस कार्य के होने में लगा हुआ समय भी अत्यन्त कम होगा। सेकंड के न्यूनतम भाग में ही अत्यधिक परमाणु ऊर्जा स्वतंत्र हो जाएगी।

उपर्युक्त विचार सिद्धान्त रूप में ठीक है किन्तु प्रायोगिक रूप में खरा नहीं उतरता है। जितने न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं, वे सबके सब विखण्डन में प्रयुक्त नहीं होते हैं। कारण यह है कि अनेक न्यूट्रॉन पदार्थ की सतह के बाहर निकल जाते हैं। अतः यदि सतह का क्षेत्रफल कम हो किन्तु आयत अधिक हो तो अधिक न्यूट्रॉन विखण्डन के लिए मिल सकेंगे। यह गुण गोले में है। गोले के अर्द्ध व्यास को बढ़ाने पर उसका आयतन क्षेत्रफल की अपेक्षा अधिक तीव्रता से बढ़ता है। इस कारण धरातल से निकल जाने वाले न्यूट्रॉनों की संख्या बढ़ते हुए अर्द्ध व्यास के साथ घटती जाती है। गणना कर यह ज्ञात किया जा सकता है कि कितने कम से कम द्रव्यमान वाले यूरेनियम के गोले में विस्फोट हो सकता है। यूरेनियम का वह द्रव्यमान जिसमें विस्फोट संभव है, क्रांतिक द्रव्यमान तथा विस्फोट के लिए आवश्यक आयतन को क्रांतिक आयतन कहते हैं।

क्रांतिक द्रव्यमान तथा आयतन के सिद्धांत को फ्रांसीसी वैज्ञानिक पेरिन ने सन् 1939 ई० में ज्ञात किया था। सन् 1940 ई० में आंग्ल भौतिकविद चाड-विक ने आवश्यक क्रांतिक द्रव्यमान तथा आयतन ज्ञात किया। यह यूरेनियम के लिए 50 पाँड तथा 60 घन इंच क्रमशः था।

सन् 1940 ई० में ब्रिटिश वैज्ञानिक परमाणु बम निर्माण की परिकल्पना से सहमत हो गये। किन्तु साधनों के अभाव के कारण इस ओर प्रयास केवल कल्पनाओं तक ही सीमित रह गया।

### अमरीकी प्रयास और सफलता

यूरोप की भांति अमरीकी वैज्ञानिक भी परमाणविक आयुधों की परिकल्पना कर रहे थे। इन वैज्ञानिकों में अधिकतर वे वैज्ञानिक थे जो यूरोप से भागकर अमरीका आए थे। इनमें फरमी, स्जीलार्ड, विगनर तथा आईस्टाइन मुख्य थे।

यद्यपि फरमी ने अमरीकी सरकार को परमाणु आयुधों के सम्भावित निर्माण से सतर्क करने का सर्वप्रथम प्रयास किया था, किन्तु वे अपनी बात के महत्त्व को भलीभांति समझा न सके।

अगला प्रयत्न हंगरी के वैज्ञानिकों लिओ स्जीलार्ड तथा यूगेने विगनर ने किया। स्जीलार्ड फरमी के साथ कोलम्बिया विश्वविद्यालय में कार्य कर रहे



ये तथा विगनर आइंस्टाइन के साथ प्रिंसटन विश्वविद्यालय में कार्यरत थे। इन वैज्ञानिकों का विश्वास था कि यदि आइंस्टाइन उनके विचारों से सहमत होकर अमरीकी सरकार तक पहुंचा दे तो सरकार उनकी बात अवश्य मान लेगी।

आइंस्टाइन की रुचि भी परमाणु विखण्डन में थी। अनेक वर्ष पूर्व उन्होंने द्रव्यमान-ऊर्जा सिद्धांत की स्थापना की थी। इस सिद्धांत के अनुसार द्रव्यमान-ऊर्जा में तथा ऊर्जा द्रव्यमान में परिवर्तित हो सकता है। आइंस्टाइन ने द्रव्यमान ऊर्जा संबंधी सूत्र ( $E=mc^2$ ) भी स्थापित किया था। इस सूत्र से यह ज्ञात किया जा सकता है कि निश्चित द्रव्यमान के नष्ट होने के कारण कितनी ऊर्जा उत्पन्न होगी। विखण्डन के प्रयोगों ने आइंस्टाइन के द्रव्यमान-ऊर्जा नियम की सत्यता स्थापित की।

आइंस्टाइन, स्जीलार्ड और विगनर के विचार-विमर्श का यह फल निकला कि आइंस्टाइन ने उस पत्र पर हस्ताक्षर करना स्वीकार कर लिया जो स्जीलार्ड तथा विगनर लिखने वाले थे।

शीघ्र ही स्जीलार्ड तथा विगनर ने पत्र तैयार कर लिया। यह पत्र आइंस्टाइन की ओर से राष्ट्रपति रूजवेल्ट के नाम था। इसमें लिखा था “फरमी तथा स्जीलार्ड के प्रयोगों से मुझे आभास होता है कि यूरेनियम तत्व निकट भविष्य में एक नवीन तथा महत्वपूर्ण ऊर्जा स्रोत में बदल सकता है। यह भी संभव है कि यूरेनियम में नाभिकीय श्रृंखलित क्रिया स्थापित की जा सके जिसके फल-स्वरूप अकल्पनीय ऊर्जा का उत्पादन हो। यह नवीन उपलब्धि बम निर्माण में भी सहायक हो सकती है। यद्यपि यह विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि शक्तिशाली बम बनाये जा सकेंगे।”

इस पत्र में आगे कहा गया था कि “जर्मनी भी इस दिशा में प्रयत्न कर रहा है। इसी कारण वह यूरेनियम को बेच नहीं रहा है। पत्र के अंत में कहा गया था कि “मानव प्रथम बार उस ऊर्जा का उपयोग करेगा जो सीधे सूर्य से प्राप्त नहीं की गई है।” इस पत्र पर अगस्त 1939 ई० में आइंस्टाइन ने हस्ताक्षर किये।

उपरोक्त वैज्ञानिकों ने निश्चय किया कि वे इस पत्र को डाक द्वारा न भेजेंगे। इस पत्र को उन्होंने अमरीकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट के मित्र एलेक्जेंडर सात्स के माध्यम से राष्ट्रपति को भिजवाया।

1 सितम्बर, 1939 ई० को द्वितीय महायुद्ध योरोप में शुरू हो गया। श्री एलेक्जेंडर सात्स ने 11 सितम्बर को वैज्ञानिकों का पत्र तथा स्जीलार्ड की रिपोर्ट राष्ट्रपति को दा। राष्ट्रपति ने पत्र पर विचार कर यूरेनियम सलाहकार समिति की स्थापना की। इस समिति के अन्तर्गत सन् 1939 ई० में कार्य प्रारम्भ हुआ। इस कार्य के फलस्वरूप अमरीका ने सर्वप्रथम परमाणु बम बनाया।



## प्रथम श्रृंखलित क्रिया

यूरेनियम सलाहकार समिति ने देश की विभिन्न प्रयोगशालाओं तथा विश्व-विद्यालयों में हो रहे कार्य को एक सूत्र में पिरोने का निश्चय किया। इस समिति के कार्यकाल में कुछ नवीन सिद्धांत तथा तथ्य खोजे गये।

कोलम्बिया विश्वविद्यालय में फरमी तथा स्जीलार्ड ने अनेक प्रयोगों के उपरांत ज्ञात किया कि शुद्ध ग्रेफाइट को मंदक के रूप में प्रयोग कर प्राकृतिक यूरेनियम में श्रृंखलित क्रिया स्थापित की जा सकती है। उन्होंने वे परिस्थितियां भी ज्ञात कीं जिनमें विखण्डन संभव था। फरमी ने ग्रेफाइट तथा यूरेनियम का उपयोग कर लघु पुंज का निर्माण किया। इस पुंज पर किये गये प्रयोगों ने यह निश्चित कर दिया कि श्रृंखलित क्रिया संभव है तथा उसे प्राप्त किया जा सकता है।

सन् 1940 ई० में अमरीकी भौतिकविद एल्फ्रेड नियर ने प्राकृतिक यूरेनियम से यूरेनियम-235 अलग कर लिया और स्वीकार किया कि प्राकृतिक यूरेनियम में विद्यमान यूरेनियम-235 में ही विखण्डन क्रिया होती है किन्तु यूरेनियम-235 की मात्रा अत्यन्त कम होती है।

सन् 1940 ई० के अंत में एक अन्य अमरीकी भौतिकविद ने ज्ञात किया कि यूरेनियम-238 को प्लूटोनियम-239 में बदला जा सकता है। प्लूटोनियम भी यूरेनियम-235 की भांति मंद न्यूट्रॉनों की सहायता से विखण्डित हो जाता है।

उपरोक्त खोज का महत्त्व है कि जब प्राकृतिक यूरेनियम में विखण्डन क्रिया होगी, तब केवल यूरेनियम-235 का ही विखण्डन होगा। साथ ही शेष यूरेनियम का अधिकांश भाग यूरेनियम-238 न्यूट्रॉनों को बंदी कर प्लूटोनियम में परिवर्तित हो जायेगा।

प्लूटोनियम प्राकृतिक रूप से प्राप्त नहीं है। इसका आवर्त-सारिणी में 94वां स्थान है। यह यूरेनियम-235 की भांति विखण्डित हो जाता है। रॉबर्ट ओपेन



हाइमर ने प्लूटोनियम के लिए आवश्यक क्रांतिक द्रव्यमान की गणना की और देखा कि प्लूटोनियम में शृंखलित क्रिया के लिए आवश्यक क्रांतिक द्रव्यमान, यूरेनियम-235 की अपेक्षा कम है।

रॉबर्ट ओपेनहाइमर प्रथम अमरीकी वैज्ञानिक थे जिन्होंने निश्चित रूप से स्वीकार किया कि यदि क्रांतिक द्रव्यमान से अधिक मात्रा ली जाए तो परमाणु बम का निर्माण संभव है।

सन् 1941 ई० के पतझड़ के मौसम में ब्रिटिश वैज्ञानिक ओलीफेन्ट अमरीका आए। उन्होंने अमरीकी सरकार को सचेत किया कि जर्मनी परमाणु आयुधों के क्षेत्र में प्रगति करता जा रहा है तथा यदि समय रहते अमरीका न चेता तो इसके भयंकर दुष्परिणाम हो सकते हैं।

ओलीफेन्ट की यात्रा ने राष्ट्रपति रूजवेल्ट की यूरेनियम योजना को और दृढ़ता प्रदान की। 6 दिसम्बर, 1941 ई० को राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने वैज्ञानिकों को इस योजना को सफल करने के लिए निमंत्रित किया। अगले दिन जापानी बम वर्षकों ने अमरीकी बंदरगाह पर्ल हार्बर पर हमला कर दिया। इसके पश्चात् घटनाएं बहुत तेजी से घटीं और द्वितीय महायुद्ध में अमरीका भी सम्मिलित हो गया।

राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने परमाणविक अनुसंधान की गति को तीव्र करने का निश्चय किया तथा उच्च पदस्थ व्यक्तियों को योजना के विभिन्न खण्डों का प्रधान बनाया। भौतिकविद आर्थर एच० क्रॉम्पटन को शृंखलित क्रिया पर हो रहे अनुसंधान का प्रधान बनाया गया।

क्रॉम्पटन ने शृंखलित क्रिया पर हो रहे अनुसंधान को एक स्थान पर केन्द्रित करने का निश्चय किया। इसके लिए उन्होंने शिकागो विश्वविद्यालय को चुना। शिकागो नगर अमरीका के लगभग मध्य में स्थित है, अतः सुरक्षा की दृष्टि से सुरक्षित है।

शीघ्र ही शिकागो विश्वविद्यालय में अमरीका के कोने-कोने से वैज्ञानिक एकत्र होने लगे। इन वैज्ञानिकों में फरमी, स्जीलार्ड और सीवोर्ग मुख्य थे। क्रॉम्पटन ने सुरक्षा की दृष्टि से शृंखलित क्रिया पर अनुसंधान करने की योजना को मेटलरजिकल लैब (संक्षेप में मेट लैब) का नाम दिया। यह योजना अत्यन्त गोपनीय थी। प्रयोगशाला में वैज्ञानिकों के अतिरिक्त अन्य लोग प्रवेश न कर सकते थे। वैज्ञानिक अपने कार्य के बारे में एक दूसरे से वार्तालाप भी नहीं करते थे।

फरमी तथा उनके साथियों ने परमाणविक पुंज बनाने का निश्चय किया। इसके लिए उन्होंने विश्वविद्यालय के स्टेडियम में स्थित स्क्वैश कोर्ट को चुना। इस दीर्घ पुंज के निर्माण पूर्व उपरोक्त वैज्ञानिकों ने 30 छोटे-छोटे पुंज बनाकर



प्रयोग किये थे। इतमें से एक पुंज पर किये गये प्रयोगों ने सिद्ध कर दिया था दीर्घ पुंज में शृंखलित क्रिया अवश्य प्राप्त की जा सकती है।

दीर्घ पुंज का निर्माण करने से पूर्व उन्होंने निश्चय किया कि वे पुंज को गुब्बारे में बनायेंगे क्योंकि आवश्यकता पड़ने पर गुब्बारे की हवा बाहर निकाली जा सकती है। (हवा भी न्यूट्रॉनों को बंदी बनाती है। अतः यदि वायु को कम कर दिया जाय तो न्यूट्रॉनों का शोषण कम हो जाएगा और शृंखलित क्रिया की संभावना बढ़ जायेगी।)

अतः 6 दीवारों वाला गुब्बारा लिया गया, जिसकी 5 दीवारों को स्ववैश कोर्ट की दीवारों से बांध दिया गया। गुब्बारे की दीवारों के सहारे लकड़ी का फ्रेम लगाया गया जिनके सहारे यूरेनियम तथा ग्रेफाइट के टुकड़े रखे गये। यूरेनियम के टुकड़ों को ग्रेफाइट की हर दूसरी पर्त में रखा जाता था। धीरे-धीरे पुंज ऊपर उठता गया और शृंखलित क्रिया की संभावना बढ़ती गई। अंत में जब सत्तावनवीं (57) पर्त रखी गई तो पुंज शृंखलित क्रिया के लिए तैयार था।

2 दिसम्बर 1942 ई० को प्रातःकाल लगभग 20 व्यक्ति स्ववैश कोर्ट में एकत्र हुए। इनमें से तीन युवक पुंज की छत पर चढ़ गये। इनका कार्य आवश्यकता पड़ने पर कैंडमियम छड़ों की गिराना था। कैंडमियम मंद न्यूट्रॉन का शोषण करता है, अतः वह शृंखलित क्रिया को नियंत्रित कर सकता है। वास्तव में कैंडमियम छड़ की शृंखलित क्रिया में वही कार्य है जो पानी का आग में।

एक अन्य वैज्ञानिक जार्ज वील फर्श पर एक छड़ के समीप था जो पुंज से बाहर की ओर निकली थी।

इस प्रयोग का संचालन फरमी कर रहे थे। प्रयोग आरम्भ करने के पूर्व फरमी ने अन्य उपस्थित वैज्ञानिकों को सम्बोधित कर कहा, “जो छड़ पुंज के बाहर निकली है वह कैंडमियम की बनी है। इस छड़ का 13 फुट भाग पुंज के अन्दर है। आप जानते हैं कि कैंडमियम की छड़ को बाहर निकालने पर ही शृंखलित क्रिया हो सकती है। अतः जार्ज वील कैंडमियम की छड़ को धीरे-धीरे बाहर निकालेंगे।”

“कैंडमियम-छड़ के निकलने के साथ-साथ संकेतक भी अपना कार्य करेगा। वह एक रेखा अंकित करेगा जो धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठेगी।”

फरमी के आदेश पर जार्ज ने कैंडमियम छड़ को एक फुट बाहर निकाला। जैसे ही छड़ बाहर निकली तुरंत गाइगर काउंटर तेजी से खट-खट करने लगा। धीरे-धीरे छड़ को बाहर निकाला जाता रहा और प्रयोग प्रगति करता गया। इस प्रकार दोपहर हो गई तथा सब वैज्ञानिक भोजन करने चले गये।



## 30 / परमाणु और मानव

फरमी ने कहा कि अब यदि एक फुट छड़ और निकाल दी जाय तो पुंज में श्रृंखलित क्रिया स्थापित हो जाएगी। उनके इस कथन पर छत पर बैठे हुए वैज्ञानिक सावधान हो गये। जार्ज ने एक फुट छड़ और बाहर निकाली। काउंटर और तीव्र गति से कार्य करने लगा तथा रेखा ऊपर उठती गई। पुंज में श्रृंखलित क्रिया आरंभ हो गई थी तथा वह पूर्ण नियंत्रण में थी।

लगभग आधे घंटे तक पुंज ने परमाणु ऊर्जा उत्पन्न की। इसके पश्चात् फरमी के आदेश पर जार्ज ने छड़ को अन्दर कर दिया और श्रृंखलित क्रिया समाप्त हो गई। इस प्रकार विश्व में सर्वप्रथम श्रृंखलित क्रिया हुई।

इस घटना का वर्णन करते हुए आचार्य क्रॉम्पटन ने आचार्य कोनेट (वैज्ञानिक अनुसंधान प्रतिष्ठान के सदस्य) से टेलीफोन पर कहा “आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इतालवी पथ प्रदर्शक ने अभी-अभी नई दुनिया में कदम रखा है।” कोनेट यह सुनकर चीख उठे, “क्या ऐसा है” — “वहां के निवासी मित्र हैं।” क्रॉम्पटन ने उत्तर दिया, “सब लोग सुरक्षित पहुंच गये हैं तथा प्रसन्न है।”

इस प्रकार आचार्य कोनेट सर्वप्रथम थे जिन्हें सफल श्रृंखलित क्रिया का समाचार प्राप्त हुआ।

अनेक वर्षों पश्चात् उस स्ववैश कोर्ट के प्रवेश पर एक शिलालेख लगाया गया जिस पर अंकित था :

“2 दिसम्बर, 1942 ई० को मानव ने यहां प्राप्त किया प्रथम स्वपोषित श्रृंखलित विखण्डन और इस प्रकार आरम्भ किया, नियंत्रित नाभिकीय ऊर्जा का मुक्तन।”



## 8

## परमाणु बम—प्रारम्भिक प्रयास

शिकागो पुंज की सफलता परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण थी। यद्यपि इस पुंज से व्यापारिक महत्व की ऊर्जा प्राप्त नहीं हुई थी तथापि यह सिद्ध हो गया था कि मानव श्रृंखलित क्रिया की सहायता से परमाणु ऊर्जा का मुक्तन तथा नियंत्रण कर सकता है। किन्तु मुख्य प्रश्न तो परमाणु बम निर्माण का था जिससे वैज्ञानिक अभी भी मीलों दूर थे।

सन् 1942 ई० की ग्रीष्म ऋतु में अमरीकी सेना ने यूरेनियम योजना को अपने हाथ में लिया। सेना ने इस योजना के संचालन के लिए एक विशेष एकक का निर्माण किया तथा उसका नाम 'मैन हाट्टन जिला' रखा। इस नाम का कोई विशेष अर्थ न था। केवल इससे सेना की परमाणु अनुसंधान में रुचि गोपनीय रहती थी।

इस योजना के प्रधान जनरल लेयली आर० ग्रून्स बनाये गये। उन्होंने सरकार की ओर से तीन विशाल भूखण्ड तीन विभिन्न नगरों में खरीदे। इन भूखंडों पर गोपनीय नगर निर्मित किये गये। प्रत्येक नगर ने परमाणु बम के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन नगरों के नाम संक्षेप में एक्स, वाई तथा डब्लू थे। एक्स नगर टेनेसी घाटी में था। इसका पूरा नाम 'ओक रिज' था। इस नगर में प्राकृतिक यूरेनियम से यूरेनियम-235 प्राप्त करने के लिए दो संयंत्र लगाये गये।

प्रथम संयंत्र में गैस विसरण सिद्धांत के अनुसार जब विभिन्न गैसों का मिश्रण रंधित झिल्ली से प्रवाहित किया जाता है तो हल्के अणुओं की गैस भारी अणुओं वाली गैस की अपेक्षा अधिक वेग से प्रवाहित होती है। प्राकृतिक यूरेनियम सामान्यतः ठोसाकार होता है। यह फ्लोरीन के साथ मिलकर गैस बना सकता है। इस यूरेनियम हेक्सा फ्लोराइड गैस को विशेष प्रकार के फिल्टरों से प्रवाहित किया जाता है। इनमें से हल्की गैस भारी गैस की अपेक्षा अधिक वेग से विस-



## 32 / परमाणु और मानव

वाली गैस की अपेक्षा अधिक तीव्र वेग से फिल्टरों से विसरित होती है।

जब गैस का कुछ भाग फिल्टरों से निकल चुकता है तो गैस का भेजना बंद कर दिया जाता है। गैस के इस भाग में शेष भाग की अपेक्षा अधिक यूरेनियम-235 होता है, किन्तु यह वृद्धि नहीं के बराबर होती है। अतः यथेष्ट यूरेनियम-235 प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि गैस को हजारों फिल्टरों में से प्रवाहित किया जाय।

उपर्युक्त विधि से यूरेनियम-235 की मात्रा प्राप्त की गई।

यूरेनियम-235 को प्राप्त करने की दूसरी विधि विद्युत चुम्बकीय सिद्धांत पर आधारित थी। मुख्यतः इसमें एक बड़ा सन्दूक होता है। सन्दूक को विद्युत चुम्बक के दो ध्रुवों के बीच में रखा जाता है तथा आवेशित कणों को सन्दूक में भेजते हैं। एक विद्युत क्षेत्र इन कणों को धीरे-धीरे धक्का देता है। प्रत्येक धक्के पर आवेशित कणों का वेग बढ़ता है। चुम्बक का कार्य कणों को सन्दूक की आकृति के अनुरूप मोड़ना होता है। यदि ऐसा न होगा तो कण सीधी रेखा में बढ़कर विद्युत क्षेत्र के बाहर निकल जायेंगे।

उपरोक्त सिद्धांत पर आधारित यंत्र को 'मास स्पेक्ट्रोग्राफ' कहते हैं। वैज्ञानिकों ने इस यंत्र के उस चुम्बकीय गुण का उपयोग करने का निश्चय किया जिससे आवेशित कण मुड़ जाते हैं। उन्होंने विचार किया कि चुम्बक गतिशील आवेशित कणों को मोड़ देगा और हल्के कण भारी कणों की अपेक्षा अधिक मुड़ जायेंगे। इस भांति यूरेनियम-235 के अणु यूरेनियम-238 से अलग हो जायेंगे।

किन्तु इस सिद्धांत से यथेष्ट फल प्राप्त करने के लिए आवश्यक था कि एक अति दीर्घकाय विद्युत चुम्बक बनाया जाय। भाग्यवश, एक ऐसा विद्युत चुम्बक लगभग तैयार था। केवल उस पर वेष्टन (Coils) नहीं लिपटा था। (विद्युत चुम्बक को बनाने के लिए इस्पात या अन्य चुम्बकीय गुण वाले पदार्थों पर वेष्टन लपेट देते हैं और इस वेष्टन में से विद्युत धारा प्रवाहित करते हैं।) इस अंडाकार चुम्बक का भार 4,900 टन था और इस पर तांबे का वेष्टन लपेटा जाना था। किन्तु तांबा उस समय अप्राप्य था। वेष्टन चांदी का बन सकता था किन्तु चांदी महंगी थी। अंत में अमरीका के राजकोष ने अपनी सुरक्षित चांदी देना स्वीकार किया। सेना का एक अफसर कोषाधिकारी से चांदी लेने पहुंचा। कोषाधिकारी ने पूछा, "आपको कितनी चांदी चाहिए।" सेनाधिकारी ने उत्तर दिया, "लगभग 15 हजार टन।" कोषाधिकारी अपनी कुर्सी से उछल पड़ा। बोला, "श्रीमान, जब भी हम चांदी की बात करते हैं तो हम 'आउंस' में करते हैं।"

किन्तु आवश्यक चांदी सेनाधिकारी को मिल गई जो कार्य समाप्ति पर



### प्लूटोनियम उत्पादन

जैसा कि आप अध्याय-7 में पढ़ चुके हैं कि प्लूटोनियम में भी शृंखलित क्रिया सम्भव है। अमरीकी वैज्ञानिकों ने प्लूटोनियम को भी परमाणु बम के विस्फोटक के रूप में प्रयुक्त करने का निश्चय किया। इन प्रयोगों से शृंखलित क्रिया के लिए आवश्यक क्रांतिक द्रव्यमान की भी गणना की गई तथा पाया कि यह द्रव्यमान यूरेनियम-235 के लिए आवश्यक क्रांतिक द्रव्यमान से कम है।

जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं, मैन हाट्टन जिले में तीन विभिन्न राज्यों में तीन विशाल भूखंड खरीदे थे। इनमें से सबसे बड़ा भूखंड वाशिंगटन राज्य में था। इस भूखंड पर एक विशाल राज्य का निर्माण किया गया था, जहां पर प्लूटोनियम का उत्पादन किया जाना था। इस भूखंड में एक छोटा-सा गांव हैनफोर्ड था। इस गांव के नाम पर प्लूटोनियम उत्पादक संयंत्रों तथा पुंजों को हैनफोर्ड इंजीनियरिंग वर्क्स के नाम से जाना गया।

शिकागो पुंज और हैनफोर्ड पुंजों का कार्य-सिद्धांत एक था, किन्तु आकार विभिन्न थे। हैनफोर्ड पुंज अत्यधिक विशालकाय थे। वास्तव में विशालकाय पुंजों ने अनेक निर्माण-समस्याएं उत्पन्न कर दी थीं। चूंकि शिकागो पुंज का निर्माण केवल शृंखलित क्रिया की प्रायोगिक सत्यता परखने के लिए किया गया था, अतः रेडियधर्मी विकिरणों तथा ऊष्मा का उत्पादन नहीं के बराबर था। किन्तु हैनफोर्ड पुंजों में अत्यधिक ऊष्मा तथा रेडियो सक्रिय विकिरणों के उत्पन्न होने की आशा थी क्योंकि ये विशालकाय थे। रेडियो सक्रिय विकिरण कार्यकर्ताओं को हानि पहुंचा सकते थे। अतः इन पुंजों को कंक्रीट तथा इस्पात की मोटी दीवारों से घेर दिया गया। इन सुरक्षा दीवारों को परिरक्षक कहा जाता है। पुंजों की शृंखलित क्रिया को नियंत्रित करने के लिए कैडमियम छड़ों को अन्दर भेजने या बाहर निकालने की व्यवस्था दूरस्थ नियंत्रण से थी।

पुंजों को शीतल करने की व्यवस्था भी की गई थी। इसके लिए शीतल जल पास में बहती हुई कोलम्बिया नदी से लिया जाता था। इस जल को तीव्र वेग तथा दाब पर ऐसे एल्यूमीनियम के दोहरे जैकटों से भेजा जाता था जिनमें यूरेनियम छड़ें थीं। पुंज से निकले जल को बड़े-बड़े तालावों में भर दिया जाता था जिससे उसकी रेडियो सक्रियता धीरे-धीरे समाप्त हो जाय। कुछ दिन पश्चात् जल दुबारा नदी में फिर पहुंचा दिया जाता था।

हैनफोर्ड पुंजों में धीरे-धीरे यूरेनियम-238 प्लूटोनियम में परिवर्तित होता रहा। इस प्लूटोनियम को शेष पदार्थ से रासायनिक विधियों से अलग किया गया। किन्तु यह एक जटिल कार्य था, क्योंकि यूरेनियम में केवल प्लूटोनियम ही न था वरन् अत्यन्त हानिकारक अन्य पदार्थ भी थे। ये सब पदार्थ रेडियो सक्रिय थे। इन पदार्थों से उत्सर्जित विकिरण कार्यकर्ताओं को शारीरिक हानि पहुंचा सकते



## 34 / परमाणु और मानव

हैं। अतः प्लूटोनियम मिश्रित यूरेनियम को पुंज से दूरस्थ नियंत्रण से हटाया गया और जल से भरे बर्तन में डुबो दिया गया। जल रेडियो सक्रिय विकिरणों को सोख लेता है अतः विकिरण केवल जल तक सीमित रह जाते हैं। कुछ दिनों उपरांत उपरोक्त पदार्थ को रासायनिक क्रिया के लिए भेजते थे। इस रासायनिक क्रिया के फलस्वरूप प्लूटोनियम प्राप्त हुआ।

यहां पर कार्य करने वालों की रेडियधर्मी विकिरणों से सुरक्षा के लिए अनेक प्रबंध थे। उनके कपड़े प्रतिदिन कार्य समाप्ति पर धोये जाते थे। इसके अतिरिक्त प्रतिदिन यंत्रों की सहायता से गणना की जाती थी कि अमुक व्यक्ति ने कितना रेडियधर्मी विकिरण ग्रहण किया है। एक बार जब संयंत्र में कुछ दोष आ गया था तो 150 व्यक्तियों ने केवल आधे मिनट तक कार्य कर उसको ठीक किया था।



## परमाणु युग का उदय

मैन हाट्टन जिले के अन्तर्गत नगरों में सबसे गुप्त नगर न्यू मैक्सिको राज्य में स्थित लास एल्मास नगर था। इस नगर में ओकरिज में उत्पादन किये गये यूरेनियम-235 तथा हैनफोर्ड में उत्पादन किये गये प्लूटोनियम का उपयोग कर परमाणु बम बनाये गये।

यह नगर एक पठारी क्षेत्र में था। लगभग 1000 वैज्ञानिक तथा अनेक कुटुम्ब स्वेच्छा से गोपनीय रूप में रहते थे तथा बम-निर्माण में अपना योगदान देते थे। इस योजना के प्रधान रॉबर्ट ओपेन हाइमर थे। उनके साथ अनेक विख्यात भौतिकविद, गणितज्ञ, रसायनज्ञ तथा अन्य वैज्ञानिक थे। इनमें फरमी, इमीलियो सेगरे, एंडरसेन, नील्स बोर, आटो फ्रिश भी थे।

इस नगर ने परमाणु बम निर्माण से संबंधित कठिनतम समस्याओं का हल खोज निकाला था यद्यपि यह लगभग सिद्ध हो चुका था कि यूरेनियम-235 या प्लूटोनियम की 'निश्चित मात्रा' में श्रृंखलित क्रिया के फलस्वरूप विस्फोट हो सकता था तथा निश्चित मात्रा अर्थात् 'क्रांतिक मात्रा' की भी गणना हो चुकी थी, किन्तु जब तक 'प्रायोगिक विस्फोट' सफल न हो जाय, कुछ भी निश्चित न था।

यह भी निश्चित था कि एक माइक्रो सेकंड ( $10^{-6}$  सेकंड या 0.0000015) में श्रृंखलित क्रिया लगभग सम्पूर्ण हो जायेगी तथा श्रृंखलित होने वाले पदार्थ का अधिकांश भाग श्रृंखलित हो जायेगा और दस लाख डिग्री सेंटीग्रेड से अधिक तापक्रम उत्पन्न होगा किन्तु क्या इससे विनाश भी सम्भव होगा ? यह निश्चित न था।

जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं कि यदि खण्डनीय पदार्थ का द्रव्यमान क्रांतिक द्रव्यमान से अधिक हो तो श्रृंखलित क्रिया तो होगी ही साथ ही विस्फोट भी संभव है। अतः निश्चित रूप से परमाणु बम में खण्डनीय पदार्थ के दो टुकड़े होने चाहिए जिनका सम्मिलित द्रव्यमान, क्रांतिक द्रव्यमान से अधिक



## 36 / परमाणु और मानव

होना चाहिए। अब कठिनाई यह थी इन दोनों टुकड़ों को एक टुकड़े में कैसे बदला जाये कि समय अत्यन्त कम लगे और विखण्डन तथा विस्फोट इच्छानुसार हो जाए।

यह प्रक्रिया प्लूटोनियम के लिए और अधिक कठिन थी। प्लूटोनियम-239 का कुछ भाग पुंज में ही प्लूटोनियम-240 में परिवर्तित हो जाता है जो शीघ्र विखंडित हो जाता है। इस प्रकार विखंडन में उत्पन्न न्यूट्रॉन अपरिपक्व अवस्था में भी परमाणु बम का विस्फोट कर सकते थे।

इस कठिनाई का हल सामान्य विस्फोटकों के उपयोग से खोजा गया। इसके लिए बंदूक की नली की भांति एक मोटी नली ली गई जिसके एक सिरे पर यूरेनियम-235 या प्लूटोनियम का टुकड़ा रखा गया। यह टुकड़ा खोखला था तथा इसमें दूसरा टुकड़ा समा सकता था। दूसरे टुकड़े को किसी रासायनिक विस्फोटक की सहायता से पहले टुकड़े में दाखिल कर दिया गया।

परमाणु बम निर्माण की अनेक कठिनाइयों के निराकरण के साथ-साथ उसे ऐसे बनाया गया जिससे कि उसे सुपर फोर्ट्स लड़ाकू विमान द्वारा गंतव्य स्थान पर ले जाकर प्रहार किया जा सके।

बम के दो प्रतिरूप बनाए गये। दोनों की विस्फोट शक्ति लगभग 20,000 टन टी० एन० टी० थी। एक में यूरेनियम-235 का उपयोग किया गया था तथा दूसरे में प्लूटोनियम का उपयोग किया गया था। दोनों ही दस फुट लम्बे और दो फुट चौड़े थे। पहले का भार 4 टन तथा दूसरे का 5 टन था।

अब मुख्य समस्या परमाणु बम परीक्षण की थी। परीक्षण के लिए न्यूरी मैक्सिको प्रदेश में स्थित एलामोगाडो नामक मरुस्थल को चुना गया। एलामोगाडो का स्पेनी नाम जोरनाडो डेलू ग्युरेटो (मृत्यु की यात्रा) था। यह एक पठारी प्रदेश है तथा वहां पर केवल विपैले कीड़े-मकोड़े, कैक्टस और कंटीली घास ही मिलती थी।

परीक्षण के कुछ सप्ताह पूर्व अनेक वैज्ञानिकों को परीक्षण स्थल के आस-पास तम्बुओं में रखा गया जिससे कि वे विभिन्न प्रयोग स्थापित कर सकें। इस्पात का एक स्तम्भ (लगभग 100 फुट अर्थात् 30 मीटर ऊंचा) खड़ा किया गया। इस स्तम्भ पर प्रायोगिक परमाणु बम को चढ़ाया गया।

यद्यपि परीक्षण की तैयारी के दिनों में मौसम सूखा तथा गर्म था किन्तु परीक्षण के निश्चित दिन के पूर्व एकाएक बादल छा गये और वर्षा शुरू हो गई। अतः परमाणु बम के विस्फोट के लिए आवश्यक रासायनिक विस्फोटक तब तक न किया गया जब तक कि मौसम ठीक न हो गया। रासायनिक विस्फोटक को विद्युत तारों से संबद्ध रखा गया था तथा संकेत मिलने पर केवल तारों को परस्पर जोड़ना ही था।



15 जुलाई, 1945 ई० की रात में अनेक वैज्ञानिक परीक्षण स्थल से 20 मील दूर कंपानिया पहाड़ी पर ले जाए गये। विस्फोट को प्रातः 4 बजे होना था, किन्तु मौसम के कारण उसे एक घंटे के लिए स्थगित कर दिया गया था।

प्रातः 5 बजे एकाएक महस्थल और पहाड़ियां सूर्य के प्रकाश से चमक उठीं। यह अत्यन्त तीव्र प्रकाश लगभग दो सेकंड तक रहा और फिर कम होने लगा। परीक्षण के फलस्वरूप जो प्रकाश उत्पन्न हुआ था, उसे अनेक किलोमीटर दूर एक नेत्रहीन लड़की ने देख लिया था। अमरीकी सेना के वरिष्ठ सेनापति जनरल फ़ैरल इस विस्फोट का वर्णन करते कहते हैं, “पूरा प्रदेश दोपहर के सूर्य के प्रकाश के कई गुना प्रकाश से चमक उठा। यह प्रकाश सुनहरे, बादामी, बैंगनी, भूरे तथा नीले रंगों का मिश्रण था। उससे पर्वत श्रृंखला तथा उनकी चोटियां चमक उठीं। तीस सेकंड पश्चात् वायु का तीव्र झोंका आया। उसके तुरन्त पश्चात् बहुत तीव्र घड़घड़ाहट हुई और प्रलय की सी स्थिति उत्पन्न हो गई। तत्पश्चात् एक विशाल कुकुरमुत्ता की भांति बादल का एक गुबार ऊपर आकाश की ओर उठा। इस विस्फोट ने महस्थल में लगभग आधे मील व्यास का गड्ढा बना दिया और घरातल की बालू पिघल गई।”

अनेक उपकरण और कैमरे जो विकिरण को मापने के लिए लगाये गये थे बेकार हो गये। इस्पात स्तम्भ तो ऐसा गायब हुआ जैसे कि वह था ही नहीं।

इस सफल परीक्षण को गोपनीय रखा गया। किन्तु चूंकि प्रकाश और घड़-घड़ाहट 150 मील तक देखी और सुनी गई थी, अतः समाचारपत्रों को बतलाया गया कि सेना के आयुध आगार में आग लग गई थी।

इस प्रकार केवल कुछ व्यक्तियों की जान में परमाणु युग का जन्म हुआ।



## परमाणु बम प्रहार

अप्रैल 1945 ई० में अमरीकी सरकार को विश्वास हो गया था कि परमाणु बम शीघ्र ही उसके हाथ में आ जाएगा। यह भी निश्चित था कि नवीन आयुध सबसे अधिक विनाशकारी आयुध सिद्ध होगा।

इस बीच 12 अप्रैल, 1945 ई० को अमरीकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट की मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद राष्ट्रपति ट्रूमैन ने पद ग्रहण किया। राष्ट्रपति ट्रूमैन ने शीघ्र युद्ध समाप्त करने की नीति अपनाई।

1 जून, 1945 ई० को प्रमुख वैज्ञानिकों (फरमी, ओपेन हाइमर, क्राम्पटन तथा लारेंस) सेना और अमरीकी शासन के वरिष्ठ अधिकारियों की सम्मिलित बैठक ने शीघ्र विजय के लिए परमाणु बम के उपयोग का सुझाव दिया। इस संबंध में यह बात ध्यान देने योग्य है कि यूरोप में युद्ध समाप्त हो चुका था और जापान एशिया में लगातार पराजित होता जा रहा था।

तथापि अनेक प्रमुख वैज्ञानिक परमाणु बम के उपयोग के पक्ष में न थे। सबसे अधिक विरोध तो उस वैज्ञानिक ने किया जिसने राष्ट्रपति रूजवेल्ट को परमाणु बम निर्माण पर सबसे पहले चेतावनी दी थी। उपरोक्त वैज्ञानिक स्जीलार्ड ने एक प्रतिवेदन अमरीकी राष्ट्रपति को दिया। इस प्रतिवेदन में परमाणु बम के उपयोग के सम्भावित परिणामों, अमरीका तथा रूस के संबंधों तथा परमाणु आयुधों के निर्माण में विभिन्न राष्ट्रों में होड़ की भविष्यवाणी की गई थी। (स्जीलार्ड की अनेक भविष्यवाणियां सही साबित हुईं।)

उपर्युक्त भविष्यवाणियों के अतिरिक्त स्जीलार्ड ने सुझाव दिया कि परमाणु बम निर्माण, परमाणु ऊर्जा के उपयोग इत्यादि पर अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण रखा जाये और यदि यह संभव न हो तो सब राष्ट्र स्वेच्छा से यूरेनियम के उपयोग को समाप्त कर दें।

एक अन्य वैज्ञानिक जेम्स फेंक ने सुझाव दिया कि परमाणु बम की शक्ति का प्रदर्शन सब मित्र राष्ट्रों के प्रतिनिधियों के समक्ष किया जाये तथा इस बम



के द्वारा सम्भावित विनाश का अत्यधिक प्रचार किया जाये।

किन्तु इन सब प्रतिवेदनों और सुझावों का कोई प्रभाव अमरीकी शासन पर न पड़ा और परमाणु बम के प्रयोग का निश्चय कर लिया गया। इस निश्चय को 28 जुलाई, 1945 ई० के जापान के बिना शर्त आत्मसमर्पण न करने की घोषणा ने और दृढ़ कर दिया।

6 अगस्त, 1945 ई० को एक अमरीकी बम वर्षक विमान जापान के हिरोशिमा नगर पर उड़ा और उसने एक चांदी-सी चमकीली वस्तु गिराई। यह चांदी-सी चमकीली वस्तु परमाणु बम था।

परमाणु बम के विस्फोट होते ही उसके चारों ओर की वायु, अत्यन्त अधिक दाब तथा ताप के कारण, सैकड़ों मील प्रति घंटे के वेग से सब ओर बिखर गई। इस तीव्र वेगवान वायु के साथ-साथ आग की भी बड़ी लहरें उठीं। इस आग की लपटों ने बहुत कुछ भस्म कर दिया। इसके पश्चात् रेडियधर्मी विकिरणों ने अपना दुष्प्रभाव दिखलाया जिसके प्रभाव अभी तक शेष हैं।

इस परमाणु बम से लगभग 78,000 व्यक्ति मरे और 37,000 व्यक्ति घायल हुए। लगभग 4 वर्ग मील का क्षेत्र पूरी तरह से नष्ट हो गया तथा नगर के 70 प्रतिशत भवन इत्यादि पूरी तरह से नष्ट हो गये।

प्रथम प्रहार के चौथे दिन 9 अगस्त 1945 ई० को दूसरा शेष परमाणु बम जापान के नागासाकी नगर पर गिराया गया। किन्तु प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण इस बम से प्रथम बम के अपेक्षाकृत कम हानि हुई फिर भी लगभग 23,000 व्यक्ति मरे और लगभग इतने ही घायल हुए। अनुमानतः 40 प्रतिशत इमारतें नष्ट हो गईं।

इस प्रकार मानव-इतिहास में प्रथम बार परिवर्तन हिंसा और विनाश के साथ हुआ। इस विनाश से दुःखी होकर लाइज माइटनर ने कहा, "मैं उस दिन को अपने जीवन का सबसे बुरा दिन समझता हूँ जिस दिन मैंने बिस्मण्डन खोजा था।"



## 11

## परमाणु आयुधों में होड़

जापान पर अमरीकी परमाणु बम प्रहार ने द्वितीय महायुद्ध का अंत कर दिया। किन्तु मित्र राष्ट्रों के दो प्रमुख राष्ट्रों अमरीका और रूस में परमाणु बम प्रहार के कारण खिचाव उत्पन्न हो गया। परमाणु बम प्रहार के पूर्व अमरीका और रूस ने निश्चय किया था कि सोवियत रूस जापान से युद्ध की घोषणा करेगा। इस निश्चय के फलस्वरूप रूस ने जापान से युद्ध घोषित किया। उस समय पूर्वी यूरोप में रूस सबसे अधिक शक्तिशाली राज्य था और उसका विश्वास था कि वह जापान को पराजित कर अपने आधीन कर लेगा। किन्तु परमाणु बम प्रहार ने जापान की रीढ़ तोड़ दी और जापान पर अमरीका का आधिपत्य हो गया। इस प्रकार अमरीका ने रूस को परमाणु बम बनाने के मामले में पछाड़ दिया।

द्वितीय महायुद्ध के पूर्व भी रूस तथा शेष मित्र राष्ट्रों में आपस में तनाव था। सम्भवतः इसका मुख्य कारण मित्र राष्ट्रों और रूस की शासन पद्धतियों तथा राजनैतिक विचारधारा में अंतर था।

किन्तु द्वितीय महायुद्ध ने ऐसे विरोधी राजनैतिक विचारधारा के राष्ट्रों को भी एक जुट कर दिया था क्योंकि उस समय आत्मरक्षा ही महत्त्वपूर्ण थी। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर पुराने अविश्वास और भगड़े फिर उभरकर सामने आ गये। धीरे-धीरे सोवियत रूस और शेष मित्र राष्ट्र विशेषकर अमरीका एक दूसरे से दूर होते गये। इसके साथ ही विश्व के अन्य अनेक राष्ट्र भी दो गुटों में विभाजित हो गये, जिनमें एक का नेता अमरीका तथा दूसरे का रूस था। इन दोनों गुटों ने युद्ध की तैयारी आरम्भ कर दी। इस प्रकार 'शीत युद्ध' आरम्भ हो गये।

युद्ध की समाप्ति के पश्चात् अमरीकी सरकार ने घोषणा की कि वह परमाणु बम संबंधी सब खोजों तथा कार्यों को गुप्त रखेगी। इस निश्चय ने जहां एक ओर सोवियत रूस के अविश्वास में वृद्धि की, वहां दूसरी ओर शेष मित्र



राष्ट्रों विशेषकर ब्रिटेन और फ्रांस को भी शंकित कर दिया।

अमरीका का परमाणु बम सम्बन्धी ज्ञान अधिक दिनों तक सुरक्षित न रहा। नवम्बर 1947 ई० में सोवियत रूस के तत्कालीन विदेश मंत्री मोलोटोव ने घोषणा की कि सोवियत रूस ने परमाणु बम निर्माण के आवश्यक सिद्धान्त ज्ञात कर लिये हैं। अगस्त 1949 ई० में प्रथम रूसी परमाणु बम का विस्फोट हुआ। महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि इस बम में प्लूटोनियम का उपयोग किया गया था। प्लूटोनियम का उत्पादन, यूरेनियम-235 के अलग करने से अधिक कठिन और जटिल है।

सोवियत परमाणु बम विस्फोट ने अमरीका के दुविधा उत्पन्न कर दी। अमरीका का विश्वास था कि वह परमाणु ऊर्जा के विषय में रूस से दस एक वर्ष आगे है, किन्तु यह विश्वास टूट गया। इस सबकी प्रतिक्रियास्वरूप अमरीका ने जनवरी 1950 ई० में एक नवीन प्रकार के परमाणु आयुध 'हाइड्रोजन बम' के निर्माण के लिए प्रयास करने का निश्चय किया।

हाइड्रोजन बम की कल्पना सन् 1943 ई० में लॉस एल्मास में की गई थी। यदि ड्यूटेरियम के दो नाभिकों को एक दूसरे में संगलित कर दिया जाये तो या तो हीलियम-3 बनेगा और एक न्यूट्रॉन विकिरित होगा या ट्रिटियम (हाइड्रोजन-3) बनेगा और एक प्रोटॉन विकिरित होगा। इन दोनों ही परिस्थितियों में अत्यधिक ऊर्जा उत्पन्न होगी। इन्हीं क्रियाओं से सूर्य और तारे ऊर्जा का विकिरण करते हैं। (सूर्य के अंदर वाले भाग का तापक्रम लगभग 200 लाख डिग्री सेंटीग्रेड होता है। इस भाग में स्थित हाइड्रोजन लगातार हीलियम में बदलता रहता है। इस क्रिया को ताप-नाभिकीय क्रिया कहते हैं। ताप-नाभिकीय क्रिया का एक गुण यह है कि यदि एक बार यह क्रिया आरम्भ हो जाये तो उत्पन्न ऊर्जा प्रारम्भिक तापक्रम को बनाए रखेगी और यह क्रिया तब तक चलती रहेगी जब तक हाइड्रोजन ईंधन रहेगा।

प्रारम्भ में तो अनेक वैज्ञानिकों ने इस ताप-नाभिकीय बम के निर्माण की व्यावहारिकता पर संदेह किया किन्तु भौतिकविद एडवर्ड टेलर ने सिद्ध कर दिया कि हाइड्रोजन बम का निर्माण सम्भव है। नवम्बर 1952 ई० में प्रथम अमरीकी हाइड्रोजन बम का सफल परीक्षण किया गया।

अगस्त 1953 ई० में सोवियत रूस ने भी हाइड्रोजन बम का सफल परीक्षण किया। इस परीक्षण ने जहाँ एक ओर सोवियत रूस को सामरिक शक्ति प्रदान की तो दूसरी ओर विज्ञान जगत में भी प्रतिष्ठा दी क्योंकि यह बम अमरीकी बम से भिन्न था।

अमरीकी हाइड्रोजन बम में ट्रिटियम का उपयोग किया गया था जबकि रूसी बम में लीथियम-6 और ड्यूटेरियम का उपयोग किया गया था। रूसी बम



## 42 / परमाणु और मानव

अमरीकी बम से सस्ता था। लगभग 7 मास पश्चात् अमरीका भी रूसी हाइड्रोजन बम के समान बम बना सका। यह बम जापान पर फेंके गये परमाणु बम से एक हजार गुना अधिक शक्तिशाली था। इस बम की विस्फोटन सामर्थ्य 140 लाख टी० एन० टी० थी।

इस बम विस्फोट से उत्पन्न रेडियधर्मी विकिरणों के कारण विस्फोट स्थान से लगभग 100 मील दूर कुछ जापानी मछुए हताहत हुए थे। इस दुर्घटना ने विश्व की जनता की आंखें खोल दीं और इस प्रकार के विस्फोटों को समाप्त करने की जोरदार मांग होने लगी।

परमाणु आयुधों के निर्माण में जो होड़ सन् 1949 ई० में शुरू हुई उसका अंत होना अभी भी शेष है। परमाणु बम निर्माण की इस प्रतिस्पर्धा में क्रमशः ब्रिटेन, फ्रांस और चीन भी सम्मिलित हो गये, अन्य अनेक राष्ट्र सम्मिलित होने को हैं।

### परमाणु और शांति

नवम्बर 1949 ई० में सर्वप्रथम राष्ट्र संघ में सोवियत दूत विशंस्की ने घोषणा की कि रूस ने परमाणु बम का निर्माण तो कर लिया है किन्तु वह परमाणु ऊर्जा का उपयोग विद्युत शक्ति उत्पादन, पर्वतों को तोड़ने तथा नदियों के मार्ग बदलने और मरुस्थलों की सिंचाई के लिए करेगा।

उपयुक्त घोषणा परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों की ओर प्रयास थी। अपनी घोषणा के अनुरूप सोवियत रूस ने परमाणु विद्युत उत्पन्न करने के लिए प्रयत्न प्रारंभ कर दिये।

इस घोषणा के चार वर्ष बाद दिसम्बर 1953 ई० में अमरीकी राष्ट्रपति आइजन हॉवर ने संयुक्त राष्ट्र संघ में 'शांति के लिए परमाणु' नामक महत्त्वपूर्ण वक्तव्य दिया। उस समय तक यह सर्वविदित तथ्य था कि बड़े राष्ट्र (रूस, अमरीका और ब्रिटेन) परमाणु आयुधों के निर्माण में रत हैं। सोवियत रूस, जिसने परमाणु ऊर्जा का उपयोग शांतिपूर्ण कार्यों के लिए करने की घोषणा की थी, भी परमाणु आयुध बना रहा था।

इस वक्तव्य में राष्ट्रपति हॉवर ने प्रस्ताव किया कि परमाणु अस्त्रों का निर्माण करने वाले राष्ट्र कुछ विखण्डनीय पदार्थ को एकत्र करें तथा अन्य राष्ट्रों को शांतिपूर्ण उपयोगों के लिए दें। उनका विश्वास था कि वैज्ञानिक इंजीनियरों तथा तकनीशियनों के हाथ में यह पदार्थ वैज्ञानिक अनुसंधान, रोग निदान, और कृषि की सहायता करेगा।

अपने वक्तव्य के अंत में उन्होंने कहा कि संयुक्त राज्य अमरीका आपको और इस प्रकार से विश्व को वचन देता है कि वह ऐसे मार्ग खोजेगा जिससे मानव



की आश्चर्यजनक खोज की प्रवृत्ति उसकी मौत का कारण न बने वरन् जीवन प्रदान करे।

अमरीकी राष्ट्रपति के इस वक्तव्य ने प्रथम बार विश्व की जनता के सामने परमाणु ऊर्जा का सुन्दर रूप प्रस्तुत किया। इस वक्तव्य ने परमाणु ऊर्जा के बारे में सामान्य जनता के इस भ्रम का निवारण कर दिया कि परमाणु ऊर्जा केवल विनाश कर सकती है। उस समय केवल कुछ वैज्ञानिकों को छोड़ शेष लोग यह नहीं जानते थे कि परमाणु ऊर्जा का उपयोग विद्युत तथा ताप उत्पन्न करने, जलयानों और बर्फ तोड़ने वाले जहाजों को चलाने के लिए भी किया जा सकता है।

रेडियो आइसोटोपों का उपयोग अनेक क्षेत्रों में गत कई वर्षों से तो हो रहा है लेकिन कुछ ही व्यक्ति यह जानते थे कि इनका निर्माण परमाणु भट्टी में होता है (परमाणु भट्टी परमाणु पुंज का परिष्कृत रूप है)।

रेडियो आइसोटोपों के अनेक उपयोग सामने आए हैं तथा संभवतः विज्ञान, उद्योग, कृषि तथा स्वास्थ्य की ऐसी कोई शाखा नहीं है जिसमें इसका उपयोग न किया गया हो।

डॉक्टर इसका उपयोग रोग निदान तथा चिकित्सा के लिए करते हैं। जीववैज्ञानिक मनुष्य के जीवन संबंधी विषयों पर खोज करने के लिए करते हैं। कृषि के लिए अच्छी खाद, अधिक फसल उत्पन्न करने वाले बीज तथा जानवरों और पौधों की नस्ल सुधारने में भी इनका उपयोग होता है।

उद्योग में भी रेडियो समस्याओं के अनगिनत उपयोग हैं। इंजनों के विभिन्न भागों के क्षय की गति ज्ञात करने के लिए भी उपयोग होता है। धातु की मोटाई ज्ञात करने, तेल के कुओं और उनके नलों में खराबी ज्ञात करने, खाद्य पदार्थों को नष्ट होने से बचाने के लिए किया जाता है।

इन सब उपयोगों से यह बात साफ थी कि यदि योजना के अनुरूप खण्डनीय पदार्थों का उपयोग शांतिपूर्ण उपयोगों के लिए किया जाये तो परमाणु शस्त्रों का निर्माण तो अधिक न होगा किन्तु मानव जाति स्वस्थ एवं सुन्दर जीवन व्यतीत कर सकेगी।



## भारत में परमाणु ऊर्जा का आरम्भ

भारत में परमाणु ऊर्जा के कार्य को आरम्भ करने का श्रेय डॉ० होमी जहाँगीर भाभा को है। इस महान वैज्ञानिक को परमाणु बम-विस्फोट के पूर्व ही आभास हो गया था कि परमाणु ऊर्जा के अनेक शांतिपूर्ण उपयोग होंगे तथा उससे विद्युत उत्पादन भी सम्भव हो सकेगा।

अपनी कल्पनाओं तथा विचारों को साकार रूप देने के लिए उन्होंने एक वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान की स्थापना करने का अनुरोध सर दोराब टाटा ट्रस्ट से किया। अपने अनुरोध पत्र में संस्थान के प्रस्तावित कार्यों की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि “कालान्तर में मैं इस भ्रूण से एक ऐसा भौतिक विज्ञान स्कूल विकसित कर लूंगा जिसकी तुलना विश्व के अच्छे स्कूलों से हो सके।”

अपने अनुरोध में उन्होंने आगे कहा, “नाभिकीय ऊर्जा का उपयोग कुछ दशकों में शक्ति (विद्युत) उत्पादन के लिए होगा तो भारत को विदेशी विशेषज्ञों का मुंह न ताकना पड़ेगा वरन् उसे विशेषज्ञ भारत में ही मिल जाएंगे।”

इस अनुरोध के फलस्वरूप सन् 1945 ई० में टाटा आधारभूत अनुसंधान केन्द्र (टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च) की स्थापना की गई। अनुसंधान केन्द्र पेडर रोड, बम्बई में स्थित उस बंगले में स्थापित किया गया जहाँ डॉ० भाभा का जन्म हुआ था। इस संस्थान में डॉ० भाभा के नेतृत्व में परमाणु ऊर्जा और उससे सम्बन्धित विषयों पर अनुसंधान अध्ययन तथा शिक्षण आरम्भ किया गया। शीघ्र ही संस्थान डॉ० भाभा की कल्पना के अनुरूप कुछ ही वर्षों में भौतिकविज्ञान तथा गणित में राष्ट्रीय महत्त्व का अनुसंधान तथा शिक्षण केन्द्र बन गया।

सन् 1948 ई० में भारतीय संसद ने भारतीय परमाणु ऊर्जा अधिनियम पारित किया। 10 अगस्त, 1948 ई० को भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना की गई। इस आयोग को मूलतः निम्नलिखित कार्य सौंपे गये :



1. परमाणविक खनिजों को देश में खोजना ।
2. इन खनिजों को औद्योगिक स्तर पर विखण्डनीय पदार्थों तथा ईंधन में परिवर्तित करना ।
3. परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों के लिए वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुसंधान करना ।
4. इन कार्यों को सुचारु रूप से चलवाने के लिए वैज्ञानिकों तथा तकनीकों को प्रशिक्षित करना ।
5. अपनी प्रयोगशालाओं तथा देश के अन्य विश्वविद्यालयों में नाभिकीय भौतिकी में अनुसंधान करवाना तथा उसे बढ़ावा देना ।

यह प्रसन्नता का विषय है कि परमाणु ऊर्जा आयोग अपने कार्यों को भलीभांति कर रहा है ।

### आयोग का प्रारम्भिक कार्य

आयोग को अपने कार्य को वर्तमान स्तर पर लाने के लिए अथक परिश्रम करना पड़ा । प्रारम्भ में भारत में ऐसे वैज्ञानिकों की कमी थी जो कार्य को तेजी से बढ़ा सकते । भारतीय आयोग के पास वह अनुभव भी न था जो अन्य देशों के आयोगों के पास युद्ध के लिए गये प्रयासों के फलस्वरूप था । इसके अतिरिक्त स्वतंत्रता के पूर्व की विदेशी सरकार ने इस ओर न तो कोई प्रयास किया था, न ही कोई प्रोत्साहन दिया था । इस सम्बन्ध में यह बात ध्यान देने की है कि युद्ध में रत ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, इटली, तथा अमरीका ने युद्ध के पूर्व तथा युद्ध काल में परमाणु विखण्डन का उपयोग करने के लिए विशेष प्रयत्न किये थे ।

आयोग ने अपना कार्य व्यवस्थित किन्तु छोटे रूप में आरम्भ किया । भौतिकी तथा इलेक्ट्रॉनिक्स पर अनुसंधान टाटा मूलभूत संस्थान में, जीवन विज्ञान तथा मेडिसिन पर अनुसंधान भारतीय कैंसर अनुसंधान केन्द्र, बम्बई में और रसायन विज्ञान तथा धातु विज्ञान पर अनुसंधान पेडर रोड, बम्बई स्थित एक भवन में किया गया ।

### खनिजों को देश में खोजने का कार्य

कुछ ही समय में अनुसंधान के कार्य को कुछ गति मिल गई । आयोग ने अब अपना ध्यान रेडियधर्मी खनिजों को देश में खोजने तथा प्राप्त करने में लगाया । उस समय तक केवल एक स्रोत—केरल का समुद्र तट ज्ञात था । अनेक व्यक्तिगत कम्पनियां इससे इलमेनाइट तथा मोनोजाइट इत्यादि प्राप्त कर निर्यात कर रही थीं । आयोग के सुझाव पर भारत सरकार ने इस उपयोग पर प्रतिबंध लगा दिया तथा भारतीय विरल मृद धातु लि० की स्थापना की । इस



## 46 / परमाणु और मानव

कम्पनी ने आलवाए में एक संयंत्र लगाया जिसने मोनोजाइट से विरल मृद धातु का उत्पादन सन् 1952 ई० से आरम्भ किया।

मोनोजाइट से विरल मृद धातु प्राप्त करने के उपरान्त शेष पदार्थ से यूरेनियम फ्लोराइड तथा थोरियम नाइट्रेट प्राप्त करना प्रारम्भ किया गया। थोरियम नाइट्रेट का उपयोग गैस मेटल निर्माण में होता है। ट्राम्बे के उत्पादन से देश की मांग तो पूरी ही हुई विदेशों को निर्यात भी किया गया। यूरेनियम फ्लोराइड से शुद्ध यूरेनियम धातु प्राप्त की गई।

इस भांति धीरे-धीरे परमाणु ऊर्जा आयोग अपने कार्यों को बढ़ाता गया। सन् 1954 ई० में बम्बई में 'एटॉमिक एनर्जी इस्टेब्लिशमेंट' की स्थापना की गई जिसे अब भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के नाम से जाना जाता है। इस केन्द्र का कार्य परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों पर अनुसंधान कर उन्हें व्यावहारिक रूप देना है। अगस्त 1954 ई० में भारत सरकार ने परमाणु ऊर्जा विभाग की स्थापना की जिसके सचिव डॉ० भाभा बनाए गए। इस विभाग के आधीन परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में भारत ने उत्तरोत्तर प्रगति की जिसका वर्णन आप आगे पढ़ेंगे।



## संयुक्त राष्ट्र संघ तथा परमाणु ऊर्जा

जैसा कि हम सबको पहले ज्ञात है कि संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना का मुख्य ध्येय विश्व में शांति बनाए रखना है। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर युद्ध में भाग लेने वाले राष्ट्रों और अन्य राष्ट्रों ने विचार किया कि आपसी झगड़ों और विवादों को सुलझाने के लिए राष्ट्रों की एक ऐसी समिति होनी चाहिए जिसमें उन विवादों का हल बातचीत के माध्यम से ढूंढा जा सके। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना सन् 1945 ई० में हुई।

जापान में परमाणु बम आक्रमण के उपरान्त अमरीकी सरकार ने निश्चय किया कि वह परमाणु बम निर्माण संबंधी खोजों तथा किये गये प्रयत्नों और कार्यों को गुप्त रखेगा जिससे इस दिशा में उसका एकाधिकार बना रहे और सामरिक दृष्टि से सबसे अधिक शक्तिशाली बना रहे। अमरीका को भय था कि परमाणु ऊर्जा का युद्ध के लिए दुरुपयोग अधिक होगा और अनेक प्रकार के आयुध निर्मित किये जायेंगे। लगभग ऐसा ही विचार ब्रिटेन तथा कनाडा का भी था। नवम्बर 1945 ई० में अमरीका कनाडा तथा ब्रिटेन के अधिकारियों ने एक वक्तव्य में कहा कि परमाणु ऊर्जा संबंधी सब खोजें वे तब तक गुप्त रखेंगे जब तक परमाणु ऊर्जा के दुरुपयोग पर प्रभावकारी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबन्ध न लग जाए।

इस वक्तव्य के अंत में अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना का अनुसंधान करते हुए उन्होंने कहा कि ऐसे आयोग की शीघ्र स्थापना की जाये जो इस समस्या पर विचार कर प्रभावकारी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबंध के विषय में सर्वमान्य प्रस्ताव संयुक्त राष्ट्र संघ के समक्ष रखे।

जनवरी 1946 ई० के प्रारंभ में अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस, कनाडा, चीन तथा रूस ने अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना का प्रस्ताव राष्ट्र संघ की महासभा में रखा। यह प्रस्ताव 24 जनवरी, 1945 ई० को सर्वसम्मति से स्वीकृत



## 48 / परमाणु और मानव

हुआ। इस प्रस्ताव के अनुसार इस आयोग के सदस्य सुरक्षा परिषद के सदस्य तथा कनाडा हो सकते थे।

इस आयोग का कार्यकाल दो वर्ष रहा। इस समय में आयोग की लगभग 200 बैठकें हुईं जिनमें विभिन्न प्रस्ताव रखे गये किन्तु किसी भी प्रस्ताव पर अमरीकी और सोवियत गुट एकमत न हो सके। अमरीका अपनी परमाणु-शक्ति को अधुण्ण रखते हुए पूरे विश्व की परमाणु-शक्ति को आयोग को सौंप देना चाहता था जबकि रूस चाहता था कि पहले अमरीकी परमाणु बमों को नष्ट कर दिया जाये। रूस को अमरीकी परमाणु आयुधों से भय था और अमरीका सर्व शक्ति-शाली बना रहना चाहता था।

तथापि यह सर्वमान्य है कि संसार के बड़े राष्ट्रों ने उस अनमोल अवसर को खो दिया जबकि परमाणु आयुधों पर पूर्ण नियंत्रण हो सकता था। उस समय केवल अमरीका के पास कुछ परमाणु आयुध थे जबकि अब अनेक राष्ट्रों के पास अनेक भांति-भांति के परमाणु आयुध हैं।

इस आयोग के कार्य समापन से लेकर दिसम्बर 1953 ई० के अमरीकी राष्ट्र-पति आइजन हॉवर के शांति के लिए परमाणु नामक वक्तव्य तक कोई विशेष कार्य संयुक्त राष्ट्र संघ नहीं कर पाया।

### अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेन्सी की स्थापना

नवम्बर 1954 ई० में राष्ट्र संघ महासभा ने निश्चय किया कि परमाणु ऊर्जा से संबंधित अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सी की स्थापना के लिए प्रयत्न किये जाएं। इसके अतिरिक्त यह भी निश्चय किया गया कि परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों पर एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया जाये। इस कार्य को राष्ट्र संघ के तत्कालीन महासचिव को सौंपा गया। उनकी सहायता के लिए अमरीका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस, भारत तथा ब्राजील के वैज्ञानिक प्रतिनिधियों की एक समिति भी बनाई गई। इस समिति ने रूस और अमरीकी गुटों के परमाणु-ऊर्जा संबंधों को सुधारने में मदद की।

अगस्त 1955 ई० में परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों पर प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय बैठक हुई। जिनेवा में हुए इस सम्मेलन में लगभग 1400 वैज्ञानिकों तथा अधिकारियों ने भाग लिया। राष्ट्र संघ के सब सदस्य राष्ट्रों ने इस सम्मेलन में भाग लिया। इस सम्मेलन के अध्यक्ष भारतीय प्रतिनिधि डॉ० भाभा थे। यह भारत के लिए गौरव की बात थी। भारत प्रारम्भ से ही परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों के पक्ष में था। अतः उस देश के प्रतिनिधि को सम्मेलन का अध्यक्ष बनाए जाने में उसकी शांतिपूर्ण नीतियों को विश्व का विश्वास



अपने उद्घाटन भाषण में परमाणु ऊर्जा के महत्त्व की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा, “विकासशील राष्ट्रों के उद्योगीकरण के लिए और वर्तमान सभ्यता को बनाए रखने और उसके विकास के लिए परमाणु ऊर्जा केवल सहायक ही नहीं है, वरन् अत्यन्त आवश्यक है।”

ताप नाभिकीय ऊर्जा की खोज की भविष्यवाणी करते हुए डा० भाभा ने घोषणा की, “मैं भविष्यवाणी करता हूँ कि नियंत्रित संगलन ऊर्जा को अगले दो दशकों में प्राप्त कर लिया जायेगा। जब ऐसा संभव होगा तब विश्व की ऊर्जा-समस्या सदैव के लिए हल हो जायेगी क्योंकि उस समय इतना ईंधन होगा जितना कि समुद्रों में भारी हाइड्रोजन है।”

इस सम्मेलन ने रूस और अमरीकी गुटों के तनाव को कम तो किया ही साथ ही अन्य देशों में हो रहे परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों के संबंध में विस्तृत जानकारी भी दी। अनेक क्षेत्रों में गोपनीयता को समाप्त कर अमूल्य सूचनाएं इस सम्मेलन में दी गईं। परमाणु ऊर्जा पर किसी भी राष्ट्र का एकाधिकार न रह गया था और सूचनाओं के आदान-प्रदान के फलस्वरूप सब देश जान गये थे कि परमाणु ऊर्जा उतनी गोपनीय नहीं है जितना कि वे समझते हैं। लगभग 200 मौलिक पेपर प्रस्तुत किये गये जिनमें विभिन्न सूचनाएं थीं।

दूसरा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन सन् 1958 की गर्मियों में हुआ। यह भी जिनेवा में हुआ था। इसके अध्यक्ष फ्रांस के परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष पेरिन थे। इस सम्मेलन को प्रथम सम्मेलन की भांति अधिक सफलता न मिली, किन्तु विरोधी राष्ट्रों के वैज्ञानिकों के सम्बन्ध इस सम्मेलन में अवश्य सुधरे।



## परमाणु से शक्ति

ऊर्जा का मानव जीवन में अत्यधिक महत्त्व है। मानव जीवन तथा उसकी सब गतिविधियाँ ऊर्जा पर न केवल आधारित हैं, वरन् अधिकांश गतिविधियों का आधार ही ऊर्जा है।

मानव सभ्यता के प्रारम्भिक युग में मनुष्य और जानवरों की मांसल ऊर्जा का उपयोग विभिन्न कार्यों जैसे खेती, वस्तुओं के आदान-प्रदान में तथा वस्त्र उत्पादन में होता था। रासायनिक ऊर्जा अर्थात् लकड़ी का ईंधन की भाँति उपयोग केवल भोजन पकाने के लिए होता था। उस काल में केवल कुछ व्यक्ति ही ऐसे होते थे जो अपने नौकरों (गुलामों इत्यादि) की मांसल ऊर्जा का उपयोग अपनी सुख-सुविधाओं के लिए कर सकते थे। (एक सामान्य व्यक्ति प्रतिदिन 8 घंटे कार्य कर केवल  $\frac{1}{2}$  किलोवाट घंटा ऊर्जा उत्पन्न कर सकता है, जबकि वर्तमान काल में विकसित देशों में 20 किलोवाट घंटा ऊर्जा प्रतिव्यक्ति अर्थात् 40 व्यक्तियों की मांसल ऊर्जा के बराबर ऊर्जा व्यय होती है। एक किलोवाट घंटा ऊर्जा उस ऊर्जा के बराबर है जिसके द्वारा 1000 वाट का विद्युत् बल्ब एक घंटे तक जल सकता है।)

किन्तु औद्योगिक और वैज्ञानिक क्रांति के फलस्वरूप रासायनिक ऊर्जा के व्यय में वृद्धि हुई तथा मांसल ऊर्जा का उपयोग कम होने लगा। जो कार्य मांसल ऊर्जा से होता था, वह धीरे-धीरे मशीनों से होने लगा। मशीनों को चलाने के लिए ऊर्जा आवश्यक है जो कोयले, लकड़ी और तेल से प्राप्त होती है।

औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप ऊर्जा व्यय में वृद्धि भी अद्भुत ढंग से हुई। अनुमान किया जाता है कि ईसा से सन् 1850 ई० तक लगभग 9 Q ऊर्जा व्यय हुई होगी। (एक Q ऊर्जा =  $10^{18}$  ब्रिटिश ताप इकाई। यह ऊर्जा 3,30,000 लाख टन कोयले से प्राप्त होती है।) किन्तु ऊर्जा के व्यय में जो एकाएक उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है, उसके फलस्वरूप सन् 1950 ई० तक 5 Q ऊर्जा व्यय हो चुकी है और वर्तमान दर 10 Q प्रति शताब्दी है।



ऊर्जा-व्यय के साथ-साथ विश्व की जनसंख्या में भी वृद्धि हुई है। प्रतिव्यक्ति ऊर्जा व्यय की दर भी बढ़ती जा रही है। गत 10 वर्षों में यह वृद्धि लगभग 2:2 प्रतिशत थी जबकि आजकल यह 3 प्रतिशत है। यह वृद्धि उस समय है जबकि विश्व के अनेक देश अविकसित हैं। लेकिन जब विकासशील देश विकसित हो जायेंगे तब जो वृद्धि होगी, वह अकल्पनीय है।

विश्व की वर्तमान ऊर्जा व्यय की 80 प्रतिशत ऊर्जा कोयले, तेल और गैस से, 1.5 प्रतिशत ऊर्जा जल विद्युत योजनाओं से, 1 प्रतिशत ऊर्जा मांसल ऊर्जा से तथा शेष ऊर्जा लकड़ी तथा व्यर्थ कृषि पदार्थों से प्राप्त होती है। यदि ऊर्जा व्यय में वृद्धि होती है तो निश्चय ही अधिक कोयले, तेल और गैस का उपयोग होगा। किन्तु इन प्राकृतिक ईंधनों के ज्ञात भंडार इतने अधिक नहीं हैं कि वे बढ़ती हुई मांग को अधिक दिनों तक पूरा कर सकें। कोयले के भंडार कई हजार वर्षों पूर्व प्राकृतिक उथल-पुथल होने में कई हजार वर्ष ले लेंगे। अतः निश्चय ही कोई ऐसा अन्य ऊर्जा स्रोत आवश्यक है जो बढ़ती मांग को पूरा कर सके। अन्यथा ऊर्जा के अभाव में सभ्यता का प्रकाश भी लुप्त हो जाएगा।

गत कुछ वर्षों में पेट्रोल-उत्पादक देशों ने उत्पादन को घटाकर तथा कीमतें बढ़ाकर जो ऊर्जा संकट उत्पन्न किया है, उससे यह बात साफ हो जाती है कि देशों की अर्थव्यवस्था तथा सुरक्षा ऊर्जा पर कितने भयंकर रूप से आधारित है।

ऊर्जा के इस कठिन युग में परमाणु ऊर्जा आशा की किरण के रूप में आई है। अनुमान किया जाता है कि यूरेनियम तथा थोरियम के भंडारों से प्राप्त हो सकने वाली ऊर्जा का मान 1700 Q होगा, जबकि कोयले, तेल और गैस भंडार से केवल 100 Q प्राप्त हो सकती है।

परमाणु ऊर्जा के उपयोग से विकासशील राष्ट्र रहन-सहन के उस स्तर पर पहुँच सकते हैं, जिस पर विकसित देश हैं तथा विकसित देश वर्तमान जीवन स्तर को बनाए रख सकते हैं। स्वयं डा० भाभा के शब्दों में, “विकासशील राष्ट्रों के पूर्ण उद्योगीकरण के लिए तथा वर्तमान सभ्यता को बनाए रखने के लिए परमाणु ऊर्जा न केवल सहायक है वरन् पूर्णतया आवश्यक है।”

इस समय विश्व के अनेक देशों में परमाणविक संयंत्र विद्युत उत्पन्न कर रहे हैं। भारत में तारापुर परमाणु विद्युत घर तथा राजस्थान परमाणु विद्युत घर विद्युत-उत्पादन कर रहे हैं। दो अन्य निर्माणाधीन हैं।

सिद्धांत रूप में परमाणविक विद्युत संयंत्र उन सामान्य विद्युत संयंत्रों से भिन्न नहीं है जिनमें कोयले या तेल का उपयोग होता है। बॉयलर में कोयले को जलाकर ऊष्मा उत्पन्न करते हैं जो पानी को वाष्प में परिवर्तित करती है। वाष्प टरबाइन को चलाती है तथा टरबाइन से जनित्र चलता है। इस चलते हुए



## 52 / परमाणु और मानव

जनित्र से विद्युत उत्पन्न होती है जो ट्रांसफार्मरों तथा पावर लाइनों की सहायता से घरों तथा उद्योगों को प्राप्त होती है।

परमाणविक शक्ति संयंत्र में बॉयलर का स्थान परमाणविक भट्टी ले लेती है किन्तु शेष संयंत्र पूर्व की भांति ही बना रहता है। भट्टी में उत्पन्न ऊष्मा पानी को वाष्प में बदल देती है और शेष प्रक्रिया कोयले या तेलचालित संयंत्रों की भांति ही है। अतः भट्टी वास्तव में बॉयलर है जिसमें कोयले के स्थान पर विखण्डनीय पदार्थों अर्थात् यूरेनियम इत्यादि को जलाया जाता है। इस कारण विखण्डनीय पदार्थों को नाभिकीय ईंधन भी कहते हैं।

फरमी तथा उनके साथियों के द्वारा निर्मित शिकागो परमाणु पुंज (जिसमें प्रथम शृंखलित क्रिया प्राप्त की गई थी) और आज की अति आधुनिक परमाणु भट्टियों के सिद्धांत तथा कार्यविधि में कोई विशेष अंतर नहीं आया है केवल वर्तमान परमाणु भट्टी स्वचालित तथा सुरक्षित और सक्षम है।

### परमाणु भट्टी के मुख्य भाग

परमाणु भट्टी के निम्नलिखित मुख्य भाग होते हैं—

1. ईंधन
2. मंदक
3. शीतलक
4. परावर्तक
5. नियंत्रक छड़ें
6. परिरक्षक

**ईंधन**—ईंधन विखण्डनीय पदार्थ है जिसे न्यूट्रॉन विखंडित कर सकता है। मुख्यतः यूरेनियम-233, यूरेनियम-235 तथा प्लूटोनियम-239 विखंडनीय पदार्थ होते हैं। इन पदार्थों में केवल यूरेनियम-235 प्राकृतिक रूप में प्राप्त है। अन्य सब मानव निर्मित हैं।

**मंदक** : विखण्डनीय पदार्थों के परमाणु कम वेग के न्यूट्रॉनों से शीघ्र तथा पूर्णतया विखंडित होते हैं। अतः विखण्डन से उत्पन्न न्यूट्रॉनों का वेग कम करना आवश्यक है। अतः सिद्धांततः गतिवान न्यूट्रॉनों की मंदक के परमाणुओं से बार-बार टक्कर करवाकर उनका वेग कम करवा दिया जाता है। (मंदक के परमाणुओं का परमाणु भार न्यूट्रॉन के द्रव्यमान के लगभग बराबर होना चाहिए।)

जैसा कि चित्र में दिखाया गया है, ईंधन छड़ 'ए' में विखण्डन होता है। विखण्डन से उत्पन्न न्यूट्रॉन मंदक 'सी' से प्रवाहित होकर ईंधन छड़ 'बी' तक पहुंचते हैं। मंदक में वह विभिन्न परमाणुओं से टकराकर अपना वेग कम कर लेता है। फलस्वरूप ईंधन 'बी' में उपर्युक्त न्यूट्रॉन विखण्डन कर सकता है।



मंदक (1) हल्के परमाणुओं का होना चाहिए, (2) उन्हें न्यूट्रॉनों का कम शोषण करना चाहिए।

**शीतलक :** ईंधन सामान्यतः पतली छड़ों के रूप में होता है। जब शृंखलित क्रिया होती है तो उत्पन्न ऊष्मा से छड़ पिघल सकती है। अतः छड़ को शीतल करना आवश्यक है। शीतलक जल, भारी पानी, गैस, द्रव रूप में, धातु या कार्बनिक द्रव हो सकता है। शीतलक ऐसा होना चाहिए जो अधिक ऊष्मा को सफलतापूर्वक हटा सके और न्यूट्रॉनों का शोषण न करे।

भट्टी का वह भाग, जिसमें ईंधन छड़ें, मंदक तथा शीतलक होता है, क्रोड कहलाता है।

**परावर्तक :** विखण्डन के फलस्वरूप उत्पन्न न्यूट्रॉन ईंधन, मंदक तथा शीतलक में शोषित हो सकते हैं। किन्तु यदि इस प्रकार का शोषण न हो तो न्यूट्रॉन क्रोड को छोड़कर बाहर निकल सकते हैं जो वापस न लौट पायेंगे। इस प्रकार न्यूट्रॉनों की हानि हो जाएगी। अतः प्रयत्न यह किया जाता है कि यह हानि कम से कम हो। इसके लिए हल्के पदार्थों को परावर्तकों की भांति उपयोग करते हैं। इन प्रयुक्त पदार्थों को परावर्तक कहते हैं।

**नियंत्रक छड़ें :** यदि किसी दुर्घटना के कारण विखण्डन क्रिया अनियंत्रित हो जाय तो संभव है कि अत्यधिक ऊष्मा उत्पन्न हो जाये तथा परमाणु भट्टी में विस्फोट हो जाएगा। विखण्डन क्रिया के नियंत्रण के लिए न्यूट्रॉनों का शोषण आवश्यक है। अतः क्रोड में कैडमियम, बोरान या हेफनियम की छड़ें दाखिल कर न्यूट्रॉनों को कम किया जा सकता है।

**परिरक्षक :** हम जानते हैं कि परमाणु भट्टी से भयंकर रेडियधर्मी विकिरण उत्सर्जित होते हैं। इनको रोकने के लिए परमाणु भट्टी के चारों ओर कंक्रीट की दीवार बनाते हैं जिससे ये विकिरण बाहर न निकल सके। इस प्रकार की दीवार को परिरक्षक कहते हैं।

**शृंखलित क्रिया: आरम्भ तथा नियंत्रण**

शृंखलित क्रिया को आरम्भ करने के लिए हवा में स्थित न्यूट्रॉन ही काफी है। किन्तु समस्या शृंखलित क्रिया को आरम्भ करने की नहीं है, बल्कि उसे जीवित रखने तथा आवश्यकतानुसार समाप्त करने की है। शृंखलित क्रिया तब तक जीवित रहेगी जब तक पुनरुत्पादन गुणांक एक न हो जाये। अर्थात् यदि प्रथम श्रेणी में 100 परमाणु विखंडित हों, तो दूसरी श्रेणी में भी केवल 100 परमाणु ही विखंडित हों। यदि अधिक परमाणु खंडित होंगे तो विस्फोट की सम्भावना है तथा कम परमाणुओं के खंडित होने पर शृंखलित क्रिया समाप्त हो जाएगी। यह तब ही सम्भव है जबकि एक परमाणु के टूटने के कारण निकले



## 54 / परमाणु और मानव

न्यूट्रॉन से केवल एक परमाणु ही खंडित हो। जब भट्टी का पुनरुत्पादन गुणांक एक होता है तो भट्टी क्रांतिक कहलाती है।

श्रृंखलित क्रिया को समाप्त करने के लिए पुनरुत्पादन गुणांक को एक से कम होना चाहिए अर्थात् उत्पन्न न्यूट्रॉनों की अपेक्षा शोषित न्यूट्रॉनों की संख्या अधिक होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, यदि परमाणुओं के विखण्डन से 250 न्यूट्रॉन निकलें जिनमें 160 न्यूट्रॉन शोषित हो जायें तो केवल 90 न्यूट्रॉन विखण्डन में प्रयुक्त होंगे। फलस्वरूप केवल 90 परमाणुओं का विखण्डन होगा जबकि पहले 100 परमाणुओं का विखण्डन हुआ था। इस प्रकार क्रिया धीरे-धीरे समाप्त हो जाएगी। न्यूट्रॉनों के शोषण के लिए कैडमियम, बोरान तथा हैफनियम की छड़ें प्रयुक्त की जाती हैं।

## परमाणु भट्टी में क्रिया

परमाणु भट्टी में हो रही क्रिया को उपकरणों और यंत्रों की सहायता से देखा और परखा जा सकता है किन्तु नेत्र नहीं देख सकते हैं। कार्यरत स्वीमिंग पूल परमाणु भट्टी में यूरेनियम छड़ों के पास नीले रंग की चमक अवश्य दिखलाई पड़ती है और शेष क्रियायें अदृश्य होती हैं।

यदि परमाणु भट्टी में यूरेनियम का उपयोग हो रहा है तो निम्नलिखित क्रियायें होंगी :

1. यूरेनियम-235 के परमाणु नाभिक टूटते हैं जिससे ऊष्मा तथा न्यूट्रॉनों का उत्पादन होता है। इनके साथ यूरेनियम-238 के कुछ परमाणु भी टूटते हैं।
2. कुछ यूरेनियम परमाणु नाभिक न्यूट्रॉन का शोषण कर प्लूटोनियम बनाते हैं।
3. विभिन्न प्रकार के रेडियो आइसोटोप उत्पन्न होते हैं जिनमें से कुछ काफी समय तक जीवित रहते हैं और शेष शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।
4. नाभिकीय क्रियाओं के कारण अल्फा, बीटा तथा गामा किरणें, पोजीट्रॉन तथा न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं।

## भारतीय परमाणु भट्टियां

परमाणु ऊर्जा आयोग ने सन् 1955 ई० में अनुसंधान हेतु परमाणु भट्टी लगाने का निश्चय किया। ब्रिटिश वैज्ञानिक सर जॉन काक क्राफ्ट के सुझाव पर स्वीमिंग पूल के आकार-प्रकार वाली परमाणु भट्टी निर्माण हेतु चुनी गई।

ब्रिटिश परमाणु ऊर्जा आयोग ने इस भट्टी के लिए कुछ संबंधित यूरेनियम



छड़ें देने का वचन दिया। यह भी निश्चय किया गया कि भट्टी का निर्माण भारतीय ही करेंगे।

जुलाई 1955 ई० में भारतीय वैज्ञानिकों और इंजीनियरों ने उपर्युक्त भट्टी का नमूना बना लिया। इस नमूने के आधार पर 1000 किलोवाट शक्ति की भट्टी का निर्माण-कार्य आरम्भ किया गया जो लगभग 1 वर्ष में पूरा हो गया।

इस परमाणु भट्टी का मुख्य भाग क्रोड है जो मानव शरीर की भांति भट्टी का दिल है। इस भाग में ईंधन होता है। यह ईंधन संवर्धित यूरेनियम (Enriched Uranium) का बना है। ठोस ईंधन को एल्यूमीनियम या स्टेनलेस स्टील के जैकेट में रखते हैं जिससे यह शीतलक के स्पर्श में न आ पाए, नहीं तो ईंधन का संक्षारण तो होगा ही, साथ ही शीतलक भी रेडियधर्मी हो जायेगा।

भट्टी में जल के अनेक उपयोग हैं। यह मंदक, शीतलक, परिरक्षक तथा परावर्तक की भांति कार्य करता है। जल में विद्यमान हाइड्रोजन परमाणु की संहति न्यूट्रॉन के लगभग समान होती है। अतः न्यूट्रॉन हाइड्रोजन से टकराकर अपना वेग कम कर लेते हैं। परिरक्षण क्रिया में जल, गामा किरणों तथा न्यूट्रॉनों को सोख लेता है। गामा किरणें इलेक्ट्रॉनों से टकराकर अपनी ऊर्जा व्यय करती हैं जिससे नीली चमक उत्पन्न होती है जिसे सेरेनकोव विकिरण कहते हैं। जल में ही क्रोड लटका दिया जाता है जिससे जल शीतलक का भी कार्य करता है।

शृंखलित क्रिया को नियंत्रित करने के लिए स्टेनलेस स्टील की छड़ का उपयोग करते हैं। इस छड़ के अतिरिक्त 3 बोरान कार्बाइड की भी छड़ें हैं जो आवश्यकतानुसार गिराई भी जा सकती हैं।

इस भट्टी का आवश्यक अंग परिचायक यंत्र है। भट्टी-संचालन के समय यह ज्ञात होना चाहिए कि कितने विखण्डन प्रति सेकंड हो रहे हैं। यदि इनकी संख्या पुनरुत्पादन के लिए आवश्यक संख्या से अधिक हो जाती है तो तुरन्त नियंत्रक छड़ों को क्रोड के भीतर कर देते हैं तथा कम हो जाने पर छड़ों को बाहर निकाल लेते हैं। न्यूट्रॉनों की संख्या को न्यूट्रॉन-परिचायक ज्ञात करता है जो गाइगर काउंटर का एक रूप है।

भट्टी के बाहर भी परिचायक यंत्र लगे रहते हैं जो खतरनाक विकिरणों को ज्ञात करते रहते हैं और जैसे ही इन विकिरणों की मात्रा सुरक्षा सीमा के बाहर निकल जाती है तो खतरे की रोशनी हो जाती है और उत्पन्न विकिरणों की सुरक्षा सीमा के अन्दर ले आने का प्रयास किया जाता है।



## 56 / परमाणु और मानव

## क्रांतिकता

30 जुलाई, 1956 को सायंकाल इस भट्टी में ईंधन भरना शुरू किया गया जो प्रातः एक बजे तक चला। इसके पश्चात् प्रथम परीक्षण किया गया। परीक्षण न्यूट्रॉनों की संख्या तो बढ़ी किन्तु क्रांतिकता प्राप्त न हुई। क्रांतिकता प्राप्त करने के लिए ईंधन तथा नियंत्रक छड़ों की स्थिति में परिवर्तन किया गया और 3 अगस्त, 1956 को दूसरा परीक्षण किया गया किन्तु क्रांतिकता प्राप्त न हुई। अन्त में, 4 अगस्त को एक नियंत्रक छड़ को बाहर निकाल लिया गया और फिर परीक्षण किया गया। इस छड़ के हटाने से भट्टी में क्रांतिकता प्राप्त हुई जो एशिया में सर्वप्रथम थी। इस भट्टी को 'अप्सरा' कहा जाने लगा।

## कनाडा-भारत भट्टी

अप्सरा निर्माणकाल में आयोग ने अनुभव किया कि भारत को अधिक ऊर्जा वाली भट्टी की आवश्यकता है जिसमें रेडियो आइसोटोपों का निर्माण सम्भव हो सके तथा अन्य प्रयोग किये जा सकें। कनाडा तथा भारतीय वैज्ञानिकों के सहयोग से इस भट्टी ने 10 जुलाई, 1960 को क्रांतिकता प्राप्त की।

## भट्टी की बनावट

भट्टी का क्रोड एल्यूमीनियम की टंकी में होता है। टंकी का व्यास 2.62 मीटर तथा ऊंचाई 3.30 मीटर है। इसके ऊपर-नीचे दोनों ओर 7.5 सेंटीमीटर मोटी पनालीदार चादर लगी हुई है। पात्र में सब मिलाकर 198 नलियां होती हैं। बीच की नली का व्यास 15 सेंटीमीटर है जिसमें परीक्षण के लिए छड़ें रखी जाती हैं। 6 नलियां 10 सें०मी० व्यास की होती हैं जिनमें परमाणु विद्युत घरों के लिए ईंधन का नमूना निर्मित किया जाता है। शेष 192 नलियां 6 सें०मी० व्यास की होती हैं जिनमें 6 नलियों में बोरान कार्बाइड तथा शेष में प्राकृतिक यूरेनियम की छड़ें होती हैं। इनमें से कुछ छड़ों में रेडियो-आइसोटोप बनाने के लिए पदार्थ रखे जा सकते हैं।

इस भट्टी में मंदक का कार्य भारी पानी करता है। परावर्तक का कार्य ग्रेफाइट करता है। भट्टी में कार्य करने वालों को हानिकारक विकिरणों से बचाने के लिए परिरक्षक की व्यवस्था की गई है। ग्रेफाइट परावर्तक के इर्द-गिर्द ऊष्मा तथा विकिरणों को बाहर न आने देने के लिए ढलवां लोहे की दो चादरें लगवाई गई हैं जिनके बीच में 16 सें०मी० का स्थान खाली है। लोहे की चादरों के चारों ओर 2.5 मीटर मोटी कंक्रीट की दीवार है जो विकिरणों को सुरक्षित सीमा में रखती है। क्रोड के ऊपर भी एल्यूमीनियम-पानी और इस्पात-



पानी के सैंडविच परिरक्षक लगाए गये हैं। इनके बीच भी पानी भरा होता है। इनके ऊपर चार कंक्रीट के कवच हैं। कंक्रीट के नीचे भी एल्यूमीनियम-पानी तथा इस्पात-पानी के परिरक्षक लगे हैं।

### भट्टी का शीतलन

इस भट्टी की कार्यकारी ऊर्जा 40,000 किलोवाट है। इस ऊर्जा का 94% ईंधन छड़ों से आता है। शीतलन के लिए 48,000 गैलन जल प्रतिमिनट ईंधन के सम्पर्क में आता है। यह पानी सोखी गई ऊष्मा को समुद्री जल को दे देता है। इसके उपरान्त इस जल की रेडियो-सक्रियता नष्ट कर फिर शीतलन के लिए भेज देते हैं। आकस्मिक दुर्घटना के लिए जल की एक टंकी भी बनाई गई है जिसमें 85,000 गैलन पानी आता है।

### भट्टी का नियंत्रण

भट्टी में उत्पन्न शक्ति को नियंत्रित करने के लिए भारी पानी (मंदक) के स्तर को ऊपर-नीचे उठाते-गिराते हैं। जब भट्टी में हो रही शृंखलित क्रिया को रोकना होता है तो वोरोन कार्बाइड छड़ों को क्रोड के भीतर गिरा देते हैं तथा भारी पानी की कुछ मात्रा अन्य टंकी में निकाल देते हैं। वोरोन कार्बाइड की छड़ें न्यूट्रानों को शोषित कर पुनरुत्पादन गुणांक को एक से कम कर देती हैं तथा क्रोड में भारी पानी की मात्रा कम होने पर भट्टी का कार्यकारी आकार क्रांतिक आकार से छोटा हो जाता है। यह प्रक्रिया स्वचालित भी है। यदि भट्टी में कोई दोष आ जाए तो स्वतः नियंत्रण हो जाता है।

### व्यर्थ पदार्थ

भट्टी और भट्टी-भवन से जो व्यर्थ पदार्थ निकलते हैं उन्हें वेस्ट डिस्पोजल पम्प हाउस में उन टंकियों में भरा जाता है जो जमीन के अन्दर बनाई गई हैं। यदि वह अधिक हानिकारक नहीं है तो उन्हें समुचित क्रिया के उपरान्त समुद्र में प्रवाहित कर देते हैं अन्यथा उनके दोषों को समाप्त करने के लिए अनेक विभिन्न निदान किये जाते हैं।

### भट्टी में विस्फोट तथा नगर सुरक्षा

उपर्युक्त भट्टी बम्बई महानगर में है अतः यह भी प्रयत्न किया गया कि यदि कोई दुर्घटना हो जाए और भट्टी में विस्फोट हो जाए तो भी रेडियो सक्रिय पदार्थ और विकिरण बम्बई नगर या भट्टी के आसपास के स्थानों पर न पहुंचे।



## 58 / परमाणु और मानव

अतः भट्टी को इस्पात के सुदृढ़ मण्डल में बंद कर दिया गया है। इस मंडल का व्यास 36 मीटर तथा ऊंचाई 4 मीटर है। इस इस्पात मंडल को रोटुंडा कहते हैं। इसमें दो प्रवेशद्वार हैं। प्रथम कार्य करने वालों के लिए और दूसरा भारी वाहनों के लिए। ये दोनों द्वार एकसाथ नहीं खुल सकते हैं। रोटुंडा के चारों ओर 9 मीटर चौड़ा कंक्रीट का भवन है जिसमें भट्टी का नियंत्रण कक्ष आदि है।

इस भट्टी का वर्णन अधूरा रह जाएगा यदि इस भट्टी के निर्माण में अपने देशवासियों के कार्यों तथा कर्तव्यनिष्ठा की सराहना न की जाए। वैसे तो इसके अनेकानेक उदाहरण हैं किन्तु मैं केवल एक उदाहरण देकर अपनी बात को समाप्त करूंगा। मैं पहले ही लिख चुका हूँ कि कनाडा-भारत समझौते के अनुसार भट्टी के ईंधन की व्यवस्था भी कनाडा को करनी थी किन्तु भारत ने स्वयं भट्टी के पूरा होने के पहले ही ईंधन छड़ों का निर्माण कर लिया था। इन छड़ों का परीक्षण कनाडा में किया गया है जहाँ वे अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुईं। इन छड़ों की उपयोगिता से चकित होकर कनाडा ने भारत से पूछा कि क्या वास्तव में इन छड़ों का निर्माण भारत में हुआ था! इन छड़ों की रासायनिक रचना तथा ऊष्मा उपचार के बारे में भी पूछताछ की गई क्योंकि ताप-वृद्धि के फलस्वरूप भारतीय छड़ें कनाडा की छड़ों की अपेक्षा अत्यन्त कम बढ़ती थीं।

## जरलीना परमाणु भट्टी

भारत की तृतीय परमाणु भट्टी 'जरलीना' है। इसका डिजाइन तथा निर्माण पूर्णतया भारतीय है। सन् 1959 ई० में इसका निर्माणकार्य प्रारम्भ हुआ तथा 14 जनवरी, 1961 को इसने क्रांतिकता प्राप्त की। यह न्यूनतम शक्ति वाली भट्टी है अतः इसे शून्य ऊर्जा भट्टी भी कहते हैं। यह भट्टी केवल प्रयोगों के लिए ही उपयोग में लाई जाती है।

इस परमाणु भट्टी का क्रोड परिवर्तित किया जा सकता है। इस गुण के कारण यह भट्टी अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुई। यह भट्टी भी भाभा संस्थान, बम्बई में है।

## सस्ती परमाणु-शक्ति

परमाणु भट्टियों के वर्णन से आपको भट्टी की कार्यविधि समझ में आ गई होगी। परमाणु-शक्ति संयंत्रों में निर्मित परमाणु भट्टी यद्यपि सिद्धान्त रूप में उपर्युक्त भट्टियों के समान होती है किन्तु सस्ती परमाणु-शक्ति के लिए निम्न



बातों का ध्यान रखा जाता है :

1. भट्टी के द्वारा उत्पन्न ऊष्मा का पूर्ण उपयोग होता चाहिए। इसके लिए शीतलक का ताप अधिक होता आवश्यक है।
2. केवल उतने न्यूट्रॉन उत्पन्न होने चाहिए जितने शृंखलित क्रिया को बनाए रखने के लिए आवश्यक हों अन्यथा ईंधन शीघ्र समाप्त हो जाएंगे और विद्युत महंगी हो जाएगी।

उपर्युक्त आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निम्न प्रकार की परमाणु भट्टियों का निर्माण किया गया है :

1. पानी को मंदक के रूप में उपयोग करने वाली परमाणु भट्टी—इस भट्टी में शीतल जल या वाष्प को शीतलक तथा मंदक के रूप में उपयोग करते हैं।
2. भारी पानी को मंदक के रूप में प्रयोग करने वाली भट्टी—इसमें भारी पानी, हीलियम, कार्बन डाईऑक्साइड, कार्बनिक अम्ल या सोडियम का शीतलक के रूप में उपयोग किया जाता है। इनमें से सोडियम वास्तव में अच्छा ऊष्मा विनियमक है किन्तु यह नली का संक्षारण शीघ्र करता है।
3. ग्रेफाइट को मंदक के रूप में उपयोग करने वाली परमाणु भट्टी—इस भट्टी में अधिक दाब पर पानी, हीलियम, कार्बन डाईऑक्साइड और सोडियम को शीतलक के रूप में उपयोग करते हैं।
4. मंदक का प्रयोग न करने वाली भट्टी—इस भट्टी में सोडियम को शीतलक के रूप में प्रयोग करते हैं।
5. ऐसी परमाणु भट्टी जिसमें ईंधन द्रव्य रूप में प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ, बिसमथ यूरेनियम द्रव भट्टी।

### प्रत्यक्ष तथा परोक्ष विधि

परमाणु भट्टी के क्रोड में उत्पन्न ऊष्मा का उपयोग वाष्प बनाने के लिए किया जाता है जिससे टरबाइन चलाए जाते हैं। इस विधि को परोक्ष विधि कहते हैं। दूसरी विधि में शीतलक को ही टरबाइन चलाने के लिए उपयोग में लाया जाता है। इस दूसरी विधि को प्रत्यक्ष विधि कहते हैं। परोक्ष विधि, प्रत्यक्ष विधि की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण और लाभकारी है क्योंकि इसमें अनेक प्रकार के शीतलक विभिन्न तापक्रमों पर उपयोग में लाए जा सकते हैं। तथा रेडियधर्मी विकिरणों का प्रभाव जनित्र पर नहीं पड़ता है। प्रत्यक्ष विधि में उच्च ऊष्मीय क्षमता होती है जब से उच्च तापक्रम की वाष्प का विकास हुआ प्रत्यक्ष विधि की उपयोगिता और अधिक बढ़ गई है।

परोक्ष विधि में मुख्य समस्या परमाणु भट्टी से जल या अन्य पदार्थों को



## 60 / परमाणु और मानव

ऊष्मा देने की है। इसकी दो विधियाँ हैं। एक विधि में पानी को परमाणु भट्टी में ही वाष्प में बदल देते हैं, जिसे टरबाइन में प्रवाहित करते हैं। दूसरी विधि में, परमाणु भट्टी में अत्यधिक दाब स्थापित कर, ऐसी व्यवस्था की जाती है कि जल वाष्प में न बदल सके। इस प्रकार की भट्टी को दाब भट्टी कहते हैं। इस जल को बायलर की ताप विनियम नलिकाओं से प्रवाहित किया जाता है। जहाँ पर नलिकाओं के चारों ओर का जल गर्म हो जाता है तथा वाष्प में परिवर्तित हो जाता है। इस वाष्प को अन्य नलिकाओं द्वारा प्रवाहित किया जाता है।

किसी स्थान विशेष को विद्युत की वर्तमान खपत, भविष्य में संभावित खपत, उत्पन्न विद्युत की सस्ती दर को ध्यान में रखकर विभिन्न प्रकार की परमाणु भट्टियों, ईंधनों, मंदकों और शीतलकों में से आवश्यक भट्टी, ईंधन, मंदक तथा शीतलक चुना जाता है। संयंत्र निर्माण में जो अन्य आवश्यक आयाम हैं वे हैं : (1) ताप-विनियम (2) दूषित विकिरणों तथा विस्फोट की संभावना से नगर तथा कार्यकर्त्ताओं की सुरक्षा, (3) व्यर्थ पदार्थों का निष्कासन, और (4) टरबाइन तथा जनित्र।

## प्रथम परमाणु विद्युत संयंत्र

जून, 1954 ई० में विश्व में सर्वप्रथम परमाणु विद्युत घर सोवियत रूस में निर्मित हुआ। इसमें संवर्धित यूरेनियम (Enriched Uranium) का उपयोग होता है। इससे 5,000 किलोवाट विद्युत उत्पन्न होती है।

विश्व का दूसरा परमाणु विद्युत घर काल्डर हाल इंग्लैण्ड में बना। इसने मई, 1956 ई० में विद्युत देना प्रारम्भ किया।

विश्व का तृतीय परमाणु विद्युत घर शिपिंग पोर्ट, पेंसिलवानिया, संयुक्त राज्य अमेरीका में निर्मित हुआ। इसने दिसम्बर, 1957 में विद्युत देना आरम्भ किया। इससे 10,000 किलोवाट विद्युत उत्पन्न होती है। इस विद्युत घर में संवर्धित यूरेनियम तथा जल का उपयोग किया गया है।

विश्व का चतुर्थ परमाणु विद्युत घर फ्रांस में निर्मित हुआ। यह जुलाई, 1958 में क्रांतिक हुआ। इससे 22.5 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त होती है।

आजकल लगभग 260 परमाणु विद्युत घर संसार के अनेक देशों में विद्युत उत्पन्न कर रहे हैं।



## भारत में परमाणु शक्ति

परमाणु ऊर्जा मंत्रालय ने परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों पर विचार हेतु नवंबर 1954 ई० में एक सम्मेलन बुलाया। इसमें देश-विदेश के अनेक प्रमुख वैज्ञानिकों तथा ऊर्जा विशेषज्ञों ने भाग लिया। सम्मेलन में तत्कालीन प्रधान-मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने परमाणु ऊर्जा के संबंध में भारत सरकार की नीति घोषित की। उन्होंने कहा, "जहां तक शांतिपूर्ण उपयोगों का प्रश्न है, हम परमाणु ऊर्जा का उपयोग शक्ति उत्पादन के लिए करना चाहते हैं। शक्ति विकासशील देशों के लिए अत्यंत आवश्यक है।"

इस सम्मेलन में स्व० डा० भाभा ने भारतीय परमाणु विद्युत शक्ति योजना का रेखाचित्र प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि योजना के प्रथम चरण में भारत को प्राकृतिक यूरेनियम परमाणु भट्टियों की स्थापना करनी चाहिए। इससे विद्युत शक्ति और प्लूटोनियम दोनों ही प्राप्त होंगे। दूसरे चरण में ऐसी परमाणु भट्टियों का निर्माण होना चाहिए जिनमें प्लूटोनियम की सहायता से थोरियम को यूरेनियम-233 में परिवर्तित किया जा सके। अंतिम चरण में यूरेनियम-233 थोरियम प्रजनक (ऐसी भट्टियां जो अपना ईंधन स्वयं उत्पन्न करती हों) की स्थापना और विद्युत-उत्पादन।

डा० भाभा के अनुसार, सन् 1970 ई० तक 1000 मेगावाट तथा सन् 1980 ई० तक 3000 मेगावाट विद्युत उत्पन्न करने की योजना थी।

अगस्त, 1958 में योजना आयोग ने तृतीय पंचवर्षीय योजना में एक परमाणु शक्ति संयंत्र निर्मित करने की योजना को स्वीकृति प्रदान की। साथ ही यह भी निश्चय किया गया कि प्रथम विद्युत घर देश के पश्चिमी भाग में निर्मित किया जाए क्योंकि इस भाग में विद्युत की मांग अत्यधिक है तथा दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

अनेक प्रकार की आवश्यकताओं में जल-व्यवस्था, दृढ़ भूमि, अच्छा मौसम, विद्युत शक्ति आदि की प्राप्ति का विशेष ध्यान रखा गया और तारापुर को



## 62 / परमाणु और मानव

चुना गया। तारापुर बंबई से 100 कि० मी० उत्तर में समुद्र तट पर स्थित है।

तारापुर परमाणु विद्युत घर के निर्माण के लिए विदेशों से टेण्डर आमंत्रित किए गए, क्योंकि भारत अन्य राष्ट्रों में हुई प्रगति का उपयोग करना चाहता था। वैसे तो भारत स्वयं इसका निर्माण कर सकता था, किंतु बिना 'प्रोटोटाइप' बनाए ऐसा संभव न था जिसमें अधिक समय लग सकता था।

कनाडा, फ्रांस, अमरीका तथा ब्रिटेन से प्राप्त टेण्डरों में से अमरीकी कंपनी जनरल इलेक्ट्रिक का टेण्डर स्वीकार किया गया। इस कंपनी ने अपने टेण्डर का कुछ भाग विशेषकर भट्टी नियंत्रण प्रक्रिया भाग परमाणु अनुसंधान केंद्र को दे दिया। 8 मई, 1964 ई० को टेण्डर पर वाणिगटन, अमरीका में हस्ताक्षर हो गए। इस टेण्डर के अनुसार, विद्युत घर की क्षमता 400 मेगावाट थी जिसे वह 380 मेगावाट पारेषण लाइनों में भेज सकेगा।

नवंबर, 1962 ई० में यह अनुमान था कि इसके ऊपर 48.5 करोड़ रुपये की लागत आयेगी तथा विद्युत का मूल्य 3.02 पैसा प्रति किलोवाट घंटा होगा। लेकिन वर्तमान अनुमानों के अनुसार कुल लागत 65.20 करोड़ रुपये आयेगी तथा विद्युत का मूल्य 4.73 प्रति यूनिट होगा जो 5.61 पैसे प्रति यूनिट की दर से बिकेगी।

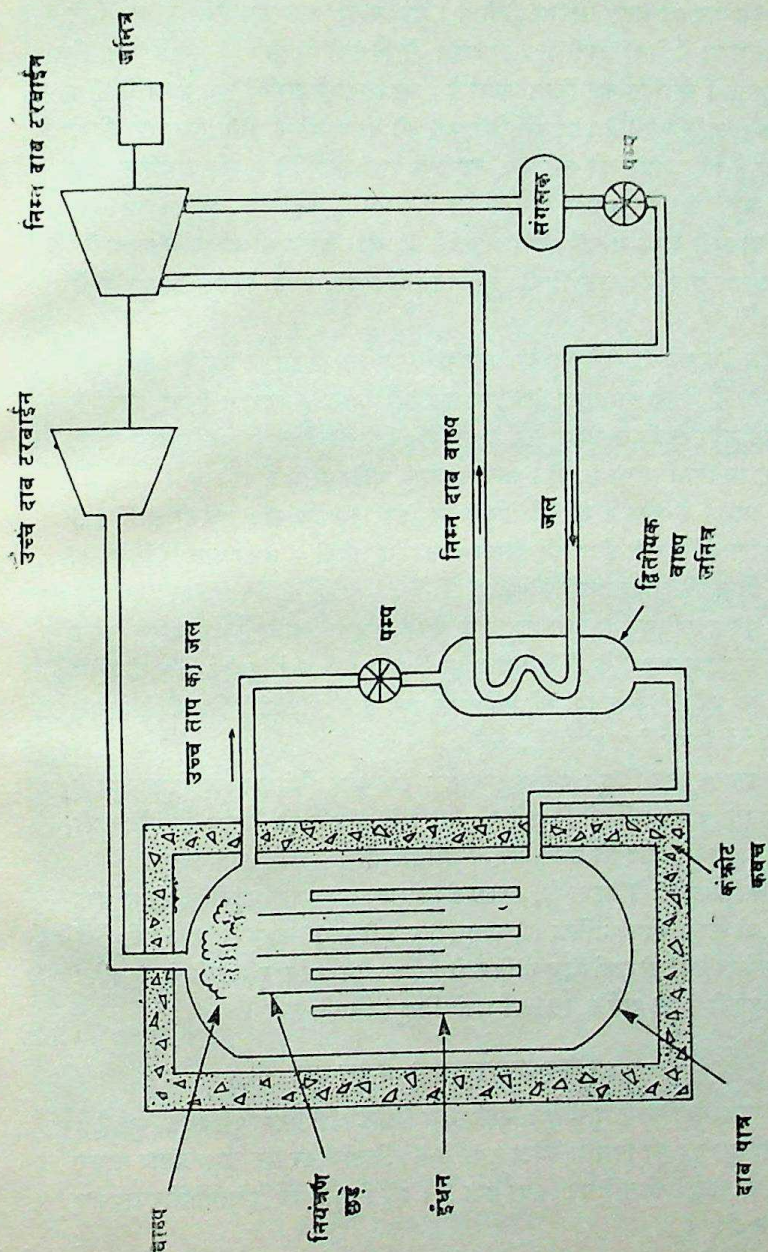
इस योजना का निर्माण-कार्य अक्टूबर, 1964 ई० में आरंभ किया गया तथा यह अनुमान था कि अक्टूबर, 1968 ई० में योजना पूरी हो जाएगी किंतु कुछ कठिनाइयों के कारण पूरी न हो सकी। अब इससे विद्युत मिल रही है।

इस विद्युत घर में संवर्धित यूरेनियम का ईंधन रूप में उपयोग हो रहा है। इस ईंधन पर प्रारंभिक रूप से 17.66 करोड़ रुपये व्यय हुए हैं तथा हर 2.5 वर्ष पश्चात् 1.30 करोड़ रुपये ईंधन-पूर्ति में व्यय होंगे। अभी ईंधन छड़ें अमरीका से ही आती हैं। मंदक के लिए भारी पानी का उपयोग होता है। भारी पानी का उत्पादन नंगल (पंजाब) के रासायनिक खाद कारखाने, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्राम्बे तथा बड़ौदा में होता है।

दो इकाई : इस विद्युत घर में दो इकाइयां हैं। प्रत्येक की क्षमता 200 मेगावाट है। दोनों में एक-एक 'उबलता जल परमाणु भट्टी' है। दोनों भट्टियों के साथ एक-एक 210 मेगावाट का टरबो जनित्र है। 'उबलता जल' भट्टियों में भट्टी के क्रीड में ही जल होता है जो यूरेनियम परमाणुओं के विखण्डन से उत्पन्न ऊष्मा को शोषित कर लेता है। यह जल उबलकर उच्च दाब की वाष्प में परिवर्तित हो जाता है।

उच्च दाब की वाष्प तथा उबलते जल का मिश्रण वाष्प विलगक से प्रवाहित किया जाता है जहां से उच्च दाब की वाष्प, टरबाइन के उच्च दाब सिरे से टरबाइन में भेजी जाती है। उबलता जल वाष्प जनित्र से भेजा जाता है जहां





उबलता जल परमाणु मही, तारापुर



## 64 / परमाणु और मानव

पर कम दाब की वाष्प उत्पन्न होती है। यह वाष्प टरबाइन के कम दाब सिरे से टरबाइन में भेजी जाती है। टरबाइन से निकली वाष्प को समुद्री जल की सहायता से संघनित कर लिया जाता है। इस क्रिया में समुद्री जल वाष्प के सीधे संपर्क में नहीं आती है। इस संघनित जल को दो भागों में विभाजित कर दिया जाता है। एक भाग को गर्म कर, भट्टी में वापस कर देते हैं, यह प्राथमिक चक्र पूरा करती है। दूसरा भाग द्वितीय चक्र में जाता है जहाँ पर जल को गर्म कर, कम दाब की वाष्प में परिवर्तित कर देते हैं जो द्वितीयक जनित्र में जाता है। इस प्रकार प्राथमिक तथा द्वितीयक जनित्र से अलग-अलग विद्युत उत्पन्न होती है।

प्रत्येक भट्टी, जनित्र तथा अन्य यंत्र इस्पात मण्डल में बंद है। ईंधन को भट्टी में भेजने या बाहर निकालने का काम जल के अंदर से किया जाता है जिससे दुर्घटना की संभावना नहीं रहती है। जले हुए ईंधन से प्लूटोनियम प्राप्त किया जायेगा जिसका उपयोग अन्य परमाणु भट्टियों में होगा।

प्रारंभ में क्रोड में भरे गये ईंधन का भार 40 टन था। इस ईंधन को 2.5 वर्षों तक अतिरिक्त ईंधन की आवश्यकता न होगी। तत्पश्चात् प्रतिवर्ष 11 टन ईंधन की आवश्यकता होगी।

परमाणु विद्युत घर का टरबाइन भवन समुद्र की ओर है। टरबाइन भवन और परमाणु भट्टी के बीच सेवा भवन है जहाँ पर व्यर्थ पदार्थ को दोषहीन बनाकर भूमि के नीचे दबा देते हैं। इसके पास 366 फीट ऊंची चिमनी है जिससे व्यर्थ गैसें निष्कासित होती हैं।

इस परमाणु विद्युत घर में इस बात की ओर विशेष ध्यान दिया गया है कि इससे रेडियधर्मी विकिरणों की मात्रा में वृद्धि न हो। साथ ही यदि कभी दुर्घटना हो भी जाए तो उसके प्रभाव सीमित रहें।

**क्रांतिकता :** 1 फरवरी, 1969 ई० को प्रथम परमाणु भट्टी में ईंधन भरा गया जो उसी दिन क्रांतिक हुई। दूसरी भट्टी में 27 फरवरी, 1969 ई० को ईंधन भरा गया जो उसी दिन क्रांतिक हो गई। प्रथम परमाणु भट्टी से 1 अप्रैल तथा दूसरी से 22 अप्रैल, 1969 ई० को विद्युत मिलने लगी।

### राजस्थान परमाणु विद्युत गृह

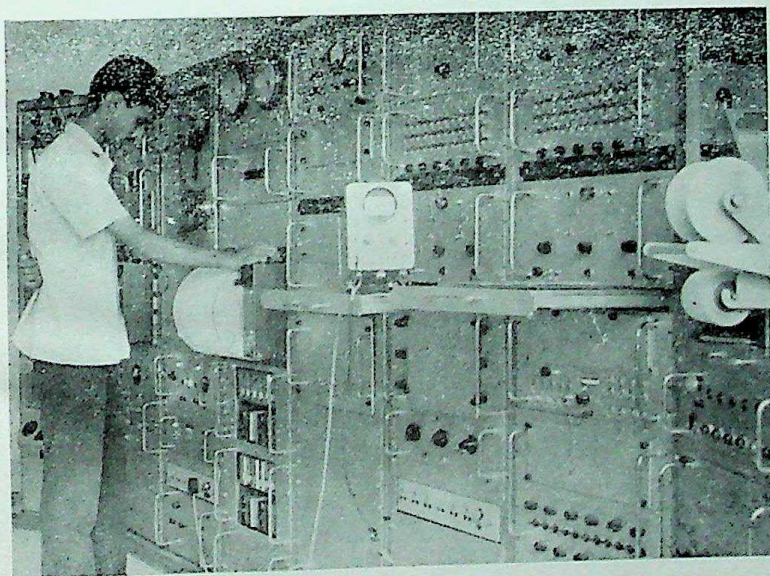
राजस्थान परमाणु विद्युत गृह भारत का दूसरा परमाणु विद्युत गृह है। इस विद्युत गृह का निर्माण कोटा नगर से 64 किलोमीटर दूर राणा प्रताप सागर ताल के दाहिने किनारे पर किया गया है। इस विद्युत घर के चारों ओर लगभग निर्जन क्षेत्र है।

इस विद्युत घर में दो समान एकक हैं। प्रत्येक में 200 मेगावाट विद्युत



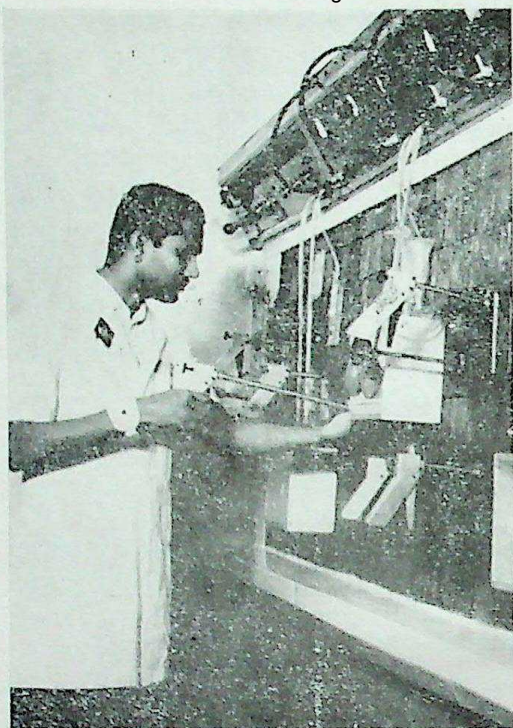


विभिन्न लेवलड यौगिकों का परीक्षण



तापकीय विस्फोटों को ज्ञात करने वाले केंद्र गौरी विदनूर  
(बंगलोर) का आंतरिक दृश्य ।



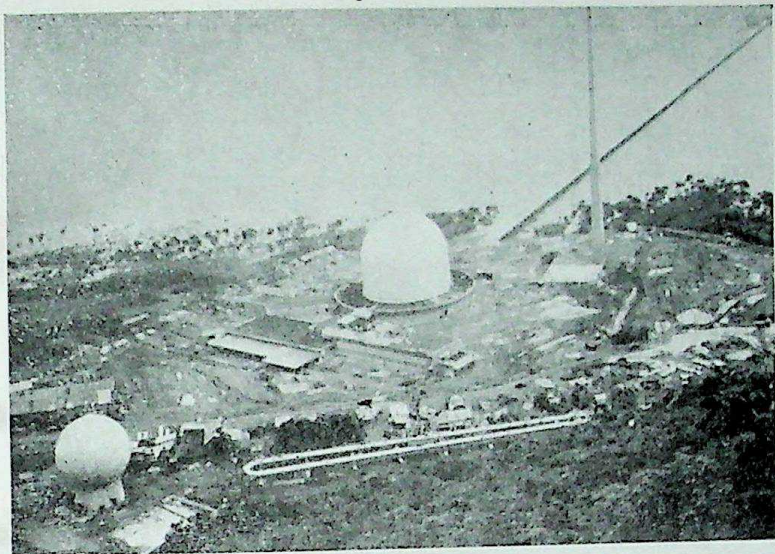


आयोडिन-13 उत्पादन  
संयंत्र

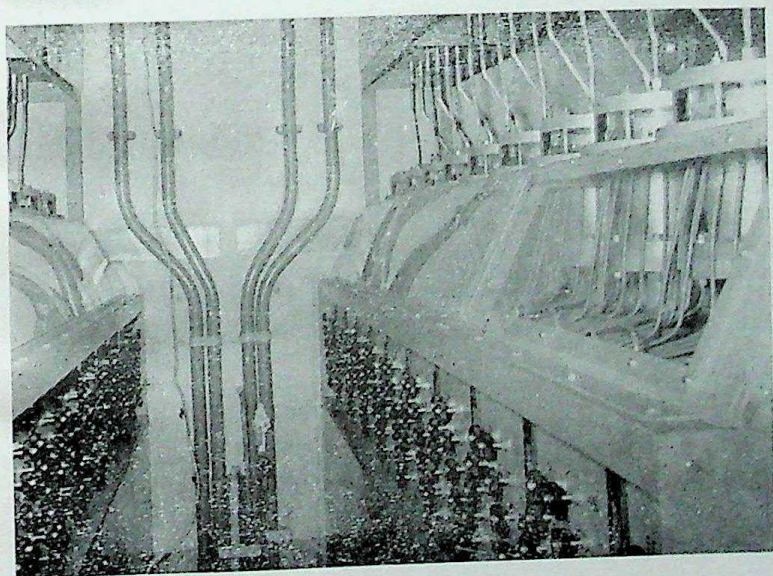
रेडियो एक्टिव फॉस्फोरस  
(लेबलड फॉस्फोरस) को  
सावधानी से उपयोग कर  
रहे वैज्ञानिक





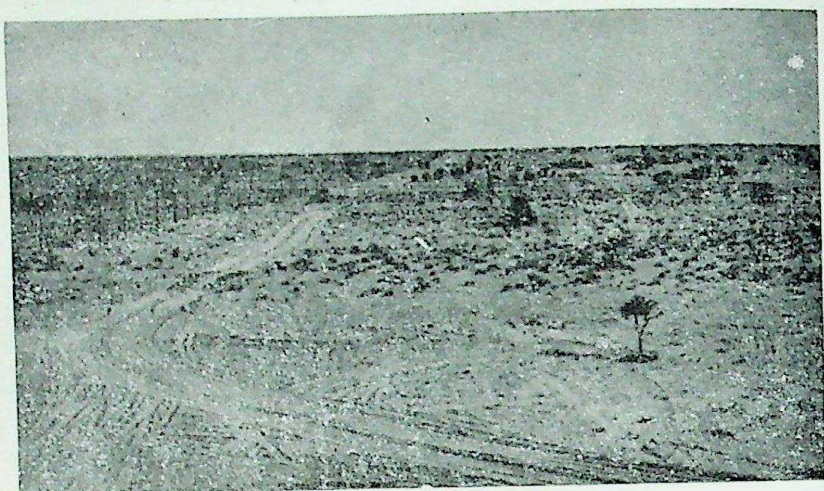


भारत-कनाडा परमाणु भट्टी का विहंगम दृश्य

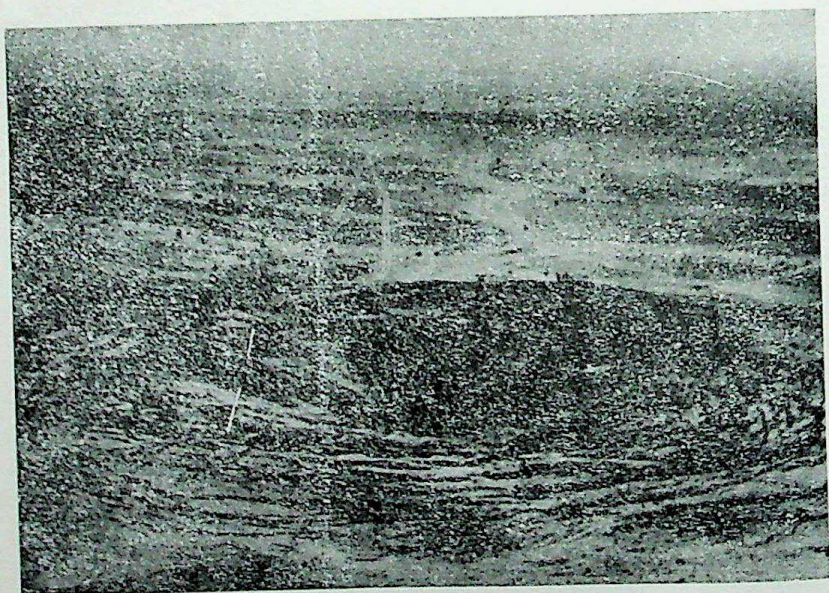


भारत-कनाडा परमाणु भट्टी में विखंडनीय पदार्थ का विसरण  
विधि से उत्पादन



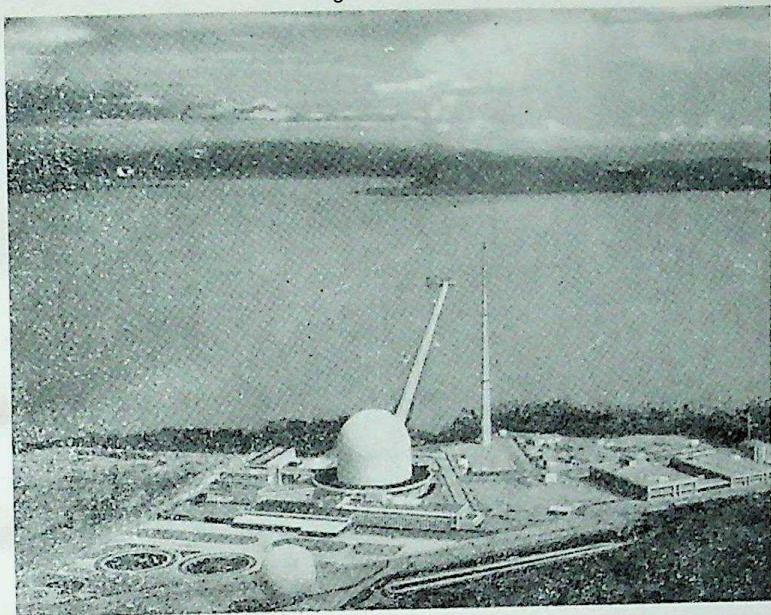


पोखरन विस्फोट से पूर्व का विहंगम दृश्य

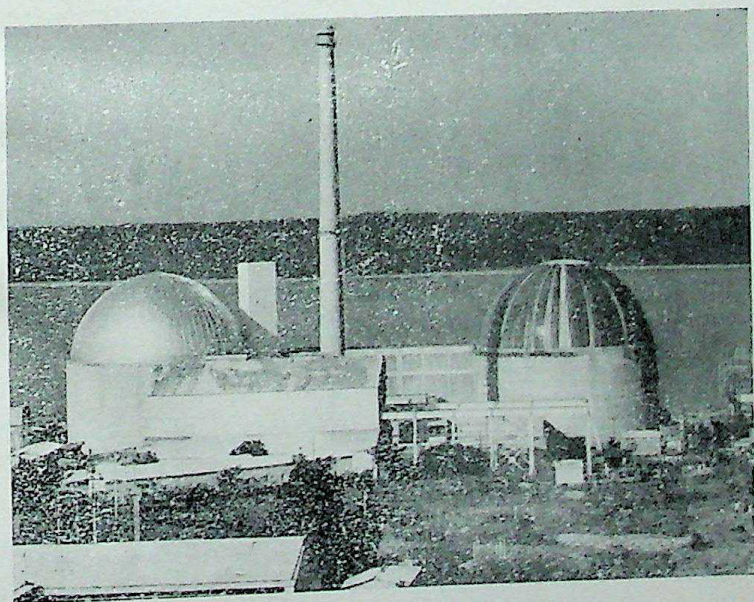


पोखरन परमाणु विस्फोट के कारण उत्पादित गड्ढे का दृश्य



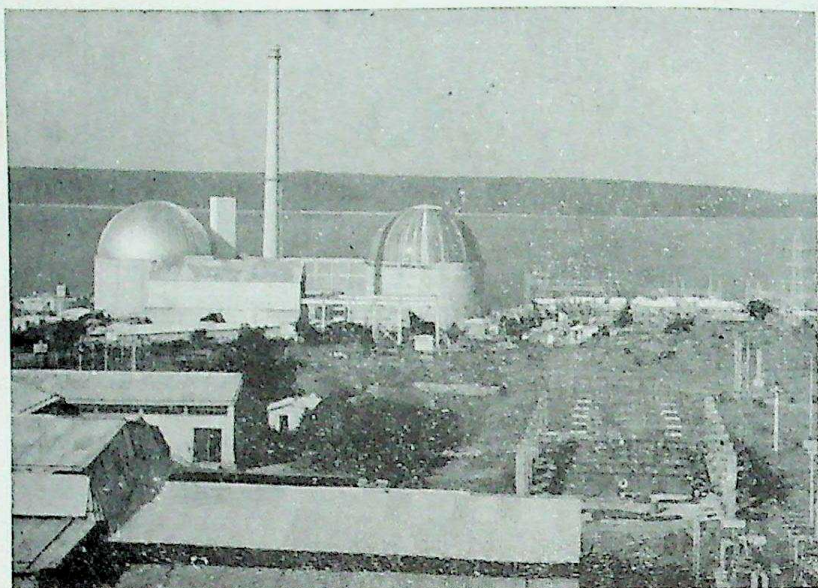


भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र

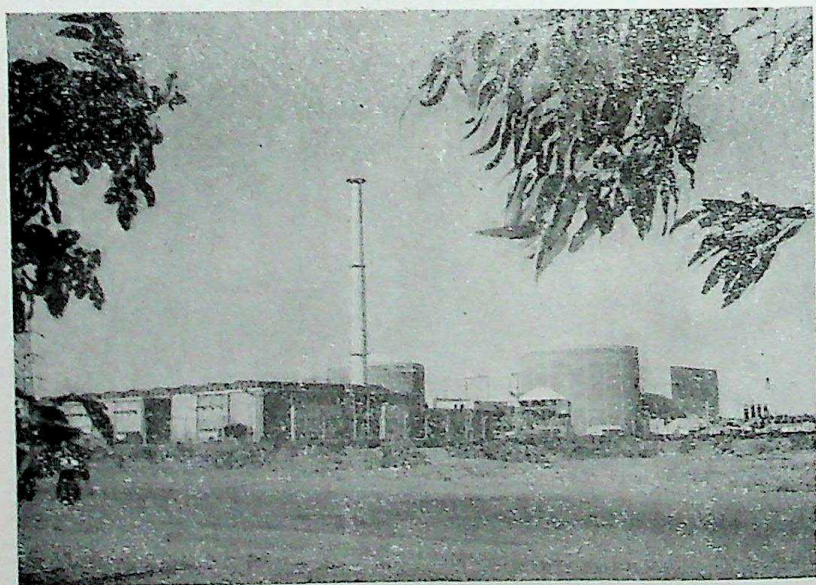


कोटा (राजस्थान) परमाणु भट्टी



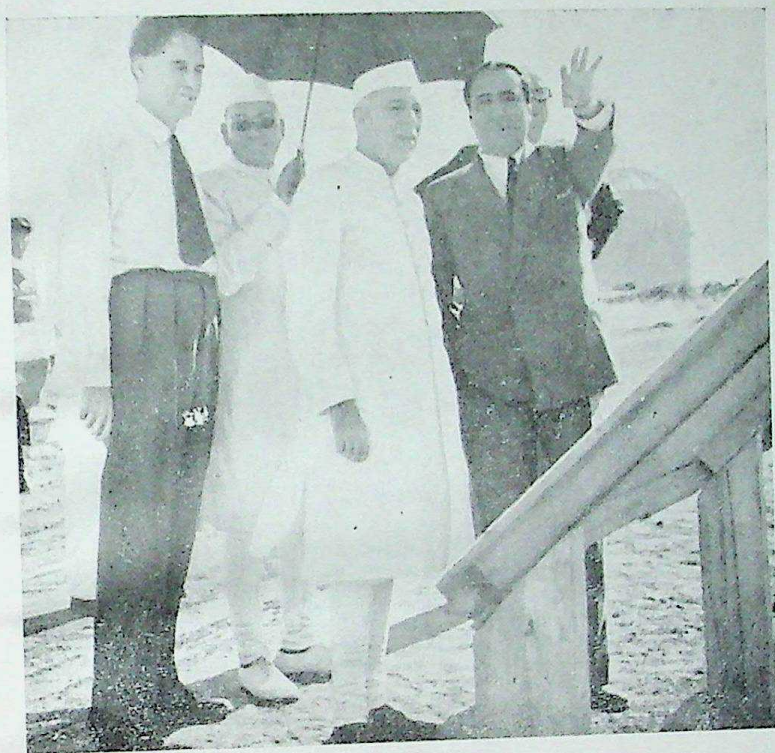


राजस्थान परमाणु विद्युतघर



कलपक्कम (मद्रास) परमाणु भट्टी





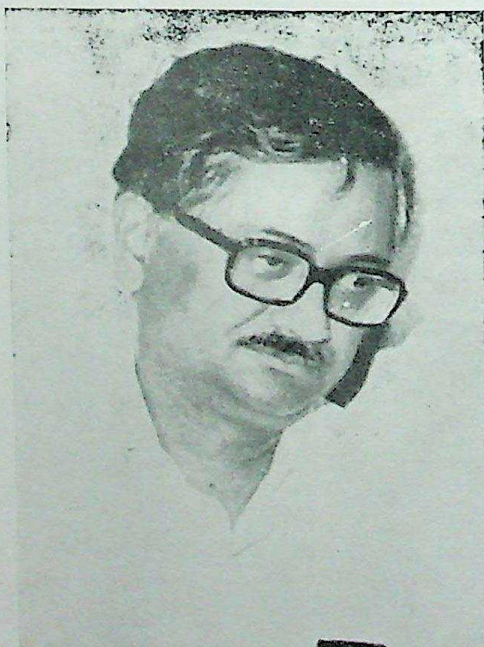
जवाहरलाल नेहरू वैज्ञानिकों के साथ





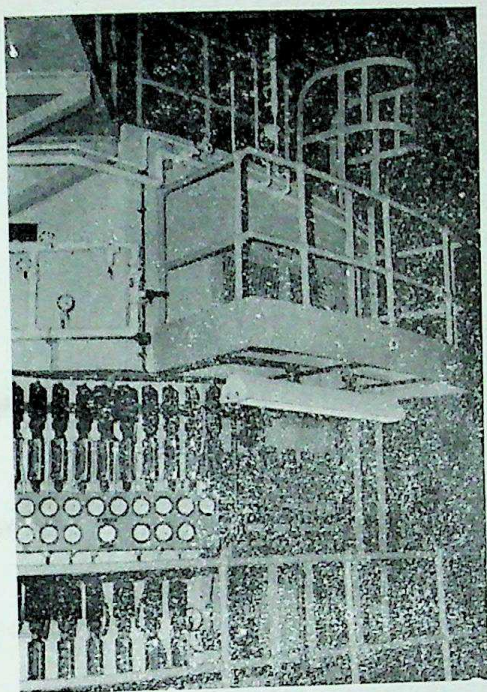


डॉ० विक्रम सारा भाई



डॉ० राजा रामन्ता



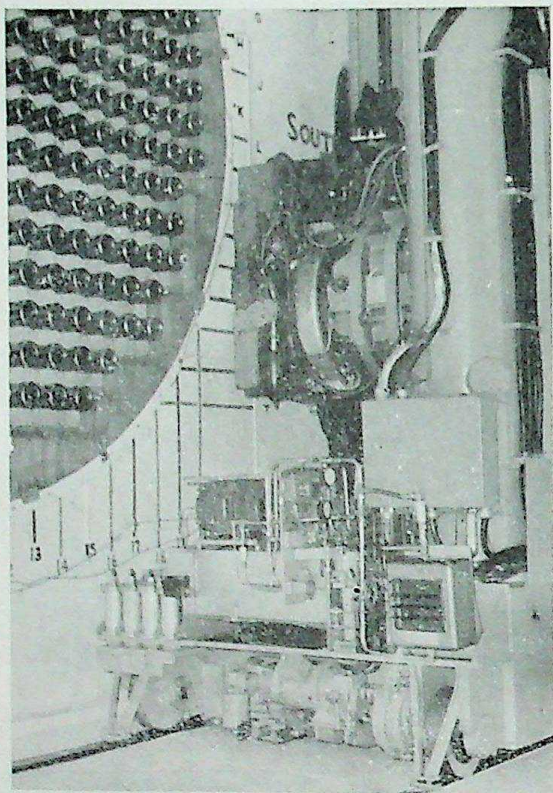


भारत-कनाडा परमाणु भट्टी  
का आंतरिक दृश्य

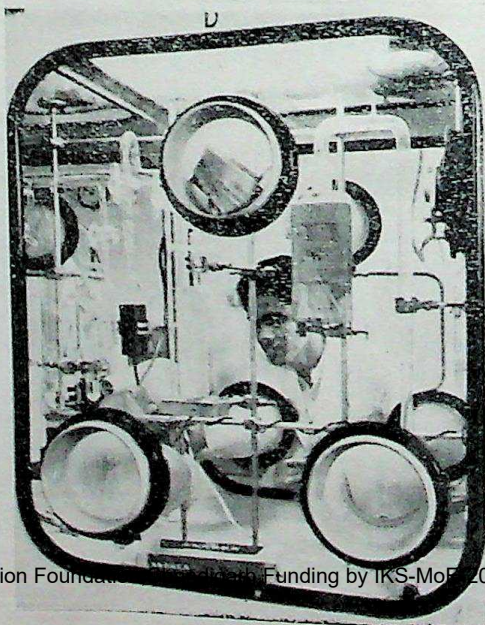


तारापुर परमाणु विद्युतघर  
का बाह्य दृश्य



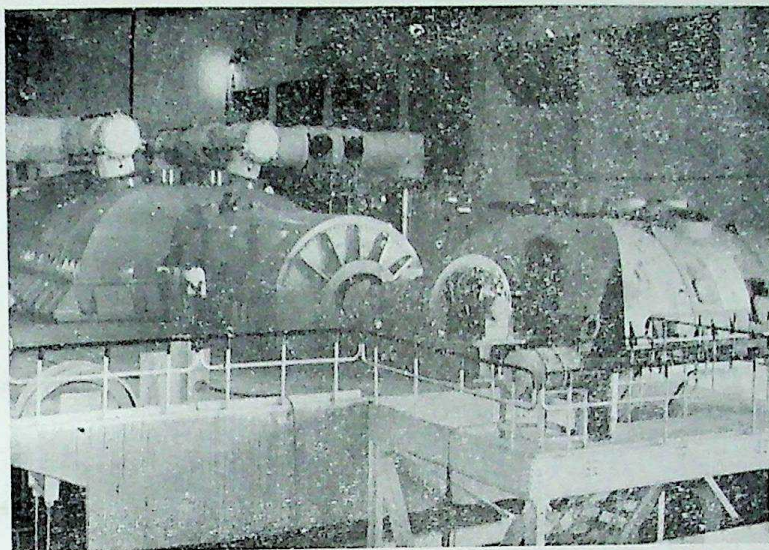


राजस्थान परमाणु  
विद्युतघर की भट्टी  
के मुख और ईंधन  
भरने की मशीन

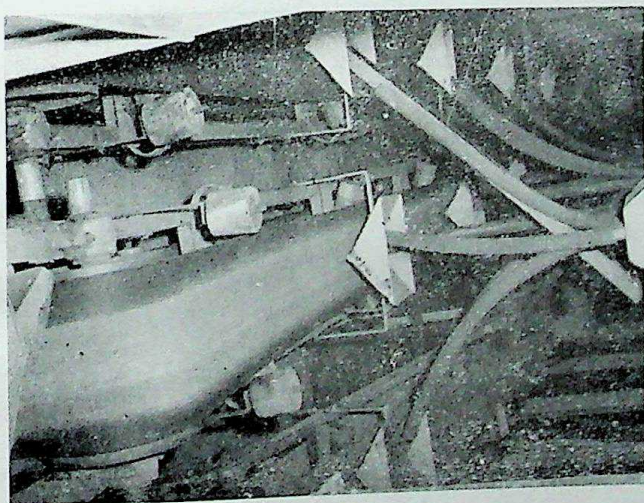


रेडियो कैमिस्ट्री प्रयोगशाला  
का दृश्य (यहां पर अत्यंत  
खतरनाक रेडियोधर्मी पदार्थों  
का परीक्षण किया जाता  
है)





राजस्थान टरबाइनजनित्र का चित्र

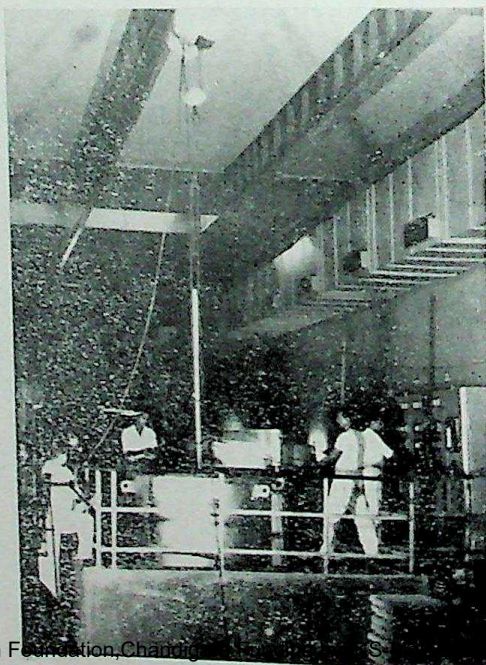


थोरियम प्लांट



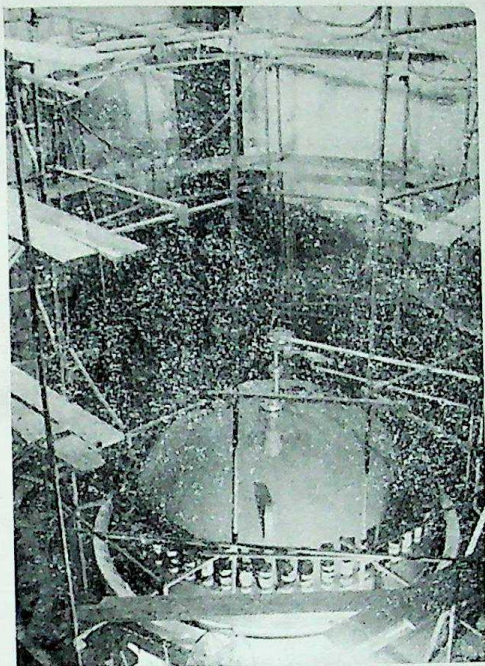


संयंत्र का चित्र

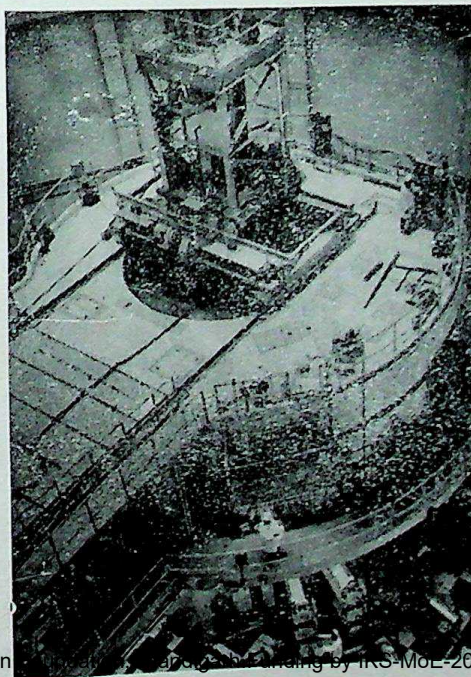


ईंधन छड़ों को निर्माण करणे  
की प्रक्रिया का दृश्य



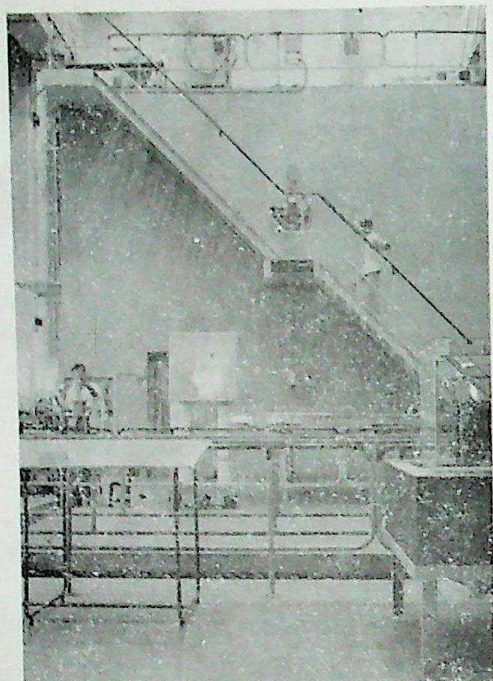


तारापुर परमाणु भट्टी का  
आंतरिक दृश्य

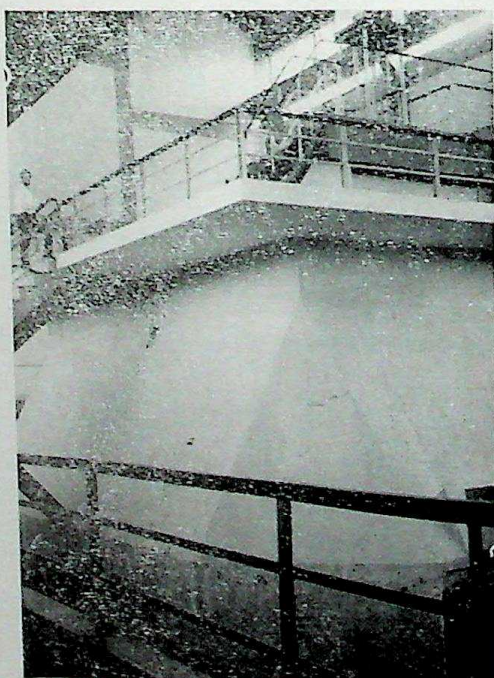


साइरस भट्टी का  
आंतरिक दृश्य





जरलीना परमाणु भट्टी का  
आंतरिक दृश्य

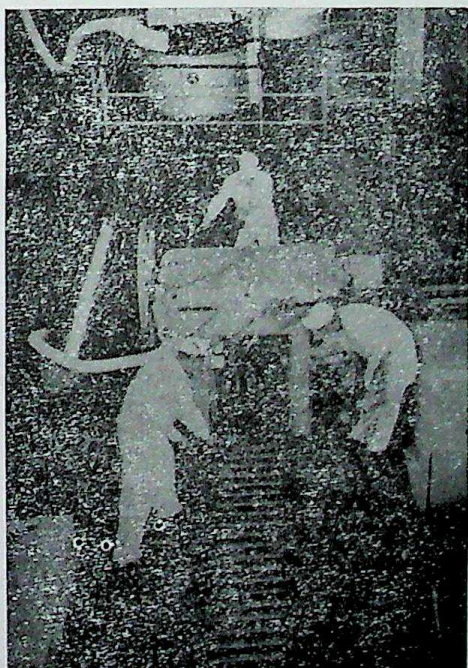


अप्सरा परमाणु भट्टी का  
आंतरिक दृश्य



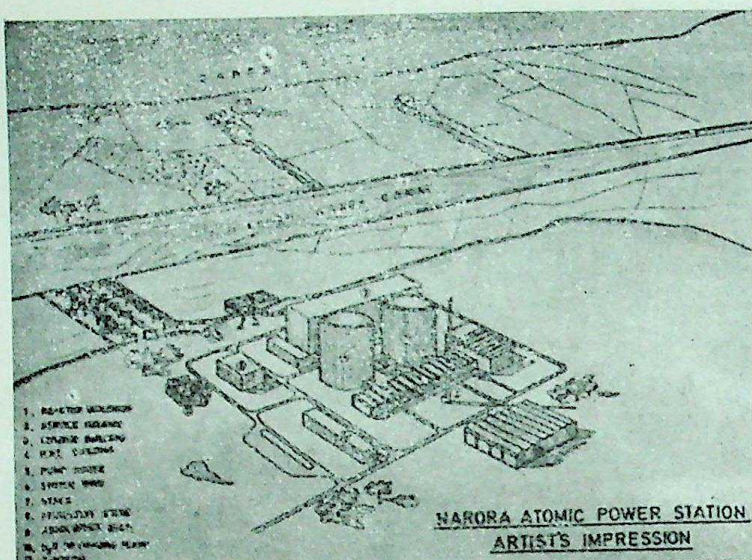


कोबाल्ट बम से कैंसरग्रस्त  
रोगी का उपचार

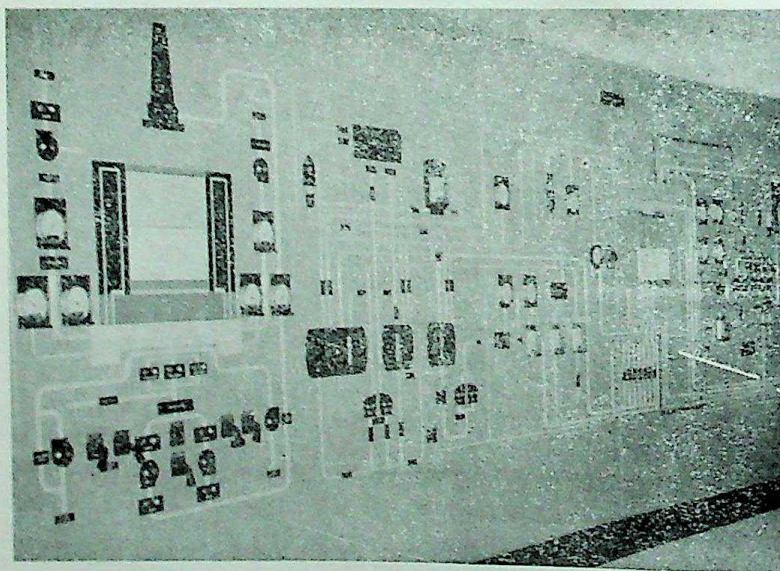


भारत-कनाडा परमाणु भट्टी  
में उपयोग हेतु ईंधन तत्व  
का उत्पादन विषयक चित्र





नरोदा परमाणु स्टेशन



भारत-कनाडा परमाणु भट्टी का नियंत्रण कक्ष



उत्पन्न हो सकती है। अब तक पहली एकक से 5000 लाख किलोवाट घण्टा विद्युत उत्पन्न हो चुकी है।

इसके न्यूक्लीय विखण्डन खण्ड का डिजाइन परमाणु ऊर्जा आयोग, कनाडा ने बनाया है। शेष तकनीकी प्रखण्ड का डिजाइन मानट्रियल इंजीनियरिंग कंपनी, कनाडा ने किया है। संचालन तथा व्यवस्था परमाणु ऊर्जा आयोग, भारत के आधीन है।

विद्युत गृह में दो कनाडी ड्यूटेरियम, यूरेनियम भारी पानी कूलित परमाणु भट्टी है। इस परमाणु भट्टी का क्रोड क्षैतिज होता है। इसमें (1) प्राकृतिक यूरेनियम का ईंधन की भांति उपयोग होता है। (2) न्यूट्रॉनों के वेग को कम करने अर्थात् मांडरेशन के लिए कम दाब के भारी पानी का उपयोग किया जाता है। (3) उच्च दाब के भारी पानी का उपयोग 'शीतलक' की भांति किया जाता है। इस भट्टी का मुख्य गुण यह है कि इसमें भट्टी के कार्य करते हुए भी ईंधन को निकाला और भरा जा सकता है।

संभवतः आपको ज्ञात होगा कि प्रथम विद्युत घर तारापुर में संवर्धित यूरेनियम का उपयोग होता है जिसे अमरीका से आयात किया जाता है। किसी भी देश पर आज के युग में निर्भर होना हानिप्रद है। अतः ऐसी भट्टी का लगाना आवश्यक है जिसमें देश में प्राप्त तथा निर्मित ईंधन का उपयोग संभव हो।

राजस्थान परमाणु विद्युत घर में जिस कनाडी भट्टी (कांडू भट्टी) का डिजाइन उपयोग में लाया जा रहा है उसमें न्यूट्रॉनों का भरपूर उपयोग होता है। इसके अतिरिक्त यदि एक प्रकार की भट्टियां ही प्रथम चरण में निर्मित की जाती हैं तो देश शीघ्र ही उनके निर्माण में स्वावलंबी हो जायेगा।

परमाणु विद्युत गृह में दो परमाणु भट्टी भवन, एक टरबाइन भवन और एक सेवा भवन है। सेवा भवन मार्ग द्वारा भट्टी भवन से जुड़ा है। मार्ग के द्वार स्वचालित हैं तथा वायु से बंद हो सकते हैं। रेडियधर्मी गैस के निकास के लिए ऊंची चिमनी है। भारी पानी को शुद्ध करने के लिए आसवन स्तंभ है। नियंत्रण कक्ष टरबाइन भवन में है।

आप जानते हैं कि यूरेनियम-235 को तापीय न्यूट्रॉनों के प्रहार से विखंडित किया जा सकता है। किंतु इस प्रकार के विखंडन से तीव्र वेग (42,000 कि० मी०/सेकेण्ड) के न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं जिन्हें भारी पानी (मंदक) का उपयोग तापीय न्यूट्रॉनों में परिवर्तित कर देते हैं।

भारी पानी साधारण जल के ही समान होता है। किंतु उसमें हाइड्रोजन परमाणु के स्थान पर ड्यूटेरियम का परमाणु होता है। सात हजार किलोग्राम

जल में एक किलोग्राम भारी पानी होता है। भारी पानी को आंशिक आसवन



## 66 / परमाणु और मानव

की विधि से साधारण जल से प्राप्त करते हैं। एक भट्टी के लिए 2,15,000 किलोग्राम भारी पानी आवश्यक होता है।

श्रृंखलित क्रिया तभी तक चलती है जब तक कि ईंधन की मात्रा आवश्यक क्रांतिक मात्रा से अधिक होती है। जब ईंधन को एक निश्चित क्रम में भारी पानी में रखते हैं तो भट्टी आवश्यक मात्रा के रखे जाने के उपरांत क्रांतिक से जाती है।

श्रृंखलित क्रिया को बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि उत्पन्न न्यूट्रॉनों की संख्या पर नियंत्रण रखा जाय। न्यूट्रॉनों की संख्या भारी पानी और कोबाल्ट छड़ों से कम हो सकती है।

भट्टी का मुख्य भाग कैलेडिया होता है। इसी से ईंधन और मंदक होता है। यह स्टेनलेस स्टील का बना होता है। इसकी लंबाई 5.07 मीटर तथा बाह्य व्यास 6.05 मीटर होता है। इसमें जिरंकालाय की बनी 306 नलिकाएं होती हैं। प्रत्येक नलिका में एक अत्य दाब-नली होती है। प्रत्येक दाब-नली में ईंधन के 12 बंडल होते हैं। इस प्रकार भट्टी में 3672 ईंधन बंडल होते हैं।

प्रारंभ में दोनों भट्टियों में 112 टन ईंधन भरा गया। अब प्रतिदिन 200 किलोग्राम ईंधन की आवश्यकता होती है अर्थात् वर्ष-भर में केवल 3 रेल वैगन आवश्यक ईंधन को विद्युत गृह तक पहुंचा देंगे। (समान शक्ति वाले कोयला-संचालित विद्युत गृह के लिए आवश्यक ईंधन 500 वैगन कोयला प्रति-वर्ष है।)

दूरस्थ नियंत्रित मशीनों की सहायता से ईंधन को भट्टियों में भरा जाता है। इन मशीनों की सहायता से भट्टियों के कार्य करते रहने पर भी ईंधन भरा जा सकता है। जले हुए ईंधन को भट्टियों के चलते रहने पर भी मशीनों से निकाला जा सकता है।

शीतलक (भारी पानी) को दाब-नलिकाओं से प्रवाहित करते हैं, जहां वह ईंधन में उत्पादित ऊष्मा को लेता है। भारी पानी से यह ऊष्मा सादे जल को मिलती है। सादा जल वाष्प में बदल जाता है। (इस वाष्प से ही टरबाइन चलते हैं जिनसे 'जनित्र' चलता है।)

## विकिरणों से सुरक्षा

परमाणु विद्युत घर से विकिरणों को न निकलने देने, तथा दाब अत्यधिक ऊष्मा इत्यादि के कारण संभावित दुर्घटना या विस्फोट को रोकने के लिए अनेक सुरक्षा प्रयास किए गए हैं।

परमाणु विद्युत घर के चारों ओर कंक्रीट का बना सुरक्षा कवच है जो विकिरणों को रोकता है। यदि अत्यधिक ऊष्मा के फलस्वरूप प्राथमिक शीतलक



नलिकाओं से रेडियधर्मी वाष्प किसी प्रकार बाहर निकल जाये तो उसे जल में परिवर्तित करने के लिए स्वचालित फव्वारे हैं जो वाष्प को जल में परिवर्तित कर देते हैं। इस कार्य के लिए आवश्यक जल भवन में ही स्थित तालाब से आता है।

भवन के उन भागों में जहां आवागमन रहता है, वहां की वायु एक घण्टे में चार बार बदली जाती है। बाहर निकलने वाली वायु को बार-बार परखा जाता है तथा रेडियधर्मिता को अनुमेय सीमा के भीतर रखा जाता है। भट्ठी से निकली वायु को संपूर्ण फिल्टरों से निकालकर भूमि से 100 मीटर ऊंची चिमनी से निष्कासित कर देते हैं।

सामान्यतः चिमनी से गैस का निकलना हानिकारक नहीं होता है, किंतु जब मौसम अनुकूल नहीं होता है तो इन गैसों के दुष्प्रभाव हो सकते हैं जो भारी पानी उपयोग के कारण दूषित हो जाता है, उसे फिर से आसवन क्रिया से ठीक कर लिया जाता है। जले हुए ईंधन को यहां से तारापुर पहुंचाया जाता है, जहां पर उसमें से आवश्यक पदार्थ निकाल लिए जाते हैं। शेष ठोस पदार्थों को जमीन में गाड़ दिया जाता है। द्रव (दूषित) पदार्थों को जल से तनु करते हैं, फिर उन्हें सांद्र कर भूमिस्थ कर देते हैं।

#### मद्रास परमाणु शक्ति योजना

यह परमाणु विद्युत घर तमिलनाडु राज्य के कालपाक्कम नामक स्थान पर निर्मित हो रहा है। कालपाक्कम मद्रास नगर से 50 किलोमीटर दूर है। इसकी कुल क्षमता 470 मेगावाट होगी। इसमें भी राजस्थान परमाणु विद्युत घर के समान 2 कनाडा-ड्यूटेरियम परमाणु भट्टियां होंगी। किंतु यह परमाणु विद्युत घर पूरी तरह से भारतीय यंत्रों तथा भारतीय साज-सज्जा से निर्मित होगा। भारतीय उद्योग तथा तकनीकी ज्ञान का पूरा उपयोग इस विद्युत घर में हो रहा है।

#### चतुर्थ परमाणु विद्युत घर

देश का चतुर्थ परमाणु विद्युत घर उत्तर प्रदेश के नरोरा नामक स्थान पर निर्मित हो रहा है। इस परमाणु विद्युत घर में भी कनाडा-ड्यूटेरियम प्रकार की दो परमाणु भट्टियां होंगी।



## रेडियो आइसोटोप : स्वास्थ्य और सुन्दर जीवन के लिए

रेडियधर्मिता की खोज के उपरांत रेडियो सक्रिय पदार्थों के जो उपयोग अनेक रूपों में मानव जीवन में होते आए हैं, उनमें लगातार वृद्धि होती जा रही है। आज के युग में मानव जीवन से संबंधित कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसमें रेडियधर्मी पदार्थों का उपयोग न होता हो।

रेडियधर्मिता की घटना का पता सबसे पहले फ्रांस के हेनरी बेकरेल ने लगाया था। उसके बाद 1895 ई० में रंट्येन ने एक्स किरणों का पता लगाया। एक्स किरणें यूरेनियम से प्राप्त की गयी थीं, अतः शीघ्र ही मंडम क्यूरी ने पता लगा लिया कि रेडियम भी रेडियधर्मी पदार्थ होता है। आज वैज्ञानिकों को न केवल अनेक रेडियधर्मी तत्त्व ज्ञात हैं। रेडियधर्मी पदार्थों से अल्फा, बीटा तथा गामा किरणें निकलती हैं। ये किरणें दिखलायी नहीं पड़तीं, परंतु ये स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक होती हैं। परंतु इसके साथ ही रेडियधर्मी विकिरणों के अनेक सद्उपयोग भी हैं।

रेडियधर्मिता की खोज के प्रारंभिक काल में रेडियधर्मी पदार्थों का उपयोग घड़ी के डायल इत्यादि में प्रयुक्त स्वतः चमकने वाले पेंट में किया गया। कुछ समय पश्चात् यह ज्ञात हुआ कि रेडियधर्मी विकिरण कैंसर युक्त कोशिकाओं को नष्ट कर देते हैं। अतः इनका उपयोग कैंसर-उपचार में होने लगा।

रेडियो आइसोटोप के रूप में कार्बन, आयोडीन, कोबाल्ट आदि को परमाणु भट्टी में रखकर अन्य रेडियधर्मी-पदार्थों की सहायता से रेडियो-सक्रिय बनाया जाता है। ऐसे सभी तत्त्व रेडियो आइसोटोप कहलाते हैं।

परमाणु की बनावट ज्ञात करने, पृथ्वी और चट्टानों की आयु ज्ञात करने के लिए वैज्ञानिकों ने रेडियधर्मी पदार्थों का उपयोग किया। परमाणु की बनावट ज्ञात करने में रेडियधर्मी पदार्थों से निकले अन्य ऊर्जावान विकिरणों ने सहयोग दिया तथा उनके क्षय होने की दर से पृथ्वी तथा चट्टानों की आयु ज्ञात की जा



सकी।

जब तक केवल प्राकृतिक रेडियधर्मी पदार्थ ही प्राप्त थे, तब तक उनके महंगे मूल्य के कारण उनके अनेक उपयोग संभव न हुए। (मैडम क्यूरी के समय में रेडियम का मूल्य रु० 1,20,000 प्रतिग्राम था तथा सन् 1946 ई० में 2,00,000 रुपये प्रतिग्राम था)।

यद्यपि कृत्रिम रेडियधर्मी पदार्थों का निर्माण रेडियधर्मिता की खोज के कुछ वर्षों पश्चात् ही शुरू हो गया किंतु निर्मित पदार्थों की मात्रा अत्यंत कम होने के कारण इनके विशेष उपयोग संभव न हुए।

इस 'न्यून मात्रा' में कुछ वृद्धि मंद न्यूट्रॉन के उपयोग से अवश्य हुई। किंतु यह वृद्धि इतनी अधिक न थी कि कृत्रिम रेडियधर्मी पदार्थों का उपयोग बहुतायत से होता।

सर लारेंस ने साइक्लोट्रॉन का उपयोग कर, कृत्रिम रेडियधर्मी पदार्थ निर्मित किए जिनमें रेडियधर्मी सोडियम मुख्य था। रेडियधर्मी सोडियम ने अपनी कार्य-कुशलता से डाक्टरों का मन मोह लिया था। रेडियो सोडियम की अर्ध-आयु 12 घंटे होती है अतः वह अपना कार्य कर चुकने के पश्चात् बिना स्वस्थ कोशिकाओं को हानि पहुंचाए स्वतः समाप्त हो जाता है। रेडियम की अर्ध-आयु 1,600 वर्ष होती है, अतः उसे कार्य समाप्त कर लेने के पश्चात् हटाना पड़ता है क्योंकि यह कोशिकाओं को हानि पहुंचा सकता है। किंतु रेडियो सोडियम का मूल्य रेडियम के लगभग समान था, अतः यह विधि भी उपयोगी सिद्ध न हुई।

कृत्रिम रेडियधर्मी पदार्थों के अधिक मूल्य की समस्या का हल यूरेनियम विखण्डन तथा शृंखलित क्रिया की खोज से संभव हुआ। परमाणु भट्टी कृत्रिम रेडियधर्मी पदार्थों के लिए वरदान सिद्ध हुई। परमाणु भट्टी में विभिन्न प्रकार के रेडियधर्मी पदार्थ निर्मित किए जा रहे हैं।

### दो विभिन्न विधियां

परमाणु भट्टी में रेडियधर्मी पदार्थों के निर्माण की दो विभिन्न विधियां हैं। प्रथम विधि में यूरेनियम विखण्डन से ही विभिन्न प्रकार के लगभग 60 रेडियधर्मी आइसोटोप उत्पन्न होते हैं। दूसरी विधि में विभिन्न पदार्थ परमाणु भट्टी में पकाए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, हम यह कह सकते हैं कि विखण्डन में उत्पन्न न्यूट्रॉन इन पदार्थों पर प्रहार कर, उन्हें रेडियधर्मी कर देते हैं। उदाहरणार्थ, कोबाल्ट तत्त्व में 27 प्रोटॉन तथा 32 न्यूट्रॉन होते हैं। जब कोबाल्ट के एक टुकड़े को परमाणु भट्टी में रखा जाता है तो उसके एक परमाणु में एक न्यूट्रॉन बंद हो जाता है। इस प्रकार कोबाल्ट परमाणु में 33 न्यूट्रॉन हो जाते हैं और कोबाल्ट रेडियधर्मी हो जाता है। इस कोबाल्ट-टुकड़े से गामा किरणें उत्सर्जित होने लगती



## 70 / परमाणु और मानव

हैं। इन्हीं गामा किरणों के आधार पर रेडियोसक्रिय परमाणु तथा साधारण परमाणु में अंतर किया जा सकता है। इन परमाणुओं को ज्ञात करने तथा इनसे निकले विकिरणों को मापने के लिए गाइगर संगणक या सिटिलेशन संगणक का उपयोग किया जाता है।

प्रत्येक रेडियो समस्थानक (रेडियो आइसोटोप) के गुण विभिन्न होते हैं। प्रत्येक की भिन्न-भिन्न अर्धआयु होती है। कुछ बहुत तीव्रता से क्षय होते हैं तथा कुछ अन्य धीरे-धीरे क्षय होते हैं। कुछ से तीव्र विकिरण विकिरित होते हैं तो कुछ हल्के विकिरण देते हैं। कुछ विकिरण मोटी से मोटी धातु की परत को भेद सकते हैं तो कुछ पतली परत से ही रुक जाते हैं। कुछ अत्यंत विनाशकारी होते हैं तो कुछ को जानवरों तथा मनुष्यों को बिना हानि पहुंचाए खिलाया जा सकता है।

## समस्थानकों का उपयोग

यद्यपि द्वितीय महायुद्ध के दौरान समस्थानकों के नवीन उपयोग नहीं हो पाए किंतु युद्ध की समाप्ति पर समस्थानकों के विभिन्न नवीन उपयोग सामने आए। इनमें से एक रेडियो सक्रिय ट्रेसर है। ट्रेसर उस वस्तु को कहते हैं जो किसी अन्य वस्तु की गति तथा दिशा का अनुरेखण (चित्रण) कर सके। उदाहरणार्थ, यदि हम जल में रंग डाल दें तो वह जल के बहने की दिशा तथा तीव्रता प्रदर्शित करेगा। इसी भांति ट्रेसर भी मार्ग प्रदर्शित करते हैं क्योंकि इनमें से रेडियधर्मी विकिरण लगातार निकलते रहते हैं जिन्हें यंत्रों की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है।

जीवविदों ने ट्रेसरों के इस गुण का उपयोग मानव, पशु तथा पौधों से संबंधित अनुसंधान के लिए किया है। इनकी सहायता से यह ज्ञात करने का प्रयत्न किया गया कि विभिन्न पदार्थ किस भांति मानव, पशु तथा पौधों का भरण-पोषण करते हैं या उन्हें हानि पहुंचाते हैं।

## रेडियो सोडियम

इन ट्रेसरों में रेडियो सोडियम का महत्वपूर्ण स्थान है। सोडियम एक ऐसा तत्व है जिसे शरीर की कोशिकाएं अधिक चाहती हैं। शरीर के लिए आवश्यक सोडियम का अधिकांश हमें खाने वाले नमक से प्राप्त होता है। रेडियो सोडियम के निर्माण के पूर्व वैज्ञानिक सोडियम का अनुरेखण इस कारण न कर पाए थे कि वर्तमान खाए गए नमक तथा पूर्व के खाए नमक में अंतर कर पाना संभव न था।

उपर्युक्त समस्या का हल रेडियो सोडियम ने दिया। रेडियो सोडियम का निर्माण साधारण नमक पर न्यूट्रॉन प्रहार कर, किया जा सकता है। इससे सोडियम के कुछ परमाणु रेडियो सक्रिय हो जाते हैं। यदि इस रेडियो सक्रिय नमक को



किसी प्राणी को खिलाया जाए तो रेडियो सोडियम के मार्ग को उससे निकले विकिरण चित्रित कर देंगे। रेडियो सक्रिय नमक और साधारण नमक में अंतर करने के लिए रेडियो सक्रिय नमक को 'लेबिल नमक' कहते हैं। इस लेबिल नमक का उपयोग कर यह ज्ञात किया गया है कि यदि इस सोडियम का इंजेक्शन एक बांह में लगाया जाए तो शीघ्र ही यह सोडियम कुछ सेकंडों में दिल तथा फेफड़ों से होता हुआ दूसरी बांह में पहुंच जाता है तथा लगभग 75 सेकंड में पसीने में पहुंच जाता है किंतु हड्डियों में पहुंचने के लिए अधिक समय लगता है।

कुछ अन्य ट्रेसरों का उपयोग कर, यह ज्ञात करने का प्रयत्न किया जाता है कि भोजन के पोषक तत्वों का शरीर कैसे उपयोग करते हैं। अब तक यह ज्ञात हो चुका है कि सब कोशिकाएं नवीन पदार्थों का उपयोग करती हैं तथा पुराने पदार्थों को निष्कासित कर देती हैं और इस प्रकार वे लगातार परिवर्तित होते रहते हैं। इसी भांति हड्डी और दांत भी लगातार परिवर्तित होते रहते हैं।

कुछ समय पूर्व तक यह ज्ञात न था कि जो पानी हम पीते हैं, वह कहां-कहां जाता है तथा कैसे उसका निष्कासन होता है। किंतु अब यह ज्ञात करना संभव है। पिये जाने वाले पानी में उपस्थित हाइड्रोजन की अत्यंत लघु मात्रा को रेडिय-धर्मी ट्रिटियम में परिवर्तित कर देते हैं। इस प्रकार यह ज्ञात किया गया है कि पिया गया पानी शरीर में उपस्थित अन्य पानी में सम्मिलित हो जाता है और फिर वह धीरे-धीरे एक मास में समाप्त हो जाता है।

अन्य लेबिल-पदार्थों से भी पौधों के अध्ययन में सहायता मिली है। जैसे रेडियो फासफोरस (फासफोरस-32) मिश्रित खाद से यह ज्ञात हुआ है कि किस प्रकार फासफोरस को पौधा ग्रहण करता है तथा उसका कितना भाग खाद से आता है तथा कितना भूमि से प्राप्त होता है। ऐसे ही पदार्थों से यह ज्ञात हुआ है कि पौधे अपना पोषण केवल जड़ों से ही नहीं करते हैं, वरन् वे पत्तियों, फलों, तथा तनों से भी करते हैं।

इसी भांति रेडियधर्मी कार्बन (कार्बन-14) का उपयोग कर यह ज्ञात किया गया है कि हरी पत्ती किस भांति वायुमंडल की कार्बन डाइऑक्साइड तथा जल का उपयोग कर, शकर, स्टार्च तथा अन्य पदार्थ बनाती है। इस विधि से आस्ट्रिया के एक वैज्ञानिक ब्रोडा ने रेडियो सक्रिय शकर बनाई। इस शकर का उपयोग कर, जीवाणुओं और विषाणुओं में होने वाले परिवर्तनों को ज्ञात किया गया है।

कभी-कभी कुछ कार्बनिक यौगिकों को रेडियधर्मी करना संभव नहीं होता है क्योंकि विकिरणों के प्रहार से इनके गुण नष्ट हो जाते हैं। ऐसा ही एक कार्बनिक यौगिक का कोलेस्टेरोल है जो हमारे शरीर में होता है। वैसे तो यह हड्डी को सुदृढ़ करता है किंतु कभी-कभी कैंसर का भी कारण बन जाता है।

कोलेस्टेरोल का निर्माण करने के लिए रेडियो कार्बन की सहायता ली गई।



## 72 / परमाणु और मानव

रेडियो कार्बन ऐसे विषाणुओं को खिलाया गया जो एसिटिक अम्ल बना सकते हैं। उन विषाणुओं ने रेडियो सक्रिय एसिटिक अम्ल बनाया। इस रेडियो सक्रिय एसिटिक अम्ल को सुअरों को खिलाया गया जिन्होंने अपने रक्त में रेडियो सक्रिय कोलेस्टेराॅल बनाया। इस रेडियो सक्रिय कोलेस्टेराॅल का उपयोग अनुसंधान के लिए किया जाता है।

अनेक पौधे भी इसी भांति लेबिल यौगिक उत्पन्न करते हैं। पौधे वायु में उपस्थित रेडियधर्मी कार्बन डाइऑक्साइड को ग्रहण कर, सूर्य प्रकाश तथा जल की सहायता से अनेक प्रकार के रेडियो सक्रिय कार्बनिक यौगिक बना लेते हैं। इस प्रकार के बने हुए यौगिकों में रेडियो सक्रिय शर्करा, निकोटीन, विटामिन-सी तथा अन्य ऐसे यौगिक, जो औषधियां बना सकते हैं, मुख्य हैं।

रेडियो कार्बन रेडियधर्मी औषधि निर्माण में अन्य आइसोटोपों की अपेक्षा अधिक लाभप्रद है। क्योंकि प्रथम तो यह अपनी अधिक अर्धआयु के कारण शीघ्र क्षय नहीं होता है। दूसरे, इसका विकिरण इतना मंद होता है कि यह पौधों तथा प्राणियों को हानि नहीं पहुंचाता है।

## अवशेषों की आयु

रेडियो कार्बन का एक अन्य महत्त्वपूर्ण उपयोग पुरातन वस्तुओं तथा अवशेषों की आयु ज्ञात करना है। अमरीकी वैज्ञानिक विलाड् लिब्ब्री ने इससे आयु ज्ञात करने की विधि खोजी। उनका कथन है कि वायुमण्डल के उच्च स्तर पर कॉस्मिक किरणों में स्थित न्यूट्रॉन जब नाइट्रोजन पर प्रहार करते हैं तो रेडियो कार्बन उत्पन्न होता है। इस कारण वायुमण्डल की कार्बन डाइऑक्साइड में रेडियो कार्बन भी होता है। हम जानते हैं कि इस कार्बन डाइऑक्साइड को पौधे ग्रहण करते हैं तथा पौधों से जानवरों तथा मनुष्यों को रेडियो कार्बन प्राप्त होती है। इस प्रकार रेडियो कार्बन सब प्राणियों तथा पौधों में होता है।

जब प्राणी और पौधे निर्जीव हो जाते हैं तो ये रेडियो कार्बन का लेना समाप्त कर देते हैं। इनमें विद्यमान रेडियो कार्बन धीरे-धीरे क्षय होता है तथा 5600 वर्षों में रेडियो कार्बन की आधी मात्रा रह जाती है। इस भांति यदि किसी वस्तु में अवशेष रेडियो कार्बन की मात्रा ज्ञात कर लें तो हम उस वस्तु के निष्प्राण होने का समय ज्ञात कर सकते हैं।

## चिकित्सा में उपयोग

रोगों के उपचार तथा समाप्त करने में भी रेडियो सक्रिय समस्थानकों (आइसोटोपों) से काफी सहायता मिलती है। इनकी विशेषता यह है कि ये शरीर के ऐसे भागों में पहुंच जाते हैं, जहां इनकी आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, फास-



फोरस एक ऐसा तत्त्व है जिससे हड्डियों के बनने में सहायता मिलती है। अतः यदि किसी को रेडियो सक्रिय फासफोरस दिया जाए तो वह हड्डियों में एकत्र हो जाएगा और रेडियधर्मी फासफोरस से निकले विकिरण रक्त पर आक्रमण करने लगेंगे। इस प्रकार कुछ रक्त-रोगों का उपचार सम्भव हो जायेगा। जैसा कि आप जानते हैं, इन रेडियधर्मी आइसोटोपों का गुण यह है कि ये स्वयं क्षय होते रहते हैं। अतः इनकी अर्धआयु ज्ञात कर, इन्हें सही मात्रा में दिया जा सकता है जो अपना कार्य कर स्वयं समाप्त हो जाएंगे।

जैसा कि आपने इस अध्याय के आरंभ में पढ़ा है कि कैंसर-उपचार के लिए रेडियम का उपयोग किया जाता था जो अत्यंत महंगा था। साथ ही अपनी निश्चित तीव्रता के कारण कुछ प्रकार के कैंसरों में ही उपयोग किया जाता था। किंतु अब अनेक रेडियो समस्थानक जैसे रेडियो स्वर्ण, रेडियो इरीडियम, रेडियो फासफोरस, रेडियो कोबाल्ट इस कार्य के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं।

उपर्युक्त समस्थानकों (आइसोटोपों) में रेडियो कोबाल्ट-60 का प्रमुख स्थान है। इसे कोबाल्ट बम भी कहते हैं। इस कोबाल्ट बम का उपयोग कैंसर उपचार में किया जाता है। इस बम के निर्माण के लिए कोबाल्ट-60 के एक छोटे टुकड़े को सीसे के खोल में रख देते हैं। इस खोल में एक छेद होता है जिससे होकर कोबाल्ट-60 से उत्सर्जित गामा किरणें निकलती हैं। इन गामा किरणों को कैंसर-ग्रसित अंग पर डाला जाता है जहां पर ये किरणें कैंसर ग्रसित ऊतकों को समाप्त कर देती हैं। इस कोबाल्ट बम का उपयोग एक्स-रे ट्यूब की भांति भी किया जा सकता है।

चर्म कैंसर को समाप्त करने के लिए स्ट्रॉशियम-9 का उपयोग किया जा सकता है। इससे उत्पन्न बीटा किरणों को चमड़ी रोक लेती है। अतः कैंसर उपचार में स्ट्रॉशियम का टुकड़ा कैंसर प्रभावित भाग पर रख देते हैं, किंतु इससे रोगी-ऊतकों के साथ-साथ स्वस्थ-ऊतकों के नष्ट हो जाने की संभावना रहती है। इस संभावना को समाप्त करने के लिए ऐसे रेडियो समस्थानकों की खोज की गई है जो कैंसर-ग्रसित ऊतकों के साथ सम्बद्ध होकर इन्हें समाप्त कर दें। ऐसे समस्थानकों में आयोडीन-131 है। रेडियो आयोडीन को मस्तिष्क ट्यूमर ज्ञात करने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। यह ट्यूमर सबसे अधिक हानिकारक होता है। आयोडीन-131 को इंजेक्शन द्वारा शरीर में पहुंचा देते हैं। चूंकि कैंसर-ग्रसित ऊतकों में सामान्य ऊतकों की अपेक्षा अधिक रक्त पहुंचता है अतः अधिक रेडियो आयोडीन उन ऊतकों में पहुंचेगा। सिर के पास रखे काउंटर उन स्थलों को बतलायेंगे जिनसे तीव्र विकिरण आ रहे हैं। इस प्रकार इस स्थान में ही ट्यूमर है इसका संकेत मिल जाता है। शल्य-चिकित्सक इसी विधि से ट्यूमर ज्ञात करते हैं।



मस्तिष्क ट्यूमर के उपचार में डाक्टर बाह्य निर्मित रेडियो आइसोटोप का उपयोग नहीं करते हैं, वरन् उसे ट्यूमर में ही बनाते हैं। इस औषधि के निर्माण के लिए रोगी को 'बोरान' का इंजेक्शन देते हैं। ट्यूमर के टिश्यू स्वस्थ टिश्यूओं की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से बोरान ग्रहण करते हैं तथा कुछ समय के लिए इनमें शेष मस्तिष्क की अपेक्षा अधिक बोरान एकत्र हो जाता है। अब इस बोरान पर न्यूट्रॉन स्रोत से निकले न्यूट्रॉन प्रहार करते हैं। इस न्यूट्रॉन प्रहार से बोरान अपने में से अल्फा कण निकालते हैं जो ट्यूमर कोशिकाओं को तो नष्ट कर देते हैं किंतु स्वस्थ कोशिकाओं को हानि नहीं पहुंचाते हैं।

रेडियो आयोडीन का एक अन्य उपयोग है। संभवतः आप जानते होंगे कि शरीर के कुछ अंग ऐसे होते हैं जो केवल कुछ विशेष पदार्थों को ही ग्रहण कर सकते हैं। जैसे थायरॉयड ग्रंथि केवल आयोडीन को ही ग्रहण कर सकती है। थायरॉयड ग्रंथि गर्दन के सामने वाले भाग में होती है तथा शरीर के स्वास्थ्य में यह महत्त्वपूर्ण है। यदि यह भली भांति कार्य नहीं करती है तो अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

यदि डाक्टर यह जानना चाहता है कि क्या रोगी की थायरॉयड ग्रंथि भली प्रकार से कार्य कर रही है तो वह रोगी को रेडियो आयोडीन मिश्रित औषधि पीने के लिए देता है। अब गाइगर काउंटर की सहायता से ग्रंथि की रेडियो सक्रियता ज्ञात कर, डाक्टर यह ज्ञात कर सकता है कि ग्रंथि कितनी आयोडीन ग्रहण कर रही है। यदि ग्रंथि सामान्य आयोडीन ले रही है तो वह स्वस्थ है, अन्यथा नहीं।

अधिक सक्षम काउंटर की सहायता से डाक्टर थायरॉयड ग्रंथि का रेखाचित्र बना सकते हैं तथा ग्रंथि का कौन-सा भाग रोगी है, ज्ञात कर सकते हैं।

### औद्योगिक उपयोग

उद्योग में आइसोटोपों के उपयोग दिन-प्रति-दिन बढ़ते जा रहे हैं। इन उपयोगों को हम दो मुख्य भागों में विभाजित कर सकते हैं : (1) विकिरण स्रोत तथा (2) ट्रैसर (अनुरेखक)।

### विकिरण स्रोत

विकिरण स्रोतों का उपयोग मशीनों के विभिन्न भागों की जांच करने तथा उनकी और अन्य वस्तुओं की मोटाई ज्ञात करने में होता है। जिस भाग की मोटाई ज्ञात करनी होती है, उसे विकिरण स्रोत तथा गाइगर काउंटर के मध्य रख देते हैं तथा विकिरण का वह अंश ज्ञात कर लिया जाता है जो शोषित हो जाता है। ज्ञात अंश की सहायता से उस भाग की मोटाई ज्ञात की जाती है।

विकिरण स्रोत के रूप में रेडियो कोबाल्ट का प्रयोग करते हैं। इसकी सहा-



यता से मोटी-मोटी चादरों की मजबूती परखी जाती है। वास्तव में, रेडियो कोबाल्ट वही कार्य करता है जो एक्स-रे ट्यूब करती है।

### रेडियो सक्रिय ट्रेसर

रेडियो सक्रिय ट्रेसरों का उपयोग भी बहुतायत से होता है। उदाहरण के लिए, यदि गैस पाइप में उत्पन्न छेद को ज्ञात करना हो तो रेडियो सक्रिय गैस पाइप से भेजते हैं। यदि किसी स्थान पर छेद होगा तो वहां के आस-पास के क्षेत्रों में अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक रेडियो सक्रियता होगी। इस भांति छेद को ज्ञात किया जा सकता है।

इसी प्रकार जब तेल या गैस की पाइपलाइन में तेल या गैस को बदलते हैं तो कुछ रेडियो सक्रिय तेल या गैस भेजते हैं। तेल पहुंचने वाले स्थान पर गाइगर काउंटर यह बतला देता है कि अब अन्य तेल आना आरंभ हो गया है।

मशीनों के पुर्जों के क्षय होने की दर रेडियो सक्रिय पुर्जे बनाकर ज्ञात की जा सकती है। पुर्जों के घिसने के फलस्वरूप उत्पन्न छीलन लुब्रिकेटिंग तेल में मिल जाती है। इस तेल की रेडियधर्मी परीक्षा कर, पिस्टन के क्षय होने की दर ज्ञात कर सकते हैं।

कुछ प्रकार के प्लास्टिकों को विकिरणों से प्रभावित कर, अधिक तत्पक्रम के योग्य बनाया जा रहा है। दो प्लास्टिक के टुकड़ों को विकिरणों की सहायता से जोड़ा भी जा सकता है।

### रासायनिक क्रिया

रेडियधर्मी विकिरणों के उपयोग से नवीन रासायनिक क्रियाओं को उत्पन्न किया जा सकता है तथा वर्तमान रासायनिक क्रियाओं को तीव्र किया जा सकता है जैसे नाइट्रोजन और ऑक्सीजन की सहायता से शोरे का अम्ल बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

### गुप्तचर की भांति उपयोग

अपराधियों के अपराध को सिद्ध करने, निर्दोष को झूठे अपराधों से बचाने तथा ऐतिहासिक गुत्थियों को सुलझाने में भी रेडियो समस्थानक सहायक है।

आप सम्भवतः जानते होंगे कि नेपोलियन बोनापार्ट की मृत्यु सेंट हेलना द्वीप में हुई थी। किन्तु उनकी मृत्यु कैसे हुई थी यह स्पष्ट नहीं है। कुछ इतिहासकारों का मत है कि मृत्यु विष दिये जाने के कारण हुई थी।

इस ऐतिहासिक समस्या का संभावित हल रेडियो समस्थानकों ने दिया। ग्लासगो विश्वविद्यालय के आचार्य डाक्टर स्मिथ ने नेपोलियन के सर के बालों को परमाणु भट्टी में पकाया। न्यूट्रॉन प्रहार के कारण ये बाल रेडियो सक्रिय



हो गये और जब इनसे निकलने वाले विकिरणों की परीक्षा की गई तो ज्ञात हुआ कि इन बालों में उपस्थित आर्सनिक की मात्रा सामान्य रूप से उपस्थित आर्सनिक की मात्रा से 13 गुनी है। मृत्यु के कुछ दिनों पूर्व काटे गये बालों के दूसरे गुच्छे पर प्रयोग करने के पश्चात् भी उपर्युक्त परिणाम की पुष्टि हुई।

इन दोनों प्रयोगों से बोनापार्ट द्वारा अपने जेलरों पर लगाए गए आरोप सत्य सिद्ध हुए किन्तु जब नेपोलियन के उन बालों पर प्रयोग किया गया जो उसके सेंट हेलना जाने के पूर्व काटे गये थे तो उनमें आर्सनिक की मात्रा और अधिक निकली। अतः यह अनुमान किया गया कि नेपोलियन को विष सेंट हेलना में भेजे जाने से पूर्व दिया गया था।

अपराधी के अपराध को सिद्ध करने के लिए भी रेडियो समस्थानकों का उपयोग होता है। कुछ वर्ष पूर्व कनाडा में एक कन्या की हत्या की गई थी। इस कन्या के हाथ में एक बाल था। जब इस बाल की उपर्युक्त विधि के द्वारा परीक्षा की गई तो यह ज्ञात हुआ कि यह बाल उस व्यक्ति के बालों के समान है जिसे पुलिस ने अन्य प्रमाणों के आधार पर गिरफ्तार किया था।

अमुक व्यक्ति ने कुछ समय पूर्व बन्दूक चलाई थी कि नहीं? इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए अमरीका की जनरल डायनामिक्स कारपोरेशन, कैलिफोर्निया के डाक्टर गुइन ने एक नवीन विधि विकसित की है।

वर्तमान विधि में अपराधी के हाथों तथा गालों पर पिघला मोम लपेटा जाता है और फिर इस मोम का रासायनिक विश्लेषण कर, नाइट्रेट की जांच की जाती है क्योंकि कारतूस में नाइट्रेट होता है जिसका कुछ अंश फायर करने के बाद अपराधी के शरीर पर शेष रह सकता है किन्तु चूंकि वर्तमान रासायनिक खाद में भी नाइट्रेट हो सकता है अतः यह भी संभव है कि उपर्युक्त नाइट्रेट कारतूस का न होकर खाद का हो।

नवीन परीक्षण विधि में नाइट्रेट के स्थान पर एंटीमनी और बेरियम की खोज की जाती है क्योंकि ये तत्त्व सामान्यतः उपलब्ध नहीं हैं, अतः इनका शरीर पर अन्य कारणों से चिपकना असंभव-सा है। इस विधि का उपयोग अब तक अनेक अपराधों में सफलतापूर्वक किया जा चुका है।

अपराधी की खोज में बालों के परीक्षण का अत्यन्त महत्त्व है। अतः बालों पर खोज करके यह ज्ञात कर लिया गया है कि इनमें कौन-कौनसे तत्त्व होते हैं। ये तत्त्व मुख्यतः सोना, पारा, आयोडीन, जस्ता तथा क्रोमियम है। अब वैज्ञानिक यह ज्ञात करने का प्रयत्न कर रहे हैं कि विभिन्न आयु, रंग, देश तथा जाति वाले व्यक्तियों में ये तत्त्व किस अनुपात में होते हैं। यदि इस प्रयोग में सफलता प्राप्त हो गई तो सामाजिक सुरक्षा अधिकारियों के हाथों में एक ऐसा अस्त्र आ जाएगा जिसका उपयोग कर, वे अपराधी की आयु, रंग, जाति इत्यादि भी जान सकेंगे।



## रेडियो समस्थानकों (आइसोटोपों) का भारत में उपयोग

अप्रैल, 1957 ई० में भाभा प्रतिष्ठान ट्रस्टों में समस्थानक इकाई की स्थापना की गई। इसमें आरम्भ में केवल 3 व्यक्ति थे। इस इकाई ने फरवरी, 1958 ई० में सल्फर-35 और फास्फोरस-32 का निर्माण किया। मई, 1958 ई० में आइसोटोप प्रयोगशाला स्थापित की गई। इस प्रयोगशाला का डिजाइन तथा उपकरणों का निर्माण ट्रस्टों प्रतिष्ठान में ही किया गया था। जनवरी, 1960 ई० तक अनेक रेडियोधर्मी आइसोटोप (फास्फोरस-39) सल्फर-35, आयोडीन-131, स्वर्ण-198, आय-रन-50, क्रोमियम-59 और सोडियम-247 का आवश्यक मात्रा में निर्माण होने लगा। सन् 1964 ई० तक इनकी संख्या 250 तक पहुँच गई। वर्तमान समय में 350 से भी अधिक आइसोटोपों का निर्माण होता है।

कैंसर उपचार में तथा धातु परीक्षण में प्रयुक्त कोबाल्ट-60 का निर्माण भी भाभा केन्द्र में हो रहा है। इसी भाँति अन्य भाभा चैम्बरों जैसे इरीडियम-192 तथा एंटीमनी-124 गामा किरण इकाई का भी निर्माण भाभा प्रतिष्ठान कर रहा है।

रेडियोधर्मी ट्रेसरों का उपयोग कर, भारत के अनेक बंदरगाहों (बंबई, कलकत्ता मारमुगाओं तथा मंगलौर) में यह ज्ञात किया जाता है कि समुद्री सिल्ट किस ओर जाती है। इसकी सहायता से बंदरगाहों से निकाले सिल्ट को ऐसे स्थान पर जमा करने में सहायता मिलती है, जहाँ से हानि न हो। इस कार्य के लिए ऐसे कृत्रिम सिल्ट का उपयोग किया जाता है जिसमें स्कैंडियम-46 होता है। स्कैंडियम-46 की गति का अध्ययन कर, सिल्ट की गति को ज्ञात करते हैं। इस विधि के फलस्वरूप अत्यधिक बचत हुई है।

क्या मुलायम लकड़ी, जिसका मुख्य उपयोग ईंधन के लिए होता है, को कठोर तथा स्वस्थ लकड़ी में बदला जा सकता है? स्टाईरेन तथा कोबाल्ट-60 का उपयोग लकड़ी को अच्छी लकड़ी में बदल देता है। ऐसी लकड़ी में यांत्रिक



## 78 / परमाणु और मानव

तथा विद्युत गुण होते हैं। कम मूल्य के भवनों को बनाने के लिए ऐसे बांस का उपयोग किया जा सकता है जिसे रेडियधर्मी विकिरणों का उपयोग कर, सुदृढ़ किया गया है। उपर्युक्त उपयोग अभी भी प्रयोगाधीन है।

### विसंक्रमण के लिए उपयोग

चिकित्सा के उपकरणों, औजारों तथा यंत्रों को विसंक्रमित करने के लिए गामा किरणों का उपयोग किया जाता है। यह विधि अन्य प्रचलित विधियों से अपेक्षाकृत अधिक लाभकारी है। इस विधि से ऐसे उपकरणों को भी विसंक्रमित किया जा सकता है जो पहले से पैक किये गये हैं तथा उन्हें ऐसा बनाया जा सकता है कि पैकेट खोलकर उनका सीधा उपयोग किया जा सके। जो यंत्र प्लास्टिक के बने होते हैं, उन्हें भी इस विधि से विसंक्रमित कर सकते हैं।

एशिया का सबसे बड़ा विसंक्रमण प्लांट (संयंत्र) भाभा केन्द्र, बंबई में है। इस केन्द्र में औषधि उद्योग में उत्पादित विभिन्न रस्तुओं को विसंक्रमित किया जाता है।

अन्य विकसित राष्ट्रों की भांति भारत में भी धातुओं के परीक्षण के लिए आइसोटोप रेडियोग्राफी का उपयोग किया जा रहा है। भाभा केन्द्र ने विभिन्न उद्योगों के लिए आइसोटोप रेडियोग्राफी तकनीक विकसित की है तथा आवश्यक यंत्र जैसे विकिरण स्रोत (कोबाल्ट-60, इरीडियम-192 स्रोत) इत्यादि बनाए हैं। इस तकनीक के उपयोग के लिए आवश्यक प्रशिक्षण भी केन्द्र देता है।

तेल-शोधक कारखानों में तथा तेल के नलों में रुकावट ज्ञात करने के लिए भी आइसोटोपों का उपयोग किया जा रहा है।

नहरों तथा बांधों में पानी की मात्रा ज्ञात करने के लिए रेडियधर्मी ट्रैसरों का उपयोग किया जाता है।

### रोग निदान

रोग निदान के लिए आवश्यक अनेक रेडियधर्मी आइसोटोपों का उत्पादन भाभा केन्द्र में होता है। इसके अतिरिक्त 'मुख्य कैंसर' होने का कारण तथा निदान भी खोजने का प्रयत्न किया गया है। इन खोजों से यह ज्ञात हुआ है कि मुख्य कैंसर भोज्य पदार्थों में पोषण तत्वों की कमी के कारण उत्पन्न होता है। विटामिन 'बी' की सहायता से इस कमी को कम किया जा सकता है।

सन् 1963 ई० में विकिरण चिकित्सा केन्द्र की स्थापना की गई। इस केन्द्र का कार्य रेडियधर्मी आइसोटोपों की सहायता से रोगों को ज्ञात करना तथा उपचार करना है। इस केन्द्र में थायरायड ग्रंथि के रोगों पर अमूल्य खोजें की गई हैं।



भाभा केन्द्र में इलेक्ट्रो मायोग्राम का निर्माण कर लिया गया है। इस यंत्र का उपयोग पक्षाघात के रोगों को ज्ञात करने में किया जाता है। यह यंत्र लगभग उतना ही उपयोगी है जितना इलेक्ट्रो कार्डियोग्राम।



## भारत में परमाणु ऊर्जा और खाद्य

भारत की खाद्य-समस्या के तीन अंग हैं :

1. खाद्य उत्पादन तथा उसमें उत्तरोत्तर वृद्धि ।
2. फसल का नष्ट होने से बचाव ।
3. खाद्य की पौष्टिकता ।

प्रथम दो समस्याएं अत्यन्त कठिन हैं । गत वर्षों में भारत ने कृषि उत्पादन में विशाल वृद्धि कर, आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है, किंतु साथ ही जनसंख्या में भी वृद्धि हुई है । अतः यदि जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ कृषि-उत्पादन में वृद्धि न हुई तो शीघ्र ही आत्मनिर्भरता समाप्त हो जाएगी । अतः मुख्य समस्या कृषि उत्पादन तथा जनसंख्या वृद्धि में तालमेल बिठाने की है । इसके दो सम्भव मार्ग हैं । प्रथम तो कृषि उत्पादन में वृद्धि की जाये, दूसरे जनसंख्या में वृद्धि को रोका जाना ।

### कृषि उत्पादन में वृद्धि

वास्तव में, खाद्य अकार्बनिक (कार्बन तत्त्व रहित) पदार्थों का कार्बनिक पदार्थों में नियंत्रित परिवर्तन है । पौधे कार्बन डाइऑक्साइड तथा जल को सूर्य-प्रकाश के साथ उपयोग कर, शर्कर के अणु बनाते हैं ।

सूर्य-प्रकाश, जल तथा कार्बन डाइऑक्साइड के अतिरिक्त पौधों को अन्य अकार्बनिक पोषक तत्त्व चाहिए जिससे कि वह प्रोटीन एमीनो अम्ल तथा विभिन्न शर्करों का उत्पादन कर सके । इसके अतिरिक्त अन्य जीव-जन्तुओं की भांति पौधे भी ऊर्जा चाहते हैं जो उन्हें कार्बनिक यौगिकों के ऑक्सीकरण से प्राप्त होती है । इसके अतिरिक्त पौधे सूर्य से भी ऊर्जा ग्रहण करते हैं ।

खाद्य पदार्थ पौधों से या तो सीधे प्राप्त होते हैं, या पशु-पक्षी उनको ग्रहण कर मांस, अंडों तथा दूध के रूप में उपलब्ध कराते हैं । अतः आवश्यकतानुसार पौधों को पोषक पदार्थ दिया जाना आवश्यक है । इसके अतिरिक्त वे ऐसे बंश



के हों कि वे पोषक पदार्थों का भलीभांति उपयोग कर सकें। इन पौधों को रोगों से बचाना भी आवश्यक होता है।

### स्वस्थ पोषण

स्वस्थ पोषण के लिए आवश्यक है कि पौधे को पोषक तत्त्व तथा जल पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो। पौधे के लिए मुख्यतः नाइट्रोजन, फासफोरस तथा पोटेशियम आदि पोषक तत्त्व आवश्यक हैं। ये तत्त्व भूमि से प्राप्त होते हैं किन्तु भूमि में कहीं पर एक तत्त्व अधिक होता है तो कहीं पर दूसरा। इसके फलस्वरूप कहीं पर भूमि अधिक उपजाऊ होती है, कहीं पर कम। अतः अच्छी फसल के लिए भूमि में खाद मिलायी जाती है। पहले तो गोबर की खाद या हरी खाद का ही उपयोग होता था, किन्तु इधर कुछ वर्षों में रासायनिक खाद का अधिक उपयोग होने लगा है। आज जब धन और रासायनिक खाद की कमी है तो आवश्यकता यह है कि रासायनिक खाद की उपयुक्त मात्रा उपयुक्त समय पर प्रयुक्त की जाए। अतः किसान को ज्ञान होना चाहिए कि कौन सी खाद कब और कितनी देनी है।

रेडियधर्मी आइसोटोपों की सहायता से उपर्युक्त प्रश्नों का उत्तर ढूँढ़ने का प्रयत्न किया गया है। यदि खाद के साथ रेडियधर्मी आइसोटोपों को मिला दिया जाये तो यह ज्ञात किया जा सकता है कि किन आइसोटोपों को पृथ्वी ने स्वीकार किया है और इस प्रकार पौधों के पोषण के लिए आवश्यक पदार्थ ज्ञात किए जा सकते हैं। यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि इन पदार्थों की कितनी मात्रा पौधों ने स्वीकार की है अतः भूमि के लिए आवश्यक खाद की मात्रा ज्ञात की जा सकती है। इस प्रकार के रेडियधर्मी आइसोटोपों में फासफोरस-32 भी है। इस फासफोरस-32 मिश्रित खाद से यह ज्ञात किया जा सकता है कि कैसे फासफोरस को पौधा ग्रहण करता है तथा पौधा कितना फासफोरस लेता है। इस फासफोरस का कितना भाग भूमि से तथा कितना भाग खाद से प्राप्त होगा। इस आइसोटोप से यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि किस स्थान से पौधा अधिक खाद लेता है।

इसी भांति रेडियधर्मी कार्बन-14 का उपयोग कर, यह ज्ञात किया गया है कि हरी पत्ती किस भांति वायुमण्डल की कार्बन डाइऑक्साइड तथा जल का उपयोग कर, शकर, स्टार्च तथा अन्य पदार्थ बनाती है। इस विधि से आस्ट्रिया के वैज्ञानिक ब्रोडा ने रेडियधर्मी शकर बनाई थी। इस शकर का उपयोग कर, वैज्ञानिकों ने विषाणुओं और जीवाणुओं पर अनेक प्रयोग किए हैं।

पेड़-पौधे मिट्टी में स्थित जल का उपयोग करते हैं। अतः यह ज्ञात होना आवश्यक है कि कितना जल वास्तव में पौधों के लिए आवश्यक है। न्यूट्रॉन



## 82 -/ परमाणु और मानव

प्रकीर्णन की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है कि कितना जल मिट्टी में है तथा उसका कितना भाग पौधे ने लिया है।

## पौधों का प्रजनन

अच्छी खेती के लिए अच्छे नस्ल के पौधे अत्यंत आवश्यक हैं। इसके लिए पौधों का प्रजनन किया जाता है। पौधों की विभिन्न विशेषताओं को इस प्रकार सुनियोजित किया जाता है कि पौधे के अच्छे गुण तो बने रहते हैं किंतु दोष समाप्त हो जाते हैं। इस क्रिया को म्यूटेशन कहते हैं। वास्तव में, म्यूटेशन पौधों में स्वतः होता रहता है।

प्राकृतिक म्यूटेशन इस भांति होता है कि पौधा जीवित रह सके और पुनरुत्पादन कर सके। किंतु वर्तमान समय में जब रासायनिक खाद और संतुलित जल का उपयोग हो रहा है तथा पौधों से प्राप्त पदार्थों में आवश्यक पोषक तत्व आवश्यक है तब सामान्य पौधा उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकता है। वास्तव में, पौधा भी ऐसा होना चाहिए जो अच्छी खाद तथा भरपूर जल का उपयोग ऐसे खाद्य पदार्थ उत्पन्न करे जो पोषक तत्वों से भरपूर हों। इसके लिए विशेष प्रकार का पौधा होना आवश्यक है। अब प्रश्न यह है कि किस भांति पौधे में परिवर्तन लाए जाएं कि पौधा वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा कर सके।

इन परिवर्तनों के लिए रेडियधर्मी विकिरणों का उपयोग किया जा रहा है। रेडियधर्मी तकनीक की विशेषता यह है कि इसमें पौधे की लगभग सब विशेषताएं बनी रहती हैं तथा अवगुण समाप्त हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, कुछ-एक पौधे ऐसे होते हैं जो अधिक लम्बे होने के कारण टूट जाते हैं। ऐसे पौधों की लम्बाई को कम कर दिया जाता है जिससे वे टूटते नहीं हैं।

उपर्युक्त सिद्धांत का उपयोग कर, जापानी रोमी चावल के बीज, इटली के डुरुग गेहूं के बीज तथा स्वीडन और अमेरिका के जौ बीजों में परिवर्तन लाया गया है।

अपने देश में भी कुछ वर्ष पूर्व अधिक उपजाऊ मैक्सिको गेहूं के बीज का उपयोग आरम्भ किया गया किंतु इस बीज का गेहूं लाल रंग का होता था जिसे अधिक पसंद नहीं किया जाता था। इस बीज को रेडियधर्मी विकिरणों की सहायता से ऐसा परिवर्तित कर लिया गया कि अब यह अम्बर वर्ण का गेहूं उत्पन्न करता है। इस नवीन बीज को शरवती सोनोस कहते हैं।

चावल के विभिन्न बीजों में से तीन ऐसे बीज रेडियधर्मी विकिरणों की सहायता से उत्पन्न किए गए हैं जिनसे 45 से 60 प्रतिशत तक चावल का उत्पादन बढ़ सकता है। चावल पर अभी और प्रयोग चल रहे हैं।

नारियल पर भी प्रयोग करके एक नवीन नारियल बीज प्राप्त किया गया



है। इससे उत्पन्न नारियल में भोज्य पदार्थ 50 प्रतिशत अधिक होता है। इसी भांति जूट, कपास, तथा औषधि पौधों को भी स्वस्थ और अधिक उत्पादन करने वाला बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

### पौधों की सुरक्षा

खेतों के पौधों की सुरक्षा अत्यंत आवश्यक है। पौधों को कीड़ों-मकोड़ों से बहुत हानि होती है। इनमें चावल को हानि पहुंचाने वाला कीड़ा राइस स्टेम बोरर, फलों को हानि पहुंचाने वाला कीड़ा फ्रूट फ्लाई तथा आलिव फ्लाई मुख्य हैं। इन कीड़ों को नष्ट करने के लिए रेडियधर्मी विकिरण का उपयोग किया जा रहा है। इन किरणों के कारण ये कीड़े नपुंसक हो जाते हैं और नवीन पीढ़ी उत्पन्न नहीं हो पाती है। इस प्रकार धीरे-धीरे सब कीड़े नष्ट हो जाते हैं। इस विधि की विशेषता यह है कि इसमें केवल एक प्रकार का कीड़ा ही नष्ट होता है, अन्य प्रकार के कीड़े बने रहते हैं। इसके अतिरिक्त रासायनिक कृमिनाशक की तुलना में हानिकारक पदार्थ शेष नहीं रहते हैं। किंतु यह विधि अधिक महंगी है। अतः अभी इसका व्यापक उपयोग नहीं हो पा रहा है।

रासायनिक कृमिनाशक (पेस्टिसाइड्स) की लघु मात्रा जो सामान्यतः खाद्य-पदार्थों में रह जाती है, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। इस लघु मात्रा को सामान्य रासायनिक विधियों से ज्ञात नहीं किया जा सकता है। इनको ज्ञात करने के लिए रेडियधर्मी ट्रेसरों तथा न्यूट्रॉन एक्टिवेशन विधि का उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त रेडियधर्मी अनुपात के कारण खाद्य पदार्थों में उत्पन्न हानिकारक पदार्थों को भी ज्ञात किया जा सकता है।

### खाद्य सुरक्षा

भारत में अनुमानतः एक करोड़ टन खाद्य पदार्थ वर्ष-भर में नष्ट हो जाता है। इस नष्ट पदार्थ की कीमत ही 1,000 करोड़ रुपये होती है। यदि इन खाद्य पदार्थों का आधा भाग भी बचाया जा सके तो देश न केवल खाद्य समस्या से उबर जाएगा, वरन् उसका निर्यात भी कर सकेगा।

खाद्य पदार्थों के नष्ट होने का मुख्य कारण (1) उनमें कीड़ा लगना (2) तथा कीड़ों-मकोड़ों के कारण सड़ना, नष्ट हो जाना तथा हानिकारक हो जाना है। अतः खाद्य-सुरक्षा के विभिन्न उपायों का मुख्य सिद्धांत कीड़ों-मकोड़ों से उनकी सुरक्षा है। सामान्यतः डिब्बों में बंद करना, नमक लगाना, सुखाना, गर्म करना, जल-विहीन करना, तथा प्रशीतित करना इत्यादि सामान्य खाद्य-सुरक्षा विधियां हैं।

नाभिकी तकनीक के विशेषज्ञों ने एक अन्य विधि विकसित की है। इस विधि



में कम ऊर्जा व गामा किरणों का प्रहार खाद्य पदार्थों पर किया जाता है। ये गामा किरणें कोबाल्ट-60 या सेसियम-137 ऊर्जा स्रोतों से प्राप्त की जा सकती हैं। इस विधि के फलस्वरूप कीटाणु नष्ट हो जाते हैं जिससे खाद्य पदार्थ बहुत समय के लिए सुरक्षित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त सूक्ष्म कीटाणुओं को कम भी किया जा सकता है जिससे खाद्य पदार्थ सड़ने से बच सकें।

इन किरणों की सहायता से रोगजनक विषाणुओं तथा कीड़ों को निष्क्रिय किया जा सकता है। कीड़ों-मकोड़ों को भी गामा किरणें नष्ट कर सकती हैं जिनके कारण अन्न नष्ट होता है। गामा किरणें उन प्रक्रियाओं को भी नियंत्रित कर सकती हैं। जिनके कारण फल इत्यादि पकने लगते हैं। प्रत्येक कार्य के लिए निश्चित विकिरण की मात्रा आवश्यक होती है जो ज्ञात है। सूक्ष्म विषाणुओं को पूर्णतया नष्ट करने के लिए कुछ लाख 'रेड' आवश्यक है जबकि फलों को अधिक दिनों तक सुरक्षित रखने के लिए कुछ हजार 'रेड' ही चाहिए (रेड विकिरण की इकाई है)।

रूस और नीदरलैण्ड में गामा किरणों से प्रभावित प्याज और चिकन बाजारों में बिक रहा है। लगभग 18 अन्य देशों में गामा किरण प्रभावित खाद्य पदार्थों पर प्रयोग चल रहे हैं।

पश्चिमी जर्मनी में चल रहे प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि प्रशीतित चिकन में उत्पन्न हो सकने वाले सालमोनेल्ला विषाणु को नियंत्रित किया जा सकता है। अमरीका में विसंक्रमित मांस का उत्पादन गामा किरणों का उपयोग कर, किया जा रहा है। इस मांस के टुकड़े बनाकर इन्हें पोलिथिन के थैलों में बंद कर, वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

अंगूर के संबंध में भी आश्चर्यजनक खोज हुई है। जिस अंगूर को गामा किरणों से प्रभावित किया जाता है, वह सादे अंगूर की अपेक्षा अधिक रस देता है।

अनेक फलों, तरकारियों, मांस-मछली को अधिक दिनों तक ताजा, पौष्टिक, स्वास्थ्यवर्धक तथा स्वादिष्ट बनाए रखने के लिए रेडियधर्मी विकिरणों का उपयोग हो रहा है किंतु इस विधि में अन्य विधियों की भांति खाद्य पदार्थों के स्वाद, रंग और गंध में अंतर आ जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ वैज्ञानिकों का यह भी मत है कि गामा किरणों के उपयोग से खाद्य पदार्थों की पौष्टिकता तो नष्ट होती ही है, साथ ही कैंसर इत्यादि रोग भी उत्पन्न हो सकते हैं। वंशानुगत गुणों में भी अंतर आ जाने की संभावना है।

भारत में प्रगति

भाभा केंद्र, बंबई में सन् 1957 ई० में एक खाद्य किरणीयन इकाई की स्थापना की गई। इस इकाई ने प्रारंभिक रूप से चावल की अनेक किस्में निर्मित कीं, जो सामान्य प्रचलित किस्मों से अधिक उपजाऊ हैं। इनसे प्राप्त चावल का दाना



लंबा होता है ।

कुछ फलों जैसे सेब, केला तथा आम और अमरूद को रेडियधर्मी विकिरणों से प्रभावित कर देखा गया है कि ये फल रेडियधर्मी क्रिया के उपरांत अधिक समय तक ठीक रह सकते हैं ।

इस खाद्य किरणीयन इकाई में दो कोबाल्ट-60 किरणीयन हैं जो कनाडा से प्राप्त हुए हैं । इसके अतिरिक्त अमरीका से भी एक कोबाल्ट स्रोत प्राप्त हुआ है । कीड़ों-मकौड़ों से बचाने के लिए भी यह इकाई अपना योगदान दे रही है ।

भारत में कृषि अनुसंधान संस्थाएं भी कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में रेडियो आइसोटोपों का उपयोग कर रही हैं ।



## परमाणु ऊर्जा : कुछ अन्य संभावनाएं

“जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पैठ” एक पुरानी कहावत है। इस कहावत में यदि पानी के स्थान पर ‘परमाणु’ कर दिया जाए तो परमाणु ऊर्जा की ठीक स्थिति का प्रदर्शन हो सकेगा। मानव जीवन से संबंधित कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसमें परमाणु ऊर्जा का उपयोग न होता हो। आप अनेक उपयोगों के बारे में जान चुके हैं। अब कुछ अन्य नवीन संभावित उपयोगों के बारे में जानिए।

### परमाणु भट्टी अवशेषों से विद्युत बैटरी निर्माण

अमरीका ने परमाणु भट्टियों के अवशेष ईंधन का उपयोग कर, ऐसी विद्युत बैटरियां बनाई हैं जो लगभग 10 वर्षों तक लगातार विद्युत दे सकेंगी। किंतु इन बैटरियों का उपयोग निजन प्रदेशों में ही हो सकेगा जैसे समुद्र में स्थित प्रकाश स्तम्भ में, क्योंकि बैटरियों से निकले रेडियधर्मी विकिरणों से हानि हो सकती है।

इन विद्युत बैटरियों में स्ट्रांशियम-90 का उपयोग किया जाता है। इन बैटरियों में ऐसी धातुओं का उपयोग होता है जो ताप को सीधे विद्युत धारा में बदल दें।

### परमाणु विस्फोटों का उपयोग

कुछ वर्षों पूर्व तक परमाणु विस्फोटों का उपयोग केवल परमाणु आयुधों के परीक्षण के लिए ही किया जाता था, किंतु अब ऐसी अनेक नवीन संभावनाएं प्रकाश में आई हैं जिनके उपयोग से मरुस्थल हरे-भरे प्रदेशों में बदले जा सकेंगे। पृथ्वी के गर्भ में स्थित गैस, तेल, तांबे इत्यादि को स्वतंत्र किया जा सकेगा, नहरें बनाई जा सकेंगी तथा बंदरगाह भी बनाए जा सकेंगे।

### प्राकृतिक तेल या गैस

साधारणतया गैस और तेल बोरिंग करके प्राप्त किए जाते हैं किंतु इस विधि से तेल या गैस तभी प्राप्त की जा सकती है जबकि तेल और गैस भूमि में अधिक



नीचे न हो तथा वह चट्टान, जिसके नीचे तेल या गैस हो, रंध्रित हो जिससे गैस और तेल उसमें से होकर ऊपर आ सके। यदि ऐसी चट्टान न होगी तो तेल या गैस को प्राप्त करना दुष्कर हो जाएगा।

किंतु कैसी भी चट्टान हो तथा यदि वह काफी नीचे भी है तो भी परमाणु विस्फोट की सहायता से तेल या गैस प्राप्त की जा सकती है। इस कार्य के लिए सर्वप्रथम उस चट्टान तक, जिसके नीचे तेल और गैस है, एक सुरंग बनाई जाएगी। तत्पश्चात् सुरंग की तली में परमाणु विस्फोट किया जाएगा। विस्फोट के कारण चट्टान का विशाल खण्ड टूट जाएगा और तेल तथा गैस स्वतंत्र हो जाएगी। इसे नलों की सहायता से पृथ्वी की सतह पर लाकर अन्य स्थानों पर भेज देते हैं। अमरीका में इस विधि की सहायता में गैस प्राप्त की जा रही है।

इस योजना में एक कठिनाई है। विस्फोट के कारण उत्पन्न क्रिपटन तथा द्वितीयम गैस और तेल को रेडियो सक्रिय बना देते हैं अतः गैस और तेल का शुद्धीकरण आवश्यक हो जाता है।

### शैल चट्टान से तेल

शैल चट्टान कार्बनिक यौगिक पदार्थों तथा मिट्टी के ऊपर अन्य चट्टानों के दबाव के कारण बनती है। यह शीघ्र टूट सकती है तथा इससे तेल प्राप्त किया जा सकता है।

शैल से तेल प्राप्त करने की योजना में पहले परमाणु विस्फोटों की सहायता से शैल चट्टान को चकनाचूर कर, उस पर गर्म वायु प्रवाहित कर, तेल को वष्पित कर, फिर उसे आसवन विधि से एकत्र कर लेते हैं।

### परमाणु विस्फोट से तांबा

इस योजना के अंतर्गत कम तांबे वाली चट्टानों को परमाणु विस्फोट की सहायता से पृथ्वी के अंदर चूर-चूर कर दिया जाता है। तत्पश्चात् इसके तांबे को अम्ल में घोल लिया जाता है तथा यंत्रों की सहायता से पृथ्वी तल पर ले आया जाता है और सामान्य विधियों से तांबा प्राप्त कर लिया जाता है। इस विधि का उपयोग अन्य खनिज पदार्थों के लिए भी किया जा सकता है।

### परमाणु विस्फोट से जल

भूगर्भ स्थित चट्टानों के नीचे के जल को भी इस विधि से स्वतंत्र किया जा सकेगा। इस विधि से भूगर्भ स्थित नदियों के मार्ग को भी बदला जा सकेगा। इससे प्राप्त जल को मरुस्थल तथा अन्य प्रदेशों को सींचने के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकेगा।



## 88 / परमाणु और मानव

## परमाणु विस्फोट से नहरें तथा बंदरगाह

उपर्युक्त योजनाएं पृथ्वी तल के अंदर के लिए थीं। इसमें परमाणु विस्फोट के कारण उत्पन्न रेडियधर्मी अवपात से कोई हानि होने की सम्भावना नहीं है। किंतु अब प्रयत्न किया जा रहा है कि पृथ्वी तल के ऊपर स्थित पठारी चट्टानों या स्वयं भूतल को विस्फोट की सहायता से तोड़ा जा सके।

विश्व के अनेक देश इस संबंध में प्रयोग करके यह ज्ञात करने का प्रयास कर रहे हैं कि इस कार्य में उत्पन्न रेडियधर्मी अवपात से तथा शेष रेडियधर्मी पदार्थों से कितनी हानि होगी।

अमरीका और रूस दोनों ही राष्ट्रों में पहाड़ तोड़कर रेल मार्ग, नहरें तथा बांध बनाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। अंतर्देशीय जल मार्गों को बड़े जहाजों के लिए सुगम बनाने के लिए भी प्रयत्न हो रहा है।

## और विद्युत भी

वैज्ञानिकों के अनुसार, विस्फोट से उत्पन्न ऊष्मा से उसी प्रकार विद्युत प्राप्त की जा सकेगी, जैसे कुछ देशों में ज्वालामुखी से प्राप्त ऊष्मा को विद्युत में परिवर्तित कर लेते हैं। यह अनुमान है कि लगभग 80,000 लाख किलोवाट विद्युत को इस प्रकार उत्पन्न किया जा सकता है। इससे रेडियो आइसोटोपों का निर्माण भी संभव है।

इन सब योजनाओं के लिए अत्यधिक धन, ज्ञान तथा परिश्रम की आवश्यकता होगी, किंतु सफल होने पर ये योजनाएं मानव के परिश्रम तथा ज्ञान की उत्कृष्ट उदाहरण होंगी।



## भारत और परमाणु विस्फोट

18 मई, 1974 ई० को प्रातः 8.05 बजे भारत ने प्रथम शांतिपूर्ण परमाणु विस्फोट किया। यह नाभिकीय विस्फोट राजस्थान के थार मरुस्थल में पोखरण नामक स्थान पर किया गया। विस्फोट भूमि के अन्दर किया गया था।

इस भूमिगत परमाणु विस्फोट से विश्व के अनेक प्रमुख राष्ट्र चकित रह गये। यद्यपि विश्व के विभिन्न वैज्ञानिक क्षेत्रों में, गत कुछ वर्षों से विश्वास किया जा रहा था कि भारत परमाणु विस्फोट करने में सक्षम है, किंतु वे इस तथ्य से अनभिज्ञ थे कि भारत ने इतनी उन्नति कर ली है कि भूमिगत परमाणु विस्फोट कर सकता है। संसार के वे राष्ट्र जो परमाणु विस्फोट कर चुके हैं, भूमिगत विस्फोट करने के पूर्व अनेक बार वायुमण्डल में परमाणु विस्फोट कर चुके हैं। किंतु भारत ने एक बार भी वायुमण्डल में परमाणु विस्फोट नहीं किया। यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि है।

### आवश्यकता

जैसा कि आप पहले जान चुके हैं, परमाणु विस्फोटों का उपयोग नहर बनाने, पहाड़ों को तोड़ने, मार्ग बनाने, गैस प्राप्त करने, कम तेल वाली चट्टानों से तेल निकालने, कम तांबे वाली अयस्क से तांबा प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है।

भारत में इस नवीन विस्फोट तकनीक का उपयोग तांबा प्राप्त करने, बंदरगाह बनाने, पत्थर-भरे बांध बनाने, और जल एकत्र करने के लिए बड़े-बड़े तालाब बनाने के लिए किये जाने की संभावना है।

भारत में लगभग जितने बंदरगाह हैं, वे सब नदियों के मुहानों पर हैं। नदियों के जल के साथ आई मिट्टी बंदरगाह को उथला करती रहती है। इस मिट्टी को हटाने के लिए वर्ष-भर खुदाई होती रहती है। यदि परमाणु विस्फोट से बंदरगाह बनाया जाये तो नदी की मिट्टी से उत्पन्न समस्या नहीं होगी। गंगा और अनेक नदियों में प्रतिवर्ष बाढ़ आती है और भीषण तबाही के



## 90 / परमाणु और मानव

पश्चात् जल समुद्र में विलीन हो जाता है। अतः यह प्रस्ताव किया गया है कि गंगा को कावेरी से जोड़ दिया जाये जिससे गंगा के जल को देश के उन भागों में पहुंचाया जा सके जहां जल की आवश्यकता रहती है। इस कार्य में भी नाभिकीय विस्फोट इंजीनियरिंग उपयोगी सिद्ध होगी।

एक अन्य प्रस्ताव में नदी के किनारे ऐसे भूमिगत जलाशय बनाने का प्रस्ताव किया गया है जिसमें बाढ़ के समय का जल एकत्र हो सकता है और फिर उसे आवश्यकतानुसार उपयोग में लाया जा सकता है। इस कार्य के लिए भी नाभिकीय विस्फोट इंजीनियरिंग सहायक सिद्ध हो सकती है।

इस कार्य में एक निश्चित कतार में रखे गये लघु परमाणु विस्फोटकों का विस्फोट किया जायेगा जिससे नदी का पाट चौड़ा हो सके, नदी मार्ग के अवरोधों जैसे पठार और पहाड़ टूट सकें और नदी के प्रवाह में गतिरोध उत्पन्न न हो।

अतः यह सुनिश्चित है कि भारत के लिए भी नाभिकीय विस्फोट इंजीनियरिंग उतनी ही महत्वपूर्ण और लाभकारी है जितनी अन्य राष्ट्रों के लिए।

सन् 1968 ई० में हुई संधि (Non-proliferation Treaty) ने इन सब राष्ट्रों को शांतिपूर्ण कार्यों के लिए या परमाणु आयुध निर्माण के लिए परमाणु विस्फोट करने से बंचित कर दिया जो संधि के पूर्व परमाणु विस्फोट न कर पाए थे। इस संधि पर हस्ताक्षर करने का अर्थ है कि भारत ने सदैव के लिए द्वितीय श्रेणी के राष्ट्र का दर्जा स्वीकार कर लिया है। इस संधि से उस गलत धारणा को बल मिलता है जिसके अनुसार 'शक्तिवान कोई गलती नहीं करता' का सिद्धांत स्वीकार किया जाता है।

इस संधि ने अविकसित राष्ट्रों को इस महत्वपूर्ण तथा नवीन तकनीक को विकसित कर उससे अपने को समृद्धशाली बनाने से बंचित कर दिया और सदैव के लिए विकसित राष्ट्रों का पिछलग्गू बना दिया।

इस संधि के साथ आर्थिक प्रश्न भी जुड़ा हुआ है। यद्यपि संधि में यह व्यवस्था की गई है कि नाभिकीय शक्तिसम्पन्न देश अन्य देशों में उनकी योजनाओं के लिए आवश्यक विस्फोट इत्यादि करेंगे और उन देशों से इस तकनीक को विकसित करने में हुए व्यय को न लेंगे।

एक आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार, विस्फोट में उपयोग की गई 'युक्ति' का मूल्य, उस विस्फोट को करवाने तथा परियोजना को पूर्ण करने के लिए आवश्यक प्रशिक्षित कर्मियों के ऊपर हुए व्यय से कहीं अधिक कम होगा।

इसके अतिरिक्त विभिन्न परियोजनाओं के लिए विभिन्न पेटेंटों का उपयोग करना होगा जिसकी फीस भी देनी होगी।

इसके अतिरिक्त कुछ देश सदैव के लिए उन्नत राष्ट्र हो जाएंगे और शेष राष्ट्र उनकी अपेक्षा में निम्न वर्ग के हो जाएंगे। कम मूल्य पर कच्चा माल



इन उन्नत राष्ट्रों को विकासशील राष्ट्रों से जाएगा और बदले में उन्नत राष्ट्र अत्यधिक नाम तथा फीस लेकर निर्मित वस्तुएं तथा तकनीक को विकासशील राष्ट्रों को देगे। इस प्रकार विकसित राष्ट्र सदैव उन्नत राष्ट्र बने रहेंगे और विकासशील राष्ट्र सदैव के लिए द्वितीय श्रेणी के राष्ट्र बन जाएंगे। इन द्वितीय श्रेणी के राष्ट्रों का शोषण भी हो सकता है और राजनैतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक गुलामी भी हो सकती है।

एक प्रमुख भारतीय राजनीतिज्ञ का वक्तव्य, कि हम दुर्भाग्यवश औद्योगिक क्रांति के समय जागरूक न थे, किंतु अब परमाणु क्रांति के समय हमें सोना नहीं चाहिए, यथार्थ है। औद्योगिक क्रांति में भाग न ले पाने के कारण भारत न केवल उद्योग में पिछड़ गया वरन् विदेशी शक्ति का गुलाम भी बन गया तथा देश का शोषण होता रहा। अतः इतिहास की पुनरावृत्ति न हो, हमारा ऐसा प्रयत्न होना चाहिए।

भारत सदा से परमाणु आयुधों के विरुद्ध है, किंतु चूंकि परमाणु विस्फोट के अनेक शांतिपूर्ण उपयोग भी हैं अतः वह उनके विरुद्ध नहीं हो सकता, क्योंकि उसके विरुद्ध होने का अर्थ है, अपनी प्रगति तथा उद्देश्यों के विरुद्ध होना। अतः यह भारत के हित में है कि वह अपने उपयोग के लिए परमाणु विस्फोट तकनीक का विकास कर, उसके उपयोग में सक्षम हो।

पोखरण का विस्फोट इसी उद्देश्य को प्राप्त करने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। मूलतः इस प्रयोग से निम्न बातों का अध्ययन किया गया :

1. विस्फोट के कारण चट्टानों का टूटना।
2. भूमि में गति उत्पन्न होना।
3. रेडियधर्मिता के फैलाव का अवरोधन।
4. विस्फोट के कारण उत्पन्न समस्याओं का निराकरण।

जैसा कि चित्र में दिखाया गया है, अंग्रेजी के अक्षर 'L' के आकार का विशाल कक्ष भूतल में खोदा गया। यह कक्ष 107 मीटर गहरा तथा 18 मीटर लम्बा था। कक्ष के अंतिम सिरे पर प्लूटोनियम निर्मित युक्ति रखी गई। इस युक्ति में उपयोग किया गया प्लूटोनियम भारत में भारतीय परमाणु भट्टियों से प्राप्त किया गया था।

'युक्ति' को एक छोटे कक्ष में रखा गया था और कक्ष को पूर्णतया बंद कर दिया गया था। 6 मीटर की गहराई तक विशाल कक्ष बालू के बोरो, कंक्रीट की शिलाओं तथा मिट्टी इत्यादि से भर दिया गया था। इस पूरी क्रिया को दो टेलीविजन कैमरे प्रदर्शित कर रहे थे।

स्थान का चुनाव करने के लिए यह ध्यान रखा गया है कि उसके आस-पास भूमिगत जलधारा न हो, अन्यथा विस्फोट के कारण उत्पन्न रेडियधर्मिता



जलधारा से दूर-दूर तक फैल सकती है। इसके अतिरिक्त दिन तथा विस्फोट समय निश्चित करने के लिए आवश्यक वायु की गति, दिशा तथा मौसम के अध्ययन के लिए मौसम अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की गई।

100 किलोमीटर की दूरी पर स्थित तीन मौसम केन्द्रों से प्राप्त गत 30 वर्षों की मौसम रिपोर्टों का अध्ययन किया गया। विस्फोट का समय ऐसा निश्चित किया गया कि यदि दुर्घटना के कारण रेडियधर्मिता वायुमण्डल में आ भी जाए तो भी उसका प्रभाव केवल निर्जन क्षेत्रों में ही सीमित रहे। जिस समय विस्फोट किया गया, उस समय वायु पश्चिम-दक्षिण से पश्चिम की ओर चल रही थी तथा उसकी गति 20 किलोमीटर प्रतिघंटा थी।

महस्थल को चुनने का भी कारण है। विस्फोट के कारण जो चट्टानें या मलबा ऊपर की ओर आता है, उन्हें ऊपर की रेत रोकने का प्रयास करती है।

युक्ति का विस्फोट करने के लिए उसे तार के द्वारा स्विच से जोड़ दिया गया था। विस्फोट के स्थान तक किलोमीटर अर्द्धव्यास के क्षेत्र में प्रवेश-निषेध था। सात किलोमीटर दूर स्थित गांव के निवासियों को एक स्थान पर एकत्र किया गया था। प्रातः 8.05 बजे स्विच दबाकर विस्फोट किया गया।

इस विस्फोट को 4 किलोमीटर दूर स्थित मचान से वैज्ञानिकों ने देखा। किंतु चूंकि भूमि के अंदर विस्फोट हुआ था अतः जो कुछ हुआ होगा उसे देखा न जा सकता, केवल कल्पना की जा सकती है।

अनुमान किया गया कि हजारों दिव्य सूर्यों के एकाएक उदय होने के समान विस्फोट से निश्चय ही बालू, चट्टानें तथा कंकड़ इत्यादि पिघलकर कांच के गोल ठोस पदार्थ में परिवर्तित हो गए होंगे। इस गोल ठोस पदार्थ में शेष रेडियधर्मी पदार्थ शोषित हो गया होगा (वास्तव में विस्फोट के बाद के परीक्षणों से इस अनुमान की सत्यता सिद्ध हुई)। विस्फोट बिंदु से 40 मीटर दूर ऐसे टुकड़े प्राप्त हुए हैं जिनकी रेडियधर्मिता अत्यधिक थी।

विस्फोट के बाद विस्फोट केन्द्र के आस-पास की भूमि गुम्बद के आकार की हो गई। गुम्बद 34 मीटर ऊंचा और 170 मीटर व्यास का था।

विस्फोट के तुरंत बाद के परीक्षणों से ज्ञात हुआ कि वायुमण्डल में विस्फोट के कारण कोई रेडियधर्मिता उत्पन्न न हुई। विस्फोट के कारण वायुमण्डलीय दाब में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

विस्फोट के कारण 47 मीटर व्यास और 10 मीटर गहरा गड्ढा विस्फोट केन्द्र के आस-पास बन गया था। विस्फोट के कारण जो भूकम्प तरंगें चली थीं उनकी तीव्रता 5 रिचटर थी।

एक किलो टन विस्फोट ऊर्जा के लिए 60 ग्राम प्लूटोनियम जलता है। इस प्रकार से केवल 720 ग्राम प्लूटोनियम जला होगा क्योंकि विस्फोट 12 किलो टन



का था। किंतु इसके लिए उपयोग में आया प्लूटोनियम 15 से 17 किलोग्राम होगा। अतः यह आवश्यक है कि किस प्रकार कम प्लूटोनियम का उपयोग कर, आवश्यक विस्फोट ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

चूँकि अनुपयुक्त प्लूटोनियम हानिकारक होता है अतः उसके दुष्प्रभावों को समाप्त करने की विधि भी खोजनी होगी। इसके अतिरिक्त अवशेष रेडियधर्मिता की समस्या भी है। अमरीका में किये गये विस्फोटों से यह ज्ञात हुआ है कि जो भूमि विस्फोट के उपरांत सामान्य लगती है, वह भी धीरे-धीरे बदल सकती है। इस प्रकार तथा अन्य प्राकृतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप अवशेष रेडियधर्मिता ऐसे स्थानों पर पहुँच सकती है जहाँ पर पहुँचने की कल्पना भी संभव न हो।

इन सब समस्याओं के समाधान के पश्चात् ही इस विस्फोट तकनीक का उपयोग सफलतापूर्वक किया जा सकेगा।



## रेडियधर्मी विकिरण : सभ्यता को समाप्त करने का षड्यन्त्र

रेडियम की खोज के दो वर्ष पश्चात् एक दिन पियरे क्यूरी ने अपनी बांह को रेडियम से निकलने वाले विकिरणों के सामने कर दिया। फलस्वरूप उनकी बांह का वह भाग झुलस गया जो रेडियम के सामने था। इस झुलसे अंग को ठीक होने में काफी समय लग गया। हेनरी बेकरल का सीना भी कोट की जेब में रखे रेडियम के कारण झुलस गया था।

उपर्युक्त सामान्य व्यक्तिगत दुर्घटनाएँ थीं। सन् 1925 ई० में अमरीका में एक बड़ी दुर्घटना हुई जिसने वैज्ञानिकों और जनता का ध्यान रेडियधर्मिता की ओर आकर्षित किया। घड़ियों के डायल को रंगने वाले उन दिनों ब्रुश को जीभ से गीला करते थे जिसमें रेडियमयुक्त पेंट होता था। कुछ दिनों में ही रेडियम का कुछ अंश पेंटों के दांतों में एकत्र हो गया जिसके कारण उनके जबड़ों में कैंसर हो गया।

इस दुर्घटना के कुछ वर्षों पश्चात् फरवरी, 1934 ई० में महान वैज्ञानिक मैडम-क्यूरी की मृत्यु रक्तहीनता (ल्यूकेमिया) के कारण हुई। इस रक्तहीनता का कारण भी रेडियधर्मी विकिरण थे।

उपर्युक्त दुर्घटनाएँ उस काल की हैं जब रेडियधर्मी विकिरणों के बारे में अनुसंधान प्रारम्भिक अवस्था में था। आज जब उनके गुण-अवगुण काफी कुछ ज्ञात हैं, तब भी विश्व के अनेक राष्ट्र उनके अवगुणों से आँख मूंदे हुए हैं।

इस सबसे यह प्रतीत होता है कि विश्व के कुछ राष्ट्र और उनके कुछ घनाढ्य तथा शक्तिशाली वर्ग अपने स्वार्थ में मदांघ हैं तथा वे कुचक्र के समर्थक बन गये हैं जिससे सभ्यता धीरे-धीरे विनाश के कगार की ओर बढ़ रही है।

इस संबंध में पिट्सबर्ग विश्वविद्यालय के प्राचार्य डॉ० स्टन ग्लास का कथन महत्वपूर्ण है कि “परमाणु विस्फोटों के कारण अमरीका के बच्चों की मृत्यु-दर में 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई है और इसका संभावित कारण रेडियधर्मी



अवताप है।

डॉ० स्टर्न ग्लास का कथन है कि अवपात से मानव-प्रजनन क्रियाओं को भारी क्षति पहुंची है तथा यदि परमाणु युद्ध हुआ तो मानव सभ्यता का अंत निश्चित है।

आइए, अब यह जानें की ऐसा क्यों होता है। रेडियधर्मी पदार्थ, जैसा कि आप जानते हैं, स्वतः उच्च ऊर्जावान कण या विद्युत चुम्बकीय किरणों या दोनों ही उत्सर्जित करते हैं। जब ये कण किसी माध्यम से गुजरते हैं तो उस माध्यम के परमाणुओं को या तो तोड़ते हैं या उनसे इलेक्ट्रॉन निकालते हैं। इस क्रिया को आयनित करना कहते हैं और इस प्रकार माध्यम आयनित हो जाता है।

विकिरणों के द्वारा माध्यम के आयनित हो सकने का गुण लाभप्रद तथा हानिप्रद दोनों ही है। पिछले अध्यायों में हमने विकिरणों के लाभकारी गुणों का विस्तृत अध्ययन किया है, अब इस अध्याय में हानिकारी अवगुणों का अध्ययन करेंगे।

विकिरणों के माध्यम को आयनित करने के गुण के कारण जीवित कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं तथा उन जैविक क्रियाओं को हानि पहुंचाते हैं जिनसे वंशानुगत विशेषताएं माता-पिता से पुत्र तथा पुत्री को प्राप्त होती हैं।

जीवों पर इन विकिरणों का जो प्रभाव पड़ता है, वह अनेक बातों पर निर्भर करता है, जैसे किरणों की प्रकृति पर। अल्फा किरणें शरीर में अधिक दूरी तक प्रवेश नहीं कर पाती हैं किंतु जहां तक जाती हैं, वहां तक उनका प्रभाव भीषण होता है क्योंकि उनकी ऊर्जा सीमित आयतन में ही व्यय हो जाती है। इसके विपरीत, बीटा और गामा किरणें अधिक दूरी तक प्रवेश कर सकती हैं और उनकी ऊर्जा अधिक आयतन में बिखर जाती है जिसके कारण इनका प्रभाव अल्फा किरणों की अपेक्षा कम तीव्र होता है।

विकिरण प्रभाव पर किरण स्रोत की स्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। किरण स्रोत शरीर के बाहर रह सकता है और साथ ही शरीर के अंदर भी। बाह्य स्रोत को हटाया जा सकता है और इस प्रकार उसका प्रभाव भी समाप्त हो जायेगा। किंतु आंतरिक स्रोत को हटाना संभव नहीं है अतः उसका प्रभाव तब ही समाप्त होगा जबकि वह स्वयं समाप्त हो जायेगा।

आंतरिक स्रोत चमड़ी तक भी रह सकता है या श्वास या अन्य माध्यम के द्वारा शरीर के आंतरिक भाग में पहुंच सकता है। इस प्रकार उससे केवल चमड़ी ही प्रभावित रह सकती है या शरीर के अन्य भाग भी प्रभावित हो सकते हैं।

विकिरण प्रभाव पर विकिरण खुराक की मात्रा और दर का भी प्रभाव पड़ता है। एकाएक अधिक मात्रा जो प्राणघातक हो सकती है, धीरे-धीरे वही मात्रा उपयोगी भी हो सकती है। इसी प्रकार विकिरणों का प्रभाव पूरे शरीर



में भी हो सकता है साथ ही, उसका प्रभाव एक स्थल पर केंद्रित भी हो सकता है। प्रथम परिस्थिति में यह प्रभाव अधिक कण्टप्रद होता है तथा दूसरी परिस्थिति में कम कण्टप्रद होता है।

उपर्युक्त विकिरण प्रभावों का संपूर्ण प्रभाव मानव पर दो प्रकार का हो सकता है: (1) यह प्रभाव केवल प्रभावित व्यक्ति तक ही सीमित रहे, तथा (2) यह प्रभाव उस व्यक्ति के वंश को भी प्रभावित करे। दूसरे प्रभाव में मानव की प्रजनन क्रिया तथा अंग भी प्रभावित हो जाते हैं।

शरीर के कुछ अंग इन विकिरणों से अधिक प्रभावित होते हैं और कुछ कम प्रभावित होते हैं। नेत्र, चमड़ी, रक्त उत्पन्न करने वाले अंग तथा प्रजनन अंग अधिक प्रभावित होते हैं, किंतु मांसल्य कोशिकाएं तथा तंत्र-तंत्रिकाएं कम प्रभावित होती हैं।

विकिरण खुराक अधिक न हो तो अधिक प्रजनन होने वाले अंग (नेत्र और प्रजनन अंगों को छोड़कर) विकिरण स्रोत के समाप्त हो जाने पर धीरे-धीरे स्वस्थ हो जाते हैं। किंतु यदि विकिरण खुराक अधिक और अधिक समय तक चली हो तो ये अंग स्थायी रूप से नष्ट हो जाते हैं। इसी कारण रेडियो डरमै-टिटिस हो जाता है, जो कुछ वर्षों के पश्चात् चर्म, कैंसर में परिवर्तित हो सकता है। यूरेनियम की खानों में कार्य करने वालों के फेफड़ों में तथा रक्त में कैंसर होने की संभावना रहती है।

यदि एकाएक विकिरणों की अधिक मात्रा किसी व्यक्ति को मिल जाती है तो उसे मतली, उलटी, थकावट और कमजोरी मालूम पड़ने लगती है। कभी-कभी रक्तस्राव भी हो सकता है और कुछ दिनों में मृत्यु भी हो सकती है।

अधिक अर्धआयु वाले पदार्थों की लघु मात्रा दीर्घकाल में अत्यंत हानिकारक हो सकती है, जैसे यदि रेडियम, प्लूटोनियम और स्ट्रांशियम की लघु मात्रा भी किसी प्रकार से हड्डी में प्रविष्ट हो जाये तो वे मज्जा को प्रभावित कर, रक्त कैंसर उत्पन्न कर देंगे। यूरेनियम विखंडन में स्ट्रांशियम-90 (अर्धआयु 28 वर्ष) उत्पन्न होता है। वैज्ञानिकों का ऐसा अनुमान है कि परमाणु बम विस्फोटों में उत्पन्न स्ट्रांशियम-90 मानव-शरीरों में भोजन, श्वास इत्यादि के द्वारा समा गया है जिससे रक्त-कैंसर के रोगियों की संख्या बढ़ी है।

प्रजनन क्रियाओं और अंगों पर विकिरणों के प्रभाव के बारे में खोज चल रही है किंतु ऐसा अनुमान है कि इन विकिरणों के प्रभाव से अपंगों, विकलांगों तथा विक्षिप्तों की संख्या में भी वृद्धि हो रही है।

प्लूटोनियम को अत्यंत हानिकारक पदार्थ माना गया है। यह हड्डी में प्रवेश कर, हड्डी का कैंसर उत्पन्न कर सकता है। श्वास-तंत्र के द्वारा फेफड़ों में प्रवेश कर, फेफड़े का कैंसर प्लूटोनियम का एक लघु कण उत्पन्न कर सकता है।



## विकिरणों से सुरक्षा

1. समस्या : ऊपर के अध्ययन से यह निश्चित हो गया कि विकिरणों के हानिकारक प्रभाव भी अत्यंत दुःखदायी हैं। अब प्रश्न यह है कि क्या इनके दुष्प्रभावों से सुरक्षित रहा जा सकता है ?

संभवतः आप यह जानते होंगे कि इन विकिरणों के दो मुख्य स्रोत हैं, (1) प्राकृतिक तथा (2) मानव-निर्मित।

प्राकृतिक रूप से प्राप्त विकिरणों के दो मुख्य खण्ड हैं : (1) पृथ्वी में विद्यमान रेडियधर्मी पदार्थों से उत्पन्न विकिरण तथा (2) कास्मिक किरणों के पदार्थों से टकराने के कारण उत्पन्न रेडियधर्मी आइसोटोपों, कार्बन-14 से उत्पन्न विकिरण तारों तथा खगोलीय पिंडों से प्राप्त उच्च ऊर्जावान विकिरण इत्यादि।

मानव-निर्मित विकिरण, परमाणु विस्फोटों, श्रृंखलित क्रियाओं, विखंडन क्रियाओं, स्वयं किरण उत्पादकों से उत्पन्न होते हैं।

परमाणु विस्फोट के तुरंत पश्चात् रेडियधर्मी अवपात प्रारंभ हो जाता है। इसमें अनेक प्रकार के रेडियधर्मी आइसोटोप (क्रिप्टन-85, रुबीडियम-87, स्ट्रॉन्शियम-90, सेसियम-137 इत्यादि) होते हैं। इन आइसोटोपों में से कुछ की अर्ध-आयु जैसे क्रिप्टन या स्ट्रॉन्शियम इत्यादि की 10 वर्ष से भी अधिक होती है। इनसे लगातार विकिरण विकिरित होते रहते हैं। वास्तव में, ऐसे उत्पन्न विकिरण ही समस्यामूलक हैं और इनसे ही सुरक्षा आवश्यक है।

इसी भांति परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों में भी परमाणु विखंडन के कारण विकिरण उत्पन्न होते हैं और इनका दुष्प्रभाव कार्यकर्ताओं पर पड़ सकता है। अतः इनसे भी सुरक्षा होना आवश्यक है।

रेडियधर्मी विकिरणों से सुरक्षा के प्रयास

इस समस्या का सबसे विशद पहलू यह है कि इन विकिरणों को मानवीय इंद्रियों से अनुभव नहीं किया जा सकता है।

सबसे पहले सन् 1928 ई० में अंतर्राष्ट्रीय रेडियधर्मी कांग्रेस ने इन विकिरणों की मात्रा की सुरक्षा सीमा निर्धारित की। इस सीमा-निर्धारण में यह विचार रखा गया कि यदि जीवनपर्यन्त सुरक्षा सीमा तक विकिरण की मात्रा मिले तो भी कोई हानि ग्राहक को न हो।

जैसे-जैसे रेडियधर्मिता के संबंध में ज्ञान-वृद्धि होती रही, वैसे-वैसे इस सुरक्षा सीमा में भी परिवर्तन किये जाते रहे। वर्तमान सुरक्षा सीमा उस मात्रा की 20 गुनी है जो सामान्य रूप से किसी विकसित देश के नागरिक को प्राप्त होती है। (किसी विकसित देश में विकिरण ऊर्जा सामान्यतः एक्स-रे मशीनों तथा

प्राकृतिक स्रोतों, वास्तव उत्पन्न रेडियधर्मी पदार्थों से प्राप्त होती है।)



क्योंकि विकिरणों की ऊर्जा दूरी के साथ घटती जाती है तथा उनकी ऊर्जा कम हो जाती है यदि माध्यम की मोटाई और घनत्व अधिक हो अतः रेडियधर्मी पदार्थों का उपयोग स्वचालित यंत्रों की सहायता से किया जाता है। यदि उत्पादित विकिरण अत्यधिक ऊर्जावान है तो रेडियधर्मी पदार्थों को अभेद परिरक्षक ढाल से घेर देते हैं।

जिन पदार्थों से तीव्र विकिरण नहीं निकलते हैं, उन्हें रक्षक दस्ताने और वस्त्र धारण कर, बंद बर्तनों में उपयोग में लाते हैं। रेडियधर्मी पदार्थों की खानों तथा संयंत्रों में इस बात का ध्यान रखा जाता है। रेडियधर्मी पदार्थों की खानों तथा संयंत्रों में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि वे ठीक प्रकार से वातायित हों। अर्थात् शुद्ध वायु में आ सकें और दूषित वायु बाहर निकल सके। इस दूषित वायु में उपस्थित रेडियधर्मी कणों को अलग करने का प्रबंध होता है जिससे वे नगर की वायु में मिल न सकें।

परमाणु संयंत्रों में उपयोग किये गये द्रवों तथा गैसों इत्यादि को कार्य की समाप्ति के उपरांत ऐसे संयंत्रों से गुजारते हैं जहां इनकी रेडियधर्मिता सुरक्षा सीमा के अंदर आ जाती है। व्यर्थ पदार्थों को भूमि में काफी नीचे कंक्रीट के संदूक में बंद कर दिया जाता है। (व्यर्थ पदार्थों की समस्या का उचित हल अभी प्राप्त नहीं हुआ है। वैसे समुद्र तथा नमक की खानों में भी व्यर्थ पदार्थों को दबाने का प्रस्ताव है।)

इन सब सावधानियों के बरतने के बाद भी उपकरणों तथा यंत्रों की सहायता से वायुमंडल में स्थित रेडियो सक्रियता को लगातार नापा जाता है और यदि कभी रेडियो सक्रियता सुरक्षा सीमा के पास पहुंचती है तो उसे कम करने के लिए प्रयत्न किये जाते हैं।

कार्यकर्ताओं की सुरक्षा को ध्यान में रखकर प्रत्येक परमाणविक संयंत्र यह प्रयत्न करता है कि उसके कार्यकर्ताओं को सुरक्षा से कहीं कम विकिरण-खुराक प्राप्त हो अतः वे कार्यकर्ताओं का प्रयोगशालाओं में रहने का समय निश्चित करते हैं तथा कार्य की समाप्ति पर उपकरणों की सहायता से उनके द्वारा ग्रहण की गई विकिरण मात्रा को ज्ञात किया जाता है। इस प्रकार से यह प्रयत्न किया जाता है कि इन व्यक्तियों के स्वास्थ्य को कोई हानि न पहुंचे।

इस संदर्भ में एक घटना का वर्णन करना उचित होगा। परमाणु बम निर्माण के प्रारम्भिक दिनों में एक परमाणु संयंत्र में कुछ टूट-फूट हो गई। इस टूट-फूट को सुधारने के लिए 950 व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ी जो केवल आधे-आधे मिनट तक कार्य कर, संयंत्र के बाहर निकल आए। इस समय से अधिक यदि वे रहते तो उनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ सकता था।

सब सावधानियों के बरतने पर भी दुर्घटना की सम्भावना



बनी ही रहती है। अतः प्रयत्न यह किया जाता है कि दुर्घटना का प्रभाव कम से कम पड़े।

### भारत के परमाणु प्रतिष्ठानों में विकिरण सुरक्षा

अमरीकी राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी की रिपोर्ट के अनुसार, यूरेनियम अयस्क को खानों से निकालकर और फिर उसे ईंधन में बदलने की प्रक्रिया में विकिरणों का दुष्प्रभाव सीमित होता है। विकिरणों का भीषण दुष्प्रभाव परमाणु भट्टियों के निर्माण संचालन ईंधन के उपयोग के उपरांत उसे दुबारा उपयोग में लाने के लिए की गई प्रक्रिया इत्यादि में दिखलाई पड़ता है। सबसे भीषण विकिरण समस्या परमाणु विद्युत परियोजनाओं में होती है।

न्यूक्लीय उद्योग में, जिस स्थान को किसी संयंत्र इत्यादि के लिए चुना जाता है उसके बारे में विस्तृत जांच-पड़ताल प्रारम्भ में की जाती है। न्यूक्लीय संयंत्र के कारण उत्पन्न विकिरणों का क्या दीर्घकालीन प्रभाव उसके आस-पास की आबादी पर पड़ सकता है, ज्ञात करने का भरसक प्रयत्न किया जाता है। मौसम तथा भौगोलिक परिस्थितियों का अध्ययन कर, यह ज्ञात करने का प्रयत्न किया जाता है कि यदि कोई दुर्घटना हो जाए तो उसका दुष्प्रभाव होगा।

स्थान के चुनाव के उपरांत परमाणविक संयंत्र तथा उससे संबंधित अन्य एककों के डिजाइन में सुरक्षा को प्राथमिकता दी जाती है। डिजाइन करते समय केवल सामान्य परिस्थितियों का ध्यान ही नहीं रखा जाता है वरन् उन परिस्थितियों का भी ध्यान रखा जाता है जो प्राकृतिक या अप्राकृतिक दुर्घटनाओं के कारण उत्पन्न हो सकती हैं।

स्थान के चुनाव के उपरांत भट्टी के विभिन्न यंत्रों में अत्यधिक सुरक्षा का ध्यान रखा जाता है। इन यंत्रों के डिजाइन तथा उत्पादन के समय यह भी ध्यान रखा जाता है कि विभिन्न यंत्र और उपकरण न केवल सामान्य कार्य के समय भली-भांति कार्य करें वरन् दुर्घटना के समय भी अपना कार्य सुचारु रूप से करते रहें। यही नहीं, दुर्घटना के दुष्प्रभावों को सीमित करने के लिए और उस पर काबू पाने के लिए जो सुरक्षा-व्यवस्था होगी वह भी तुरंत कार्य प्रारंभ कर देगी। किसी भी यंत्र के एकाएक कार्य को बंद कर देने से जो कठिनाई होगी उसका निराकरण या तो दूसरे उपकरण के द्वारा किया जायेगा या भट्टी स्वतः कार्य करना बंद कर देगी। उदाहरण के लिए, यदि भट्टी की शीतलन-क्रिया कार्य करना बंद कर दे तो ऐसे विकल्प का प्रावधान होता है जो स्वतः कार्य कर, भट्टी को विस्फोट से बचा देगा।



## रेडियधर्मी व्यर्थ पदार्थ

रेडियधर्मी व्यर्थ पदार्थों की तीव्रता को ध्यान में रखकर उनको तीन मुख्य भागों में बांटा जाता है : (1) कम तीव्रता के पदार्थ, (2) मध्य तीव्रता के पदार्थ, तथा (3) उच्च तीव्रता के पदार्थ। प्रथम दो प्रकार के पदार्थों के लिए वाष्पीकरण, आयन एक्सचेंज, रासायनिक क्रिया इत्यादि क्रियाओं का उपयोग किया गया है। अत्यन्त उच्च तीव्रता के व्यर्थ पदार्थों को ऐसी कंक्रीट की नली में बंद कर दिया जाता है जिसमें लोहे की चादर अन्दर लगी रहती है।

गैसों के लिए आभा परमाणु संस्थान ने कणों के छानने के लिए छन्ने बनाए हैं। इन छन्नों की क्षमता  $0.3 \times 10 - 6$  से  $0.10$  होती है। इन छन्नों से भट्टी से निकली गैसों में से क्रिप्टन, जेनन, आयोडीन, ट्रिटियम को छान लिया जाता है और उनके दुष्प्रभावों को समाप्त किया जाता है। सबसे कठिन समस्या उच्च रेडियधर्मिता के व्यर्थ पदार्थों की है। इस व्यर्थ पदार्थ में यूरेनियम, प्लूटोनियम तथा अन्य यूरेनियमोत्तर तत्वों के अंश भी होते हैं। अनुमान किया जाता है, सन् 2000 ई० तक लगभग  $3.3 \times 10^{12}$  क्यूरी रेडियधर्मिता इस व्यर्थ पदार्थ में एकत्र हो जाएगी। यह रेडियधर्मिता ही वास्तव में वैज्ञानिकों के लिए जटिल है। क्योंकि इस व्यर्थ पदार्थ की रेडियधर्मिता अगले 900 वर्षों तक बनी रहेगी और अगले 1,00,000 वर्षों के पश्चात् अहानिकारक हो पायेगी।

यद्यपि भूमिगत तालाब बनाये गये हैं किंतु उन तालाबों से कम या अधिक रेडियधर्मी पदार्थ निकल गये हैं। अतः यह प्रयत्न किया जा रहा है कि ऐसे पदार्थों को उन पदार्थों से बने बर्तनों में रखा जाये जिनमें से वे कभी निकल न सकें। भारत में कुछ अन्य विधियों की भी खोज की गई है जैसे भूमिगत खाइयों में या नमक की खानों में रखना। इसके अतिरिक्त व्योम में भी 33 राकेटों की सहायता से फेंके जाने की सम्भावना व्यक्त की गई है।

भारत के परमाणु प्रतिष्ठानों में विकिरण सुरक्षा को आवश्यक महत्त्व दिया जाता है। आयोग ने इसे देशव्यापी समस्या माना है अतः इस समस्या के वैज्ञानिक हल के लिए विकिरण सुरक्षा निदेशालय की स्थापना की गई है। यह निदेशालय देश के सब भागों में जहां कहीं रेडियधर्मी पदार्थों का उत्पादन होता है, विकिरण सुरक्षा का ध्यान रखती है। इस सुरक्षा के अंतर्गत फिल्म बैज का उपयोग करना पड़ता है जिससे समय-समय पर यह ज्ञात किया जाता है कि कितना विकिरण व्यक्ति-विशेष को प्राप्त हुआ है। वैज्ञानिकों का दल उन सब प्रतिष्ठानों में विकिरणों की नापजोख करता है जहां रेडियधर्मी पदार्थों का उपयोग किया जाता है और इस प्रकार विकिरणों के प्रभाव को सीमित रखा जाता है।



## तारापुर परमाणु विद्युत घर में विकिरण सुरक्षा

सन् 1957 ई० में विंडस्केल (ब्रिटेन) परमाणु विद्युत घर के यूरेनियम टुकड़ों में आग लग जाने के कारण रेडियो आयोडीन वातावरण में फैल गई। प्रारंभ में इसकी चिंता नहीं की गई किंतु कुछ समय पश्चात् यह देखा गया कि रेडियो आयोडीन दूध में उपस्थित है। इस घटना ने परमाणु वैज्ञानिकों को और अधिक सुरक्षा उपाय करने के लिए बाध्य कर दिया।

तारापुर परमाणु विद्युत घर में उपयुक्त जल समुद्र से प्राप्त किया जाता है तथा उपयोग के पश्चात् उसे फिर समुद्र में वापस कर दिया जाता है। चूंकि तारापुर समुद्र तट में नमक का उत्पादन होता है अतः यह संभावित है कि यह प्रयुक्त जल नमक के खेतों में पहुंच जाये। इसके अतिरिक्त समुद्र तट पर मछुवारों के गांव भी हैं। अतः तारापुर की विकिरण सुरक्षा अन्य संस्थाओं से भिन्न है।

अतः तारापुर और उसके आस-पास के निवासियों की पूर्ण-रूपेण विकिरण सुरक्षा के लिए वैज्ञानिक उपायों के द्वारा लगातार प्रेक्षण लिये जाते हैं तथा भोज्य पदार्थों, जल और वायु में उपस्थित विकिरण की मात्रा ज्ञात की जाती है। इन सब प्रेक्षणों से वायुमण्डल, वातावरण, जल, भोजन इत्यादि में विकिरण की मात्रा को नियंत्रित रखा जाता है जिससे विकिरण-प्रदूषण न हो सके।



## परमाणु युद्ध : नागरिक सुरक्षा के प्रयत्न

### परमाणु युद्ध सम्भावना

अनेक प्रमुख भविष्यवक्ताओं का कथन है कि परमाणु युद्ध की संभावना दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। दुःख की बात यह है कि यह युद्ध राज-नीतिज्ञों और राज्यों की प्रतिस्पर्धा के कारण न होकर छोटे दर्जे के अधिकारियों की मानवीय त्रुटियों के कारण संभावित है।

जैसा कि आप जानते हैं, परमाणु युद्ध के आरंभ में केवल संयुक्त राज्य अमरीका के पास वह वैज्ञानिक ज्ञान था जिसका उपयोग कर, वह परमाणु आयुध बना सकता था। इस प्रकार उसका इस क्षेत्र में आधिपत्य था। किंतु शीघ्र ही रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन ने विभिन्न प्रकार के परमाणु आयुध बना लिये हैं। इन आयुधों को दुश्मन के ठिकानों पर प्रहार करने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रक्षेपास्त्रों का निर्माण भी कर लिया गया है।

यद्यपि रूस और चीन के परमाणु आयुधों की वास्तविक संख्या अज्ञात है किंतु केवल अमरीका के ही 30,000 परमाणु आयुध दुश्मन के ठिकानों पर प्रहार करने के लिए सदैव तैयार रहते हैं। कुछेक परमाणु आयुध तो इतने विशाल हैं कि उनकी विनाश-क्षमता हिरोशिमा के परमाणु बम की 30 गुनी है।

इन आयुधों को प्रहार करने के लिए जिन प्रक्षेपास्त्रों का निर्माण किया गया है, उनमें से एक प्रक्षेपास्त्र 10 मीटर के घेरे में सही निशाना लगा सकता है।

एक प्रतिवेदन के अनुसार, अमरीका 3 परमाणु आयुध प्रतिदिन की दर से बनाता है और उसके परमाणु आयुध एशिया, यूरोप, संयुक्त राज्य अमरीका और समुद्र में स्थित हैं।

लगभग 7,000 परमाणु आयुध यूरोप में, 1700 परमाणु आयुध एशिया और 7,000 परमाणु आयुध समुद्र में हैं। अमरीकी जल सेना 12,000 परमाणु आयुधों का प्रहार कर सकती है। अमरीकी जल सेना के 56 प्रतिशत जलयान



और पनडुब्बियां परमाणु आयुधों से लैस हैं। यह प्रतिशत भी बढ़ रहा है। अनेक ऐसे जलयान और पनडुब्बियां भी हैं जिनमें परमाणु विस्फोटक के साथ-साथ सामान्य विस्फोटक पदार्थ भी रहता है।

**युद्ध : कैसे ?**

परमाणु युद्ध की संभावना का मुख्य कारण प्रहार व्यवस्था का अनियंत्रित हो जाना है। यदि भूलवश या मानवीय त्रुटियों के फलस्वरूप कोई प्रहार व्यवस्था किसी दुश्मन देश की ओर अग्रसर हो जाए तो निश्चय ही उस देश की सुरक्षा-व्यवस्था अपना कार्य प्रारंभ कर देगी और जब तक गलती ज्ञात हो तब तक पूर्ण विनाश हो चुका होगा। यह असंभव है कि दुश्मन राष्ट्र की सुरक्षा-व्यवस्था पहले यह ज्ञात करे कि प्रहार-व्यवस्था त्रुटि के फलस्वरूप आगे बढ़ी है।

यह भी संभव है कि प्रहार-व्यवस्था के प्रक्षेपास्त्र वास्तव में प्रहार करने के लिए आगे न बढ़ें किंतु सूचना यंत्रों से ऐसा होने की गलत सूचना मिले तब भी युद्ध की संभावना है। (ग्रीनलैण्ड के थ्यूल नामक स्थान पर एकाएक सूचना मिली कि कुछ प्रक्षेपास्त्र युद्ध प्रहार के लिए बढ़ रहे हैं किंतु जब इस सूचना को अन्य स्रोतों से सुनिश्चित किया गया तो ज्ञात हुआ कि यह गलत थी और ऐसा राडार संकेतों के चन्द्रमा से परावर्तित होने के कारण आभासित हुआ था।)

आश्चर्य की बात यह है कि जितना अधिक अंतर्राष्ट्रीय तनाव होगा, उतना ही अधिक युद्ध-तंत्र युद्ध के लिए तैयार होगा और उससे कहीं अधिक मानवीय त्रुटि की संभावना होगी।

जैसे-जैसे युद्ध और आयुध व्यवस्था जटिल होती जाती है और चेतावनी प्राप्त होने तथा फैसला करने में समय घटता जा रहा है, वैसे-वैसे परमाणु युद्ध प्रारंभ करने या न करने का निर्णय छोटे सेना अधिकारियों पर निर्भर करने लगा है। अमरीकी सुरक्षा विशेषज्ञ हरबर्ट यार्क के अनुसार, "सर्वप्रथम युद्ध आरंभ करने को अधिक महत्त्व देना, दुर्घटना के कारण युद्ध का आरंभ होना और राष्ट्रों के जीवन-मृत्यु-संबंधी निर्णय छोटे अधिकारियों को प्राप्त हो जाना ही आज की सबसे बड़ी विडम्बना है।"

**परमाणु आयुध : दुर्घटना और विस्फोट**

जब हजारों परमाणु आयुध वायु में, समुद्रतल पर, समुद्रतल के नीचे, और भूमि पर स्थित हैं तो क्या दुर्घटना नहीं हो सकती है।

अनेक प्रकार की दुर्घटनाएं संभव हैं। स्वयं परमाणु आयुध में विस्फोट संभव है। परमाणु आयुध के न्यूक्लीय क्रोड के चारों ओर स्थित विस्फोटक में आग लग सकती है और फलस्वरूप अत्यंत हानिकारक प्लूटोनियम वातावरण में



बिखर सकता है। इस संबंध में ध्यान देने योग्य बात यह है कि एक पौण्ड प्लूटोनियम  $10^{12}$  व्यक्तियों के फेफड़ों में कैंसर उत्पन्न कर सकता है तथा सन् 1985 ई० के अंत तक 2,00,000 पौण्ड प्लूटोनियम का उत्पादन प्रतिवर्ष होने लगेगा। एक परमाणु आयुध में 8,80,000 व्यक्तियों को मौत के घाट पहुंचा देने की क्षमता है।

क्या दुर्घटना हुई है? वास्तव में, अनेक न्यूक्लीय दुर्घटनायें हो चुकी हैं। लाइटन बर्ग ने अपनी पुस्तक में 33 बड़ी दुर्घटनाओं का वर्णन किया है। इन दुर्घटनाओं में परमाणु आयुध प्रहार तंत्र नष्ट हो गये, परमाणु आयुध नष्ट हो गये या खो गये।

23 जनवरी, 1961 ई० को एक बी-52 बमवर्षक वायुयान अमरीका नार्थ कैरोलिना नामक राज्य में गिरकर टूट गया। इस विमान में 24 मेगाटन के दो परमाणु आयुध थे। एक तो विमान के मलवे में पड़ा रहा किन्तु दूसरा मलवे से दूर एक खेत में गिरा था। यद्यपि दोनों ही सुरक्षित थे किंतु विस्फोट न होने देने के लिए जो व्यवस्था इन आयुधों में थी, उनमें 6 व्यवस्थाओं में से 5 व्यवस्थाएं टूट चुकी थीं। एक प्रमुख वैज्ञानिक के कथनानुसार यदि 24 मेगाटन का बम 11,000 फीट की ऊंचाई पर विस्फोटित हो जाए तो जो आग का गोला उत्पन्न होगा उसका अर्धव्यास 2 मील लगा तथा 12.5 मील के अर्धव्यास में स्थित सब भवनों को वह गोला आत्मसात् कर जाएगा। 34 मील के अर्धव्यास में स्थित सब ज्वलनशील वस्तुओं को उपर्युक्त गोला जला डालेगा।

संपूर्ण विश्व में सन् 1950 ई० से 1973 ई० तक 63 न्यूक्लीय दुर्घटनायें हुई हैं। यह भी संभव है कि अनेक दुर्घटनाओं को छिपा डाला गया हो। सौभाग्य से अभी तक कोई न्यूक्लीय विस्फोट नहीं हुआ है—भाग्यवश या अभिकल्प के कारण यह बात नहीं है।

**अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद : परमाणु आयुधों की असुरक्षा**

दिन-प्रतिदिन आप विभिन्न राजनैतिक कारणों के फलस्वरूप आतंकवादियों के द्वारा वायुयान, रेलगाड़ी तथा भवनों और होटलों पर कब्जा करने और उनके यात्रियों तथा निवासियों को आतंकित कर अपने राजनैतिक उद्देश्य को पूरा करने का प्रयत्न किया जाता है।

यदि ऐसे राजनैतिक समूहों के हाथ परमाणु आयुध या न्यूक्लीय विस्फोटक लग जाए तो क्या होगा? इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है।

जैसे-जैसे प्लूटोनियम-उत्पादक देशों की संख्या बढ़ती जा रही है, वैसे-वैसे आतंकवादियों की समस्या भी गहन होती जा रही है। क्योंकि प्लूटोनियम असुरक्षित होता जा रहा है तथा परमाणु आयुधों के असामाजिक तत्त्वों तथा



आतंकवादियों के हाथ में आ जाने की संभावना बढ़ती जा रही है। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि यदि प्लूटोनियम का उत्पादन बढ़ता रहा तो वह समय दूर नहीं है जब प्लूटोनियम का उपयोग उसी भांति होने लगेगा जैसे सामान्य विष या विस्फोट का होता है। (प्लूटोनियम की बहुत कम मात्रा कैंसर उत्पन्न कर सकती है)।

इस क्षेत्र में आतंकवादियों के संभावित प्रवेश से परमाणु युद्ध भी संभव है। कल्पना कीजिए कि विश्व के किसी देश में एक परमाणु आयुध का विस्फोट होता है। निश्चय ही उस देश के सुरक्षा-तंत्र का ध्यान अपने दुश्मन देश की ओर जाएगा और यदि वह न्यूक्लीय राष्ट्र है तो बिना पता लगाए कि वह विस्फोट कैसे और किसने किया है, वह राष्ट्र परमाणु आयुधों के प्रहार का आदेश दे देगा और इस प्रकार युद्ध संभव हो जाएगा।

आतंकवादियों की इस संभावित समस्या से निपटने के लिए परमाणु आयुधों की कड़ी सुरक्षा की जाती है। अमरीका के एक परमाणु आयुध भंडार की सुरक्षा-व्यवस्था कैसी है, जरा यह जानिए।

सर्वप्रथम जो व्यक्ति भंडार में प्रवेश करना चाहता है, वह एक मशीन के सामने खड़ा होकर उसके 'की बोर्ड' पर एक कोड संख्या को छापता है। यदि कोड संख्या सही होती है तो मशीन से आवाज आती है 'चार शब्द बोलिए।' जब वह व्यक्ति चार शब्द बोलता है तो ध्वनि की जांच मशीन द्वारा की जाती है और यदि मशीन यह समझती है वह सही व्यक्ति है तो मशीन उसको धन्यवाद देती है। इसके बाद वह व्यक्ति एक-दूसरी मशीन के सामने जाता है जहां पर उसकी हस्तलिपि की जांच की जाती है। यदि उसकी हस्तलिपि जांचने के बाद सही मिलती है तो उसे तीसरी मशीन के सामने जाने का आदेश मिलता है जहां पर उसकी हस्तरेखाओं की जांच की जाती है। यदि इस बार भी वह सही व्यक्ति मिलता है तब ही वह भंडार में प्रवेश कर पाता है।

इतनी कड़ी सुरक्षा-व्यवस्था के होने पर भी अमरीकी सेवा-अधिकारियों का मत है कि सुरक्षा-व्यवस्था तोड़ी जा सकती है।

अतः इस समस्या का केवल एक हल है और वह है पूर्ण निरस्त्रीकरण तथा भयरहित और शोषणरहित समाज की स्थापना। यदि सब देश इस ओर प्रयास करें तो सफलता अवश्य मिलेगी।

किन्तु यदि परमाणु युद्ध हो जाए तब क्या करना चाहिए? भारत की समस्या गुरुतर है। भारत का पड़ोसी देश चीन, न्यूक्लीय देश है और गुप्त सूचनाओं के अनुसार उसके पास ऐसे प्रक्षेपास्त्र भी हैं जिनसे वह भारत के प्रमुख नगरों पर परमाणु आयुधों का प्रहार कर सकता है। दूसरी ओर, पाकिस्तान फ्रांस से प्लूटोनियम उत्पादन संयंत्र को क्रय करने का प्रयत्न कर



रहा है जिससे वह परमाणु आयुधों के लिए आवश्यक प्लूटोनियम को स्वयं अपने देश में अपनी परमाणु भट्टियों से प्राप्त जले ईंधन से अलग कर सके। इस प्रकार पाकिस्तान भी शीघ्र न्यूक्लीय राष्ट्र बन सकता है। अतः परमाणु युद्ध की सम्भावना से बिल्कुल इन्कार नहीं किया जा सकता है।

परमाणु बम प्रहार के दुःप्रभावों को समझने तथा उनसे बचाव के लिए हमें परमाणु बम तथा सामान्य विस्फोटक बम के अंतर को समझना होगा।

सामान्य बम के विस्फोट से एकाएक जो भी हानि होती है, वह हो जाती है और उसके उपरान्त उसका प्रभाव नहीं रहता है। इसके विपरीत, परमाणु बम का प्रहार अनेक वर्षों तक रहता है, साथ ही आस-पास के प्रदेश में सीमित न रहकर दूर-दूर तक फैल जाता है।

### हिरोशिमा और नागासाकी

यह सर्वविदित है कि प्रथम परमाणु प्रहार 6 अगस्त, 1945 ई० को हुआ जिसमें लगभग 66,000 व्यक्ति मरे, तथा 69,000 व्यक्ति घायल हुए और 4 वर्ग मील का क्षेत्र पूरी तरह से नष्ट हो गया। इस प्रहार के चौथे दिन दूसरा और अन्तिम प्रहार नागासाकी पर हुआ। भाग्यवश इस प्रहार में प्रथम प्रहार के अनुरूप हानि न हुई। तब भी लगभग 39,000 व्यक्ति मरे और 25,000 व्यक्ति घायल हुए। इसका मुख्य श्रेय नागासाकी की पहाड़ियों को था जिन्होंने शाँक वेव को फैलने न दिया। अतः बम के प्रभाव को प्रकृति सीमित कर सकती है।

### परमाणु बम प्रहार के सम्भावित प्रभाव

परमाणु बम विस्फोट से दो मुख्य क्रियाएं सम्भावित हैं : (1) अत्यन्त उच्च ताप का गैस-गोला उत्पन्न होता है जो ऊपर उठता जाता है। यह गोला यूरेनियम तथा इस्पात गैस का बना होता है। इसके अतिरिक्त पृथ्वी के आस-पास की वायु गर्म होकर पृथ्वी तल के समानान्तर फैल जाती है। यह वायु अत्यन्त तीव्र वेग से आगे बढ़ती है और जो कुछ उसके मार्ग में पड़ता है उसे नष्ट करती जाती है। (2) रेडियधर्मी पदार्थ तीव्र गति से बिखर जाता है जिससे उच्च ऊर्जावान रेडियधर्मी किरणें निकलती हैं जो दूर-दूर तक फैल जाती हैं।

प्रथम क्रिया से विस्फोट केन्द्र के आस-पास का क्षेत्र नष्ट हो जाता है और दूसरी क्रिया से रेडियधर्मी प्रभाव उत्पन्न होते हैं, जो वर्षों तक चलते हैं। प्रथम क्रिया में उत्पन्न गैस-गोले से ही रेडियधर्मी अवपात होता है जो विस्फोट के कई घंटे पश्चात् होता है।

यदि एक 15 मेगाटन बम का विस्फोट किया जाय तो विस्फोट केन्द्र के



चारों ओर 5 मील का प्रदेश उत्पन्न ऊष्मा के कारण पूर्णतया नष्ट हो जायेगा। 10 मील का प्रदेश लगभग पूर्ण और 20 मील का प्रदेश कुछ-कुछ नष्ट हो जायेगा। रेडियधर्मी विकिरणों का प्रभाव वायु की दिशा में 7,000 वर्ग मील क्षेत्र तक फैल जायेगा।

विस्फोट केन्द्र से 160 मील दूर खड़ा व्यक्ति भी इन रेडियधर्मी किरणों से अछूता न रहेगा। विस्फोट के लगभग 8 घंटे के पश्चात् रेडियधर्मी परमाणु बम प्रहार के कारण दो मुख्य प्रभाव होते हैं: (1) शॉक वेव का जन्म जिसके कारण भवन इत्यादि नष्ट हो जाते हैं, तथा (2) रेडियधर्मी विकिरणों का प्रभाव जिसके कारण रक्तक्षीणता, दृष्टिहीनता, गंजापन, कैंसर, मानसिक विक्षिप्तता, नपुंसकता इत्यादि रोग हो जाते हैं तथा अनेक रोगी मृत्यु के प्रास बन जाते हैं।

परमाणु बम के प्रथम प्रभाव को कम कर पाना संभव नहीं है किन्तु दूसरे प्रभाव से होने वाली हानि की उपयुक्तता सावधानी बरतकर कम की जा सकती है।

### परमाणविक शरणालय

परमाणु युद्ध की संभावना के फलस्वरूप यह आवश्यक हो जाता है कि नगरों में धनीकृत कंक्रीट के भूमिस्थ शरणालय बनाए जाएं। ये शरणालय निवास-स्थानों, कार्यालयों, उद्योग-संस्थानों के भवनों के नीचे बनाए जा सकते हैं। इस प्रकार के शरणालयों में इस्पात के द्वार लगे होने चाहिए जिससे शरणालय में रेडियधर्मी विकिरण प्रवेश न कर सके। इनके वातायनों में यंत्र लगे होने चाहिए जो शरणालय की वायु को स्वच्छ और ताजा रख सकें। शरणालय में भोजन, जल तथा मनोरंजन की व्यवस्था भी होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त आग से बचाव करने वाले उपकरण कुदाल, सांभर, बालू इत्यादि भी होना चाहिए जिनका आवश्यकता पड़ने पर उपयोग किया जा सके।

यद्यपि सामान्य बमबारी के लिए खुली इकाइयों का उपयोग ठीक है किन्तु यदि ऊपर से पटी खाइयां बनाई जायें (जैसी पाकिस्तान ने इच्छोगिल नहर के पश्चिमी तट पर बनाई हैं) तो वे सुरक्षा प्रदान कर सकती हैं क्योंकि परमाणविक विस्फोटकों का प्रभाव भूमि के अन्दर कम होता है।

### बम विस्फोट होने पर

स्व-सुरक्षा के लिए सबसे आवश्यक बात यह है कि प्रभावित व्यक्तियों को अपना मनोबल, साहस और धैर्य बनाए रखना चाहिए। बम विस्फोट होने पर उनका सबसे पहला प्रयत्न यह होना चाहिए कि वे परमाणविक शरणालय में शरण ले लें। यदि पास में कोई शरणालय न हो तो सबसे पास के भवन में जाना



चाहिए और किसी दीवार के किनारे या मेज के नीचे पट लेट जाना चाहिए और स्वयं को कपड़े या कागज से ढक लेना चाहिए। किन्तु यह सब कार्य अत्यन्त शीघ्रता से होना चाहिए क्योंकि कुछ सेकंडों में ही ऊष्मा तथा रेडियधर्मी विकिरण आप तक पहुँच जायेगा।

बम विस्फोट के तुरन्त बाद नागरिक सुरक्षा सेवाओं को अपना कार्य प्रारंभ कर देना चाहिए। इन सेवाओं के निम्नलिखित कार्य होने चाहिए :

1. नागरिकों को जलते और टूटते मकानों से निकालना तथा उन्हें सुरक्षित स्थान जैसे शरणालय में पहुँचाना। (लगभग 50 प्रतिशत मौतें जलने, चोट लगने और मानसिक धक्के के कारण होती हैं।) यह कार्य इतनी तीव्रता से होना चाहिए कि रेडियधर्मी अवपात आरम्भ होने के पूर्व समाप्त हो जाए।
2. जो लोग विस्फोट केन्द्र के आस-पास के क्षेत्र में थे उनके द्वारा ग्रहण की गई रेडियधर्मिता की जांच होनी चाहिए और यह मात्रा हानिकारक सीमा के अंदर हो तो आवश्यक उपचार होना चाहिए।

### अवपात होने पर

अवपात विस्फोट के कितने समय पश्चात् होगा, कब तक होता रहेगा तथा कितनी दूर तक होगा, यह बम की प्रकृति तथा विस्फोट स्थान पर निर्भर करता है। यदि कम ऊर्जा का बम विस्फोट किया गया है तो शीघ्र अवपात हो सकता है, किन्तु यदि उच्च ऊर्जावान बम का विस्फोट किया गया है तो अवपात में कुछ अधिक समय लग सकता है तथा अधिक देर तक होता रहेगा चूंकि अवपात का समय ही अधिक खतरनाक है, अतः इस समय अधिक सावधानी आवश्यक है।

### पुराना बुरका : नवीन उपयोग

वैसे जहां तक संभव हो, जब तक अवपात समाप्त न हो जाए और अवपात के कारण उत्पन्न रेडियधर्मिता सुरक्षा सीमा के अन्दर न आ जाए शरणालय से से बाहर न निकलना चाहिए। किन्तु यदि बाहर निकलना ही पड़े तो अपने को बुरके में छिपा लेना चाहिए।

### कुछ अन्य सावधानियां

यदि किसी स्थान पर अधिक अवपात हुआ हो और रेडियधर्मिता के कम होने के आसार न हों तो उस स्थान को पानी से धुलवाकर उस पर अरेडियधर्मी मिट्टी बिछा देनी चाहिए।

जलाशयों के जल की रेडियधर्मिता की जांच करनी चाहिए तथा यदि रेडियधर्मिता सुरक्षा सीमा से अधिक हो तो उसका उपयोग तब तक न करना चाहिए जब तक जल की रेडियधर्मिता सुरक्षा सीमा के अन्दर न आ जाए।



भोजन सामग्री की भी सावधानी से परख की जानी चाहिए। यदि आवश्यक हो तो छिलके को निकालकर भी रेडियधर्मिता की परख की जानी चाहिए।

### रेडियधर्मिता के कारण उत्पन्न रोगों का निदान

यद्यपि रेडियधर्मी विकिरणों के कारण उत्पन्न रोगों का पूर्ण निदान संभव नहीं है, तथापि कुछ रोगों में कुछ औषधियों से लाभ संभव है।

मतली, उल्टी, रक्तक्षीणता तथा डरमैटिटिस (त्वचा रोग) में पाइरो-डाक्सीन हाइड्रोक्लोसल से लाभ पहुंच सकता है। यदि जलन हो रही हो तो साइनोसोबालेगिन लाभकारी है।



## तीव्र प्रजनक परमाणु भट्टी

**प्रश्न :** परमाणु ऊर्जा आयोग के पास तीन ट्रक प्लूटोनियम था। आयोग ने एक ट्रक का उपयोग कर, बंबई को विद्युत दी। शेष कितना प्लूटोनियम आयोग के पास बचा ?

**उत्तर—**4 ट्रक प्लूटोनियम

उपर्युक्त प्रश्न गणित का नहीं है अतः इसका उत्तर भी गणित से प्राप्त नहीं होगा। यह प्रश्न परमाणु भौतिकी का है अतः उत्तर भी परमाणु भौतिकी के सिद्धांत से प्राप्त होगा।

तीव्र प्रजनन भट्टियों के सिद्धांत से प्रश्न का सही उत्तर मिलेगा। इस प्रकार की भट्टियों में जितना ईंधन व्यय होता है, उससे कहीं अधिक ईंधन उत्पन्न होता है।

**आवश्यकता :** भारत में कार्य करने वाली परमाणु भट्टियों में प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग होता है। भारत में ज्ञात यूरेनियम से ऐसी भट्टियों को केवल 30 वर्षों तक चलाया जा सकता है, यदि वे 15,000 मेगावाट विद्युत का उत्पादन करें। किन्तु प्राकृतिक यूरेनियम में U-235 का ही विखण्डन होता है और U-238 न्यूट्रॉनों को बंदी कर प्लूटोनियम-239 (Pu-239) में बदल जाता है। अतः प्राकृतिक यूरेनियम का पूर्णरूपेण उपयोग करने के लिए आवश्यक है कि उपस्थित यूरेनियम-238 को प्लूटोनियम-239 में परिवर्तित किया जाये। यह कार्य तब ही संभव है जब भट्टी में उत्पन्न न्यूट्रॉनों का पूरा उपयोग हो।

भारत में ज्ञात यूरेनियम की मात्रा अधिक नहीं है किन्तु थोरियम काफी मात्रा में है। इस बात को ध्यान में रखकर प्रथम चरण में ऐसी परमाणु भट्टियों को स्थापित करने का प्रस्ताव है जिनमें प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग हो। इन भट्टियों में विद्युत शक्ति के साथ-साथ प्लूटोनियम का भी उत्पादन होगा। दूसरे चरण में ऐसी परमाणु भट्टियां लगाई जायेंगी जहां और अधिक प्लूटोनियम तथा थोरियम से यूरेनियम-239 (U-239) का उत्पादन किया जाएगा। तीसरे चरण



में यूरेनियम-233 और थोरियम का उपयोग होगा।

भारत में तारापुर में बने परमाणु विद्युत घर को छोड़, शेष सब कार्य कर रहे या निर्माणरत परमाणु विद्युत घरों में प्लूटोनियम का उत्पादन होगा।

### प्रजनन भट्टी सिद्धांत

जैसा कि आप जानते हैं कि भट्टी में उत्पन्न न्यूट्रॉनों के पूर्णरूपेण उपयोग से यूरेनियम-238 से प्लूटोनियम और थोरियम से U-233 (यूरेनियम-233) का उत्पादन किया जा सकता है।

1. प्राकृतिक यूरेनियम—प्लूटोनियम और विद्युत
2. प्लूटोनियम + थोरियम — यूरेनियम-233 + विद्युत
3. प्लूटोनियम + यूरेनियम-238 — प्लूटोनियम + विद्युत
4. यूरेनियम 233 + थोरियम—यूरेनियम 233 + विद्युत

किसी खण्डनीय पदार्थ में एक न्यूट्रॉन के शोषित हो जाने के कारण जितने न्यूट्रॉन उत्पादित होते हैं उन्हें हम  $n$  से प्रदर्शित करते हैं। इन न्यूट्रॉनों में से एक न्यूट्रॉन का उपयोग शृंखलित क्रिया को आगे बढ़ाने में किया जाता है। इस प्रकार -1 न्यूट्रॉन ही यूरेनियम-238 को प्लूटोनियम-239 में परिवर्तित करेंगे इनमें से कुछ न्यूट्रॉन परमाणु भट्टी से बाहर भी निकल सकते हैं और आस-पास के पदार्थों में शोषित भी हो सकते हैं। अतः विखण्डनीय परमाणुओं की जो संख्या उत्पादित होगी, वह विखंडित परमाणुओं से सदैव कम होगी।

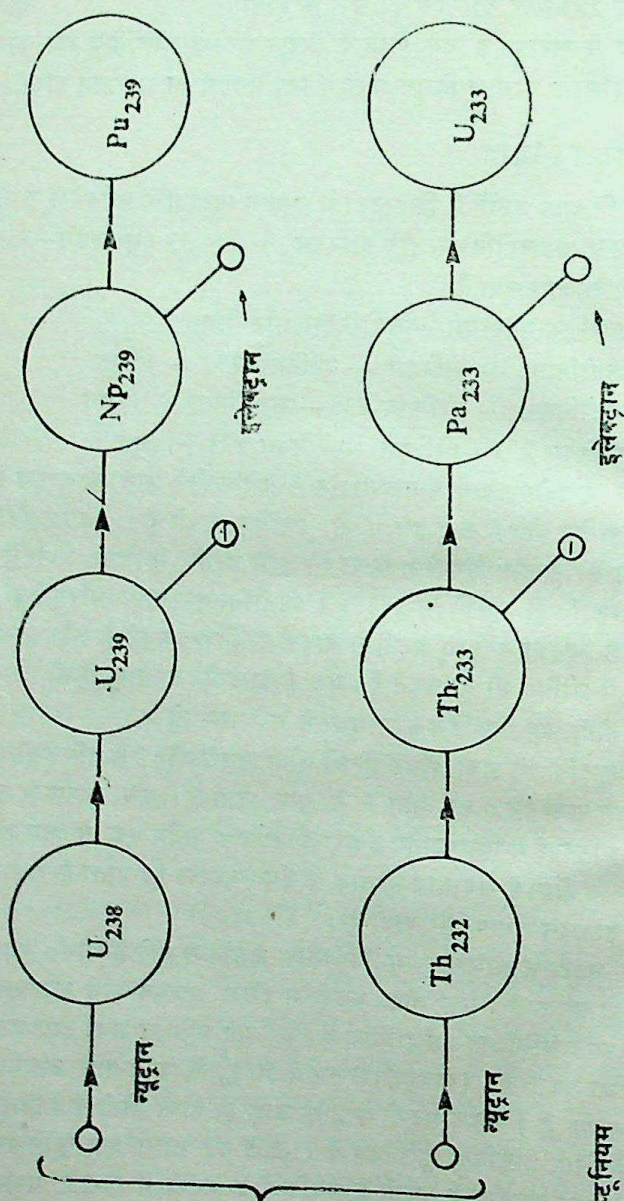
यदि न्यूट्रॉनों की ऊर्जा अधिक हो तो  $n$  का मान 2 और 2 से अधिक हो सकता है किन्तु कम ऊर्जा पर  $n$  का मान 2 से कम होता है। इस कारण से तापीय (थर्मल) भट्टियों में विखण्डनीय ईंधन परिवर्तनांक सदैव एक से कम होता है तथा खंडनीय ईंधन के लगातार उपयोग से ईंधन समाप्त हो जाता है तथा नव-ईंधन का उत्पादन समाप्त हो जाता है।

तीव्र भट्टी में अधिकांश न्यूट्रॉन अधिक ऊर्जावान होते हैं और  $n$  का मान 2.7 तक हो सकता है। अतः तीव्र भट्टी में ईंधन प्रजनन-कार्य सफलतापूर्वक होता है। इसके अतिरिक्त (सैद्धान्तिक रूप से) शत-प्रतिशत ऊर्जा तीव्र भट्टी से प्राप्त की जा सकती है। (व्यवहारिक रूप में 50% के आस-पास ऊर्जा प्राप्त होने की आशा है) थर्मल भट्टी में 2% ऊर्जा ही प्राप्त होती है। किन्तु मंद-न्यूट्रॉनों के लिए, प्राकृतिक यूरेनियम में U-235 की मात्रा कम होने पर भी शृंखलित क्रिया चलती रह सकती है जबकि तीव्र भट्टी में U-235 या प्लूटोनियम (Pu-239) की अधिक मात्रा चाहिए।

चूंकि तीव्र भट्टी के ईंधन में 15% विखंडनीय पदार्थ होता है अतः उत्पन्न ऊर्जा प्रति किलोग्राम ईंधन काफी अधिक होती है। तीव्र भट्टी का छोड़ काफी

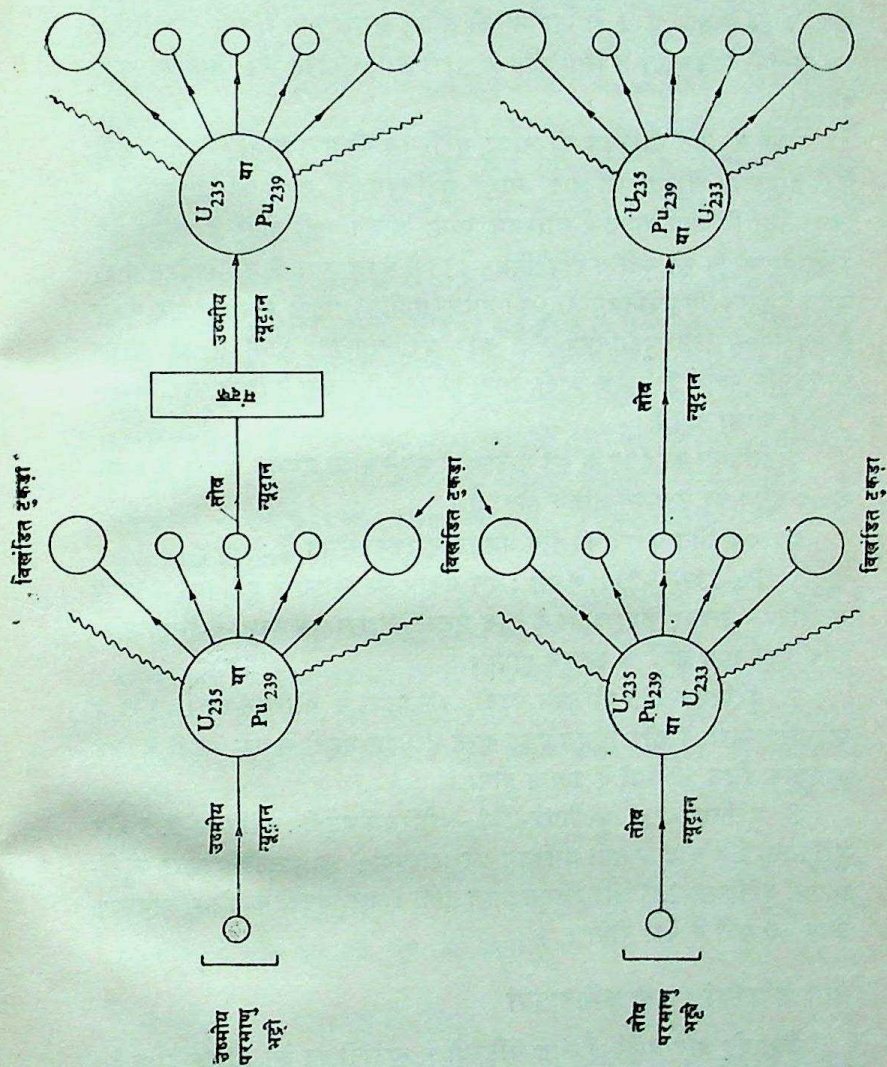


# तीव्र प्रजनन भट्टी सिद्धान्त



Np - नेप्टूनियम  
Th - थोरियम







छोटा होता है अतः क्रोड से न्यूट्रॉनों की अधिक संख्या भाग निकल सकती है। इन न्यूट्रॉनों के उपयोग के लिए क्रोड के चारों ओर U-238 का आवरण चढ़ा देते हैं।

विश्व में ज्ञात थोरियम की मात्रा, यूरेनियम की ज्ञात मात्रा की तीन गुनी है। भारत में थोरियम की ज्ञात मात्रा यूरेनियम की मात्रा की 20 गुनी है। किन्तु जैसा कि आप जानते हैं थोरियम स्वतः खंडित नहीं होता है यद्यपि जब थोरियम न्यूट्रॉन को बंदी कर यूरेनियम-233 में बदल जाता है तो विखंडनीय हो जाता है। अब इस यूरेनियम-233 को थर्मल (तापीय) भट्टी में प्रयुक्त कर सकते हैं। यूरेनियम-233 प्लूटोनियम-239 और यूरेनियम-235 दोनों से ही अच्छा विखंडनीय पदार्थ है। तीव्र भट्टी में यह U-235 से अच्छा है किन्तु प्लूटोनियम-239 से अच्छा नहीं है।

प्लूटोनियम का ईंधन के रूप में उपयोग करने वाली प्रजनक भट्टी में विखंडनीय ईंधन का उत्पादन अधिक होता है।

प्रयोग में तीन प्रकार की तीव्र प्रजनन भट्टियाँ संभव हैं :

1. Pu-239-U-238 भट्टी : इस प्रकार की भट्टी में यूरेनियम-238 से प्लूटोनियम उत्पन्न किया जाता है। इस भट्टी के द्वारा एक भट्टी के लिए आवश्यक ईंधन सात वर्षों में उत्पन्न होगा।

2. यूरेनियम-233-थोरियम भट्टी : इस भट्टी में थोरियम को U-233 में परिवर्तित करते हैं और विद्युत प्राप्त करते हैं। इस भट्टी से एक भट्टी के लिए आवश्यक ईंधन 20 वर्षों में उत्पन्न होगा।

3. यूरेनियम-233, यूरेनियम-238—थोरियम भट्टी : यूरेनियम-233 और यूरेनियम-238 क्रोड में तथा थोरियम का आवरण। इस भट्टी के द्वारा प्लूटोनियम, यूरेनियम-233 और विद्युत प्राप्त होगी। एक भट्टी के लिए आवश्यक ईंधन 10 वर्षों में पैदा होगा।

**तीव्र भट्टियाँ : कुछ कठिनाइयाँ**

जैसा कि आप जानते हैं तीव्र भट्टियों में न्यूट्रॉनों का वेग अधिक होता है। ये तीव्र वेग के न्यूट्रॉन भट्टी के विभिन्न अंगों से टकराते रहते हैं और उनको हानि पहुंचाते हैं। कितनी और किस प्रकार की हानि विभिन्न अंगों में होती है, यह उनके पदार्थ पर निर्भर करता है तथा यह अनुसंधान का विषय है।

तीव्र भट्टियों का ईंधन तापीय (थर्मल) भट्टियों की अपेक्षा अधिक समय तक भट्टी में रहेगा। अतः उस पर विकिरणों का प्रहार भी अधिक समय तक होगा। इसके अतिरिक्त चूंकि इस ईंधन में विखंडनीय पदार्थ अधिक होता है और मूल्य भी काफी होता है अतः इसे भट्टी में काफी समय तक रखते हैं।



प्रति किलोग्राम अधिक ऊर्जा प्राप्त हो। (तापीय भट्टी से प्रति किलोग्राम 60,000 से 2,50,000 किलोवाट घंटा ऊर्जा प्राप्त होती है जबकि तीव्र भट्टियों से 4,00,000 से 10,00,000 किलोवाट घंटा (एक यूनिट) ऊर्जा प्राप्त होने की आशा है)। अतः तीव्र भट्टी के ईंधन को ऐसा होना चाहिए कि वह विखंडन के समय उत्पन्न विखंडन गैस तथा तीव्र न्यूट्रॉनों के प्रभाव को झेल सके। कार्यकुशलता तथा मूल्य को ध्यान में रखकर ईंधन का उत्पादन स्वयं में एक बड़ी समस्या है।

चूँकि उत्पादित ऊर्जा भी अत्यधिक होती है अतः भट्टी से उसको हटाने की व्यवस्था भी उत्तम होनी चाहिए। इस कार्य के लिए प्रयुक्त शीतलक ऐसा होना चाहिए जो सरलता से और सक्षमता से ऊष्मा का आदान-प्रदान कर सके। सोडियम द्रव का उपयोग प्रस्तावित है किंतु सोडियम और जल एक-दूसरे से तीव्र प्रतिक्रिया करते हैं जिससे क्षरण और विस्फोट दोनों ही संभव है। इसके अतिरिक्त सोडियम शीघ्र रेडियो सक्रिय हो जाता है अतः यदि विस्फोट हो गया तो वह अत्यंत भीषण होगा और उससे होने वाली हानि की कल्पना संभव नहीं है। अतः अच्छे शीतलक का खोजा जाना भी आवश्यक है।

भट्टी तथा यंत्रों की सुरक्षा के लिए भी सतत प्रयत्न होना आवश्यक है क्योंकि तीव्र भट्टी में विस्फोट, थर्मल भट्टी की अपेक्षाकृत शीघ्र संभव है। थर्मल भट्टी में उत्पन्न एक न्यूट्रॉन को विखंडन करने में एक मिली सेकंड (सेकंड का हजारवां भाग) लगता है, किंतु तीव्र भट्टी में एक विखंडन सेकंड के दस लाखवें भाग में हो जाता है। अतः तीव्र भट्टी में हुए अवरोध या विस्फोट को नियंत्रित करने के लिए बहुत कम समय मिलता है। इस कारण सुरक्षा-व्यवस्था बहुत तीव्रगामी तथा प्रभावशाली होनी चाहिए।

सुरक्षा की दृष्टि से U-233 और थोरियम चक्र (239)-(238) चक्र से अच्छा है क्योंकि दुर्घटना होने पर यदि सोडियम द्रव कम हो जाए तो अपेक्षाकृत शक्ति में वृद्धि एकाएक तीव्र नहीं होती है।

### तीव्र भट्टियां : वर्तमान डिजाइन

तीव्र भट्टी के डिजाइन और थर्मल भट्टी के डिजाइन में कोई विशेष अंतर नहीं है। वास्तव में, थर्मल भट्टी के कुछ अंग, तीव्र भट्टी में अनुपयोगी हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, तीव्र भट्टी में मंदक नहीं होता है क्योंकि मंदक की आवश्यकता नहीं रहती। इसके अतिरिक्त चूँकि इसमें ऊष्माका उत्पादन अत्यधिक होता है अतः ऊष्मा को हटाने के लिए पिघली हुई धातुओं का उपयोग करते हैं। इस प्रकार की भट्टी का आकार अत्यंत छोटा होता है। लास एलमास

(अमरीका) में स्थित तीव्र भट्टी का क्रोड बेलनाकार है जिसका व्यास 15



से० मी० तथा ऊंचाई भी 15 से० मी० है।

इसी प्रकार एनरिको फरमी नाम की संयंत्र लेक इरिए, लगूमा बीच, डेट-राइट अमरीका एक तीव्र प्रजनक भट्टी है। इसमें ईंधन के लिए संबंधित यूरेनियम का उपयोग होता है जिस पर बहुत कम (U-235) की मात्रा वाले यूरेनियम का आवरण होता है। इसके क्रोड से 2,68,000 किलोवाट ऊष्मा ऊर्जा तथा पर्वत से 32,000 किलोवाट ऊष्मा ऊर्जा प्राप्त होती है। इसे ऊष्मा से 94,000 किलोवाट घंटा विद्युत प्राप्त होती है। इसकी सक्षमता 31.3 प्रतिशत है। इस भट्टी के क्रोड का व्यास 77.5 से० मी० तथा ऊंचाई 79.25 से० मी० है।

इसमें दो शीतलक तंत्र, प्राथमिक और द्वितीयक, हैं जिनमें सोडियम द्रव बहता है। सोडियम द्रव क्रोड तथा आवरण दोनों से बहकर क्रोड के ऊपर एकत्र हो जाता है जहां से यह तीन निकास नलियों से यह तीन प्राथमिक ऊष्मा आदान-प्रदान तंत्रों में जाता है। द्वितीयक शीतलक इनसे ऊष्मा ग्रहण कर, दूसरे ऊष्मा आदान-प्रदान तंत्र में से गुजरता है जिसमें से पानी बह रहा होता है। यह पानी वाष्प में बदल जाता है और फिर इस वाष्प को टरबाइन में भेजते हैं जिससे जनित्र चलते हैं।

यदि किसी कारणवश भट्टी को बंद करना हो तो इसके लिए दो स्वतंत्र न्यूट्रॉन शोषकों की व्यवस्था रहती है। यदि कभी एक यंत्र खराब हो जाए तो दूसरा यंत्र स्वतः कार्य कर सके।

### तीव्र प्रजनक अनुसंधान परमाणु भट्टी

कालापाक्कम (तमिलनाडु) के उत्तर में तीव्र प्रजनक अनुसंधान भट्टी का निर्माण हो रहा है। इसके अतिरिक्त भारत और फ्रांस के बीच एक समझौता हुआ है जिसके अनुसार भारतीय वैज्ञानिक फ्रांस में हो रहे अनुसंधान में भाग लेंगे तथा अनुभव प्राप्त करेंगे।

अमरीका, फ्रांस, इंग्लैंड, पश्चिमी जर्मनी और रूस में भी इन भट्टियों पर अनुसंधान हो रहा है। अनेक उपर्युक्त देशों ने 250 से 350 मेगावाट के ताव्र भट्टियों के प्रोटोटाइप भी बना लिये हैं तथा यह अनुमान है कि सन् 1980 ई० तक 1,000 मेगावाट भट्टी का निर्माण हो जायेगा। अपने देश की योजना के अनुसार भारत सन् 1980 ई० तक 3,000 मेगावाट विद्युत उत्पन्न करने लगेगा और इतना प्लूटोनियम भी उत्पन्न कर लेगा कि प्रतिवर्ष 400 मेगावाट की तीव्र प्रजनक भट्टी लगाई जा सके।



CC-0 Agamniogenesis and its observations are not permitted in any form of publication by IKS MoE 2025-Grant



की समस्याओं को जन्म दिया। अमरीकी परमाणु ऊर्जा आयोग की एक रिपोर्ट के अनुसार—परमाणु भट्टियों में जो दुर्घटना हुई है, उससे यह ज्ञात होता है कि दुर्घटनाओं का मूल कारण—सुरक्षा सीमाओं में ढील तथा उपकरणों के अभिकल्प, उत्पादन और भट्टियों के निर्माण समय में भूलें और दोष हैं।

जब अमरीका जैसे देश में, जहां तकनीकी ज्ञान और विकास उच्च सीमा पर है, जहां का उत्पादक और उपभोक्ता क्रमशः अपने कर्तव्यों और अधिकारों के प्रति जागरूक है, परमाणविक भट्टियों के निर्माण में असावधानी और लापरवाही बरती जा सकती है तो अन्य देशों में क्या कुछ संभव है, उसकी कल्पना भी असंभव है।

अमरीकी उपभोक्ता पक्ष के नेता सल्फ नाडर ने यहां तक कह डाला कि चूंकि अमरीकी परमाणु ऊर्जा आयोग ने भट्टियों के निर्माण में आवश्यक सतर्कता नहीं बरती है, अतः भट्टियों के निर्माण-कार्य को रोक देना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि परमाणु भट्टियों की आपात्कालीन सुरक्षा-व्यवस्था के, आवश्यकता पड़ने पर कार्य न करने की संभावना अधिक है। यद्यपि परमाणु ऊर्जा के समर्थकों का विश्वास है कि दुर्घटना होने की अवस्था में आपात्कालीन सुरक्षा-व्यवस्था अपना कार्य करेगी तथा ऐसी दुर्घटना न हो पाएगी जिसका प्रभाव भट्टी के बाहर पड़े।

इस विवाद के किस कथन में कितनी सत्यता है कोई नहीं जानता। इस अज्ञान के दो मुख्य कारण हैं: (1) आजकल भट्टियां काफी बड़ी-बड़ी बनवाई जा रही हैं तथा (2) अभी तक कोई ऐसी भीषण दुर्घटना नहीं हुई है जिसमें आपात्कालीन सुरक्षा-व्यवस्था की परख हो सकती।

इस विवाद का मर्म समझने के लिए आपको अपने भट्टी-संबंधी ज्ञान को कुरे-दना पड़ेगा। जैसा कि आप जानते हैं परमाणविक भट्टी में ऐसे यूरेनियम ईंधन का उपयोग किया जाता है जिसमें U-235 की मात्रा अधिक होती है। ईंधन छोटे बेलनाकार टुकड़े होते हैं जो एक से०मी० व्यास के तथा एक से० मी० ऊंचे होते हैं। एक भट्टी में लगभग 100 टन यूरेनियम डाइऑक्साइड होता है किंतु इसमें परमाणु बम के समान विस्फोट कभी नहीं होगा।

परमाणु ऊर्जा विरोधी जिस संभावना से भयभीत हैं, वह है ईंधन का अत्यधिक गर्म होकर पिघल जाना और फलस्वरूप मृत्युजनक विकिरणों का वातावरण में फैलाव। यह क्रिया उस समय संभव है जबकि शीतलक निर्धारित कार्य न करे।

### शीतलक के कार्य

जैसा कि आप जानते शीतलक के दो मुख्य कार्य हैं: (1) भट्टी में उत्पन्न



ऊष्मा को हटाना तथा (2) ऊष्मा का उपयोग कर, जल को वाष्प में बदलना । (इस वाष्प से ही टरबाइन और जनित्र चलते हैं तथा विद्युत उत्पन्न होती है ।)

परमाणु ऊर्जा विरोधियों (प० ऊ० वि०) के अनुसार, यदि किसी कारणवश शीतलक के नल फट जाएं तो निम्न क्रियाएं संभावित हैं :

क्रोड का तापक्रम बढ़कर  $1400^{\circ}\text{C}$  पहुंच जाएगा । इस तापक्रम पर जिर-कलाय तथा वाष्प की क्रिया से हाइड्रोजन और गैस उत्पन्न होगी इसमें और ऊष्मा उत्पन्न होगी । कुछ ही मिनटों में तापक्रम  $2200^{\circ}\text{C}$  हो जाएगा । इस तापक्रम पर ईंधन पिघलकर चमकीला गोलाकार ठोस बन जाएगा तथा चतुर्दिश ऊष्मा बिखरेगा । अगले आधे घंटे में इस्पात का परिरक्षक भी पिघल जाएगा । अगले 24 घंटों में शीतलक यंत्र नष्ट हो जाएगा । इसके साथ-साथ हानिकारक रेडियधर्मी गैसों जेनन क्रिप्टन तथा आयोडीन वातावरण में फैल जाएंगी । तत्पश्चात् स्ट्रांशियम-90 भी वातावरण में फैल जाएगा ।

परमाणु ऊर्जा अधिकारियों (प० ऊ० अ०) का मत है कि उपर्युक्त बातें सम्भव ही नहीं हैं । उनके अनुसार, जिस सीमा तक यंत्रों, उपकरणों और साज-सज्जा की जांच-पड़ताल तथा परीक्षण नवीनतम तकनीक से परमाणु ऊर्जा उद्योग में किया जाता है वैसा कहीं भी नहीं होता है । अतः यंत्रों के आवश्यकता पड़ने पर कार्य न करने का प्रश्न ही नहीं उठता ।

### दुर्घटना सम्भावना

यदि कोई भट्टी एक वर्ष तक कार्य करती है तो उस संचालन को एक भट्टी वर्ष कहते हैं । उदाहरणार्थ, यदि चार भट्टियां तीन वर्ष तक कार्य करें तो कुल संचालन अनुभव 12 भट्टी वर्ष होगा । प० ऊ० अ० का मत है कि उपर्युक्त दुर्घटना की सम्भावना 20,000 भट्टी वर्ष संचालन में एक बार है तथा ऐसी दुर्घटना जिसमें आपात्कालीन शीतलक व्यवस्था कार्य कर सकेगी, 1,000 भट्टी वर्ष में एक बार है ।

लेकिन इस सम्भावना से प० ऊ० वि० एकमत नहीं है । उनका कथन है कि भट्टी में वास्तव में क्या होता है, कोई नहीं जानता । उनके इस वक्तव्य को कुछ भट्टियों के ईंधन छड़ों के विकृत हो जाने तथा ईंधन टुकड़ों के नीचे खिसक जाने से बल मिला । यह बात तब ज्ञात हुई जबकि छड़ों को दुबारा ईंधन भरने के लिए निकाला गया । सीमाग्य से कोई दुर्घटना नहीं हुई, किंतु सम्भावित भीषण दुर्घटना से इन्कार नहीं किया जा सकता । प्रमुख भौतिकविद डॉ० लाप के अनुसार इसलिए और अधिक है क्योंकि वर्तमान समय में काफी बड़ी-बड़ी भट्टियां बनाई जा रही हैं । डॉ० लाप के कथन को इलिनाइस, डेस डेन में स्थित 800 मेगावाट की भट्टी में हुई दुर्घटना से बल मिलता है । यह दुर्घटना बहुत साधारण खराबी



## 120 / परमाणु और मानव

से शुरू हुई, किंतु उससे एक के बाद एक दूसरी खराबी पैदा होती गई और अंत में क्रोड बेकार हो गया।

यही नहीं सन् 1970 ई० में एक अमरीकी कम्पनी, एयरोजेट न्यूक्लीयर कम्पनी ने 9 इंच व्यास की परमाणु भट्टियों के नमूनों पर प्रयोग किये। कम्पनी के अनुसार, किसी भी दशा में आपात्कालीन शीतलक व्यवस्था ने अपना कार्य सुचारु रूप से नहीं किया।

अमरीका के कुछ वैज्ञानिक जिनमें छः नोबेल पुरस्कार विजेता भी हैं परमाणु ऊर्जा की इन दोषपूर्ण सम्भावनाओं का लगातार प्रचार कर रहे हैं। इन वैज्ञानिकों में आचार्य हानेस आल्फवेन, आचार्य जेम्स बी कानेट तथा आचार्य जेम्स वाटसन मुख्य हैं। इनका कथन है कि एक भट्टी में हजारों हिरोशिमा बम के समान ईंधन होता है और यदि कोई दुर्घटना हो जाए तो एक भट्टी से ही 45,000 व्यक्ति मर सकते हैं तथा  $17 \times 10^{12}$  डालर मूल्य की क्षति हो सकती है और पेंसिलवानिया राज्य के समान क्षेत्रफल दूषित हो सकता है।

## रेडियधर्मी व्यर्थ पदार्थ

उपर्युक्त वैज्ञानिकों के अनुसार सबसे विकट समस्या रेडियधर्मी व्यर्थ पदार्थ की है। यद्यपि तरह-तरह के निदान इस समस्या के लिए प्रस्तावित हैं किंतु कोई सफल निदान अभी भी खोजा न जा पाया है।

ये वैज्ञानिक न्यूक्लीय व्यर्थ पदार्थ शुद्धीकरण संयंत्र, वेस्टतैली, न्यूयार्क का उदाहरण देते हैं। इस संयंत्र में व्यर्थ पदार्थ को रासायनिक क्रिया से शुद्ध कर, उसे ऐसा बनाना था जिससे व्यर्थ पदार्थ के दोष यदि समाप्त न हों तो कम अवश्य हो जाएं। इस संयंत्र के बारे में संयंत्र अधिकारियों का कथन था कि इसके विभिन्न अंग दोषहीन हैं और यदि कोई दोष उत्पन्न होता है तुरन्त उसका निराकरण हो जायेगा। प्रारम्भ में इस संयंत्र को दूरदृष्टि और कल्पना का स्तम्भ माना गया था। किंतु इस संयंत्र में भी दोष उत्पन्न हो गया और कार्यकर्ताओं के भोजन कक्ष तथा लांडी में रेडियधर्मिता फैल गई। रेडियधर्मी जल भूल से नगर के गंदे पानी के नलों में बह गया। अंत में, इस अत्यंत सक्षम और दोषरहित संयंत्र को बंद करना पड़ा।

संयंत्र अधिकारी अभी भी 60,000 गैलन रेडियधर्मी पदार्थ और बीस लाख घन फुट प्रयुक्त वस्त्र, दस्ताने, औजार, चूहे तथा अन्य पशुओं के मल मूत्र से चिंतित हैं। इन वस्तुओं की रेडियधर्मिता हजारों वर्षों तक हानि पहुंचा सकती है।



## स्ट्रांशियम-90

डॉ० साल्फ लाप अपनी पुस्तक 'रेडियोधर्मी पदार्थ : समाज की समस्या' पुस्तक में रेडियोधर्मी व्यर्थ पदार्थ के प्रमुख तत्त्व स्ट्रांशियम-90 का वर्णन करते हुए कहते हैं, "रेडियोधर्मी व्यर्थ पदार्थ के हर कनस्टर में 3 पौण्ड स्ट्रांशियम-90 की सम्भावना है। यह तत्त्व लगभग 500 वर्षों बाद हानिरहित हो जाएगा। एक अन्य तत्त्व रेडियम-226 है जो प्लूटोनियम से भी 2,000 गुना अधिक हानिकारक है। रेडियोधर्मी व्यर्थ पदार्थ समस्या का कोई हल ढूँढ़ा जा पायेगा, कोई नहीं जानता। किंतु मानव की क्षमता असीमित है और इसमें सभी एकमत हैं।

□□□



## पारिभाषिक शब्दावली

|                    |                     |
|--------------------|---------------------|
| अर्ध आयु           | Half life           |
| अपक्षारीकरण        | Desalination        |
| अनुवांशिक प्रभाव   | Genetic effect      |
| अणु                | Molecule            |
| अभिक्रियक          | Reactor             |
| आवरण               | Cladding            |
| इलेक्ट्रॉन         | Electron            |
| ईंधन               | Fuel                |
| ईंधन तत्व          | Fuel element        |
| ईंधन रिप्रॉसेसिंग  | Fuel reprocessing   |
| उत्परिवर्तन        | Mutation            |
| ऊर्वर              | Fertile             |
| एल्फा कण           | Alpha particle      |
| करणीयन             | Irradiation         |
| कोर                | Core                |
| क्रांतिकता         | Criticality         |
| क्रांतिक           | Critical            |
| गामा किरण          | Gamma rays          |
| गैस निवारण         | Gas decontamination |
| ड्यूटेरियम         | Deuterium           |
| तीव्र परमाणु भट्टी | Fastreactor         |
| तत्व               | Element             |
| ताप विनिमय संयंत्र | Heat exchanger      |
| थोरियम             | Thorium             |



|                              |                                    |
|------------------------------|------------------------------------|
| द्रव्यमान संख्या             | Mass number                        |
| दाबित जल परमाणु भट्टी        | Pressurized water Reactor          |
| दैहिक प्रभाव                 | Somatic effect                     |
| न्यूट्रान                    | Neutron                            |
| नाभिक                        | Nucleus                            |
| नाभिकीय क्रिया               | Nuclear-reaction                   |
| नियन्त्रण छड़                | Control rod                        |
| प्लूटोनियम                   | Plutonium                          |
| प्रजनन                       | Breeding                           |
| परमाणु                       | Atom                               |
| (विद्युत) शक्ति परमाणु भट्टी | (Electric) Power-reactor           |
| प्रोटॉन                      | Proton                             |
| परमाणु संख्या                | Atomic number                      |
| परमाणु भार                   | Atomic weight                      |
| बीटा कण                      | Beta particle                      |
| भारी पानी                    | Heavy water                        |
| मंदक                         | Moderator                          |
| यूरेनियम-238                 | Uranium-238                        |
| यूरेनियम-235                 | Uranium-235                        |
| यूरेनियम-233                 | Uranium-233                        |
| रेडियो एक्टिव वयमापी         | Radio active clock                 |
| रेडियो एक्टिव शृंखला         | Radio active chain                 |
| रेडियो एक्टिव सांद्रता       | Radio active concentration         |
| रेडियो एक्टिव विघटन श्रेणी   | Radio active disintegration series |
| रेडियो एक्टिव असंतुलन        | Radio active disequilibrium        |
| रेडियो एक्टिव साम्यावस्था    | Radio active equilibrium           |
| रेडियो एक्टिव क्षय           | Radio active decay                 |
| रेडियो एक्टिव कुल            | Radio active family                |
| रेडियो एक्टिव विसंगति        | Radio active anomaly               |
| रेडियोधर्मिता                | Radio activity                     |
| रेडियो एक्टिव लाग            | Radio active log                   |
| रेडियोधर्मी समस्यात्मक       | Radio active isotope               |
| लेबल्ल्ड लसा यौगिक           | Labelled compound                  |



विसरण सयंत्र

Diffusion plant

विकिरण खतख

Radiation Hazard

विकिरण

Radiation

विखंडन

Fission

विखंडनीय

Fissile

शीतलक

Coolant

सावधान

Caution

समस्थानिक

Isotope

श्रृंखलित क्रिया

Chain reaction

Gandhi Memorial College

SRINAGAR

Acc. No: 764

Dated: 1992

G.M.C.E.J



764











चन्द्रकुमार मिश्र (जन्म 10 अगस्त, 1938), कुल शिक्षा-दीक्षा कानपुर में तथा सन् 1939 में डी० ए० बी० कालेज कानपुर से एम० एस-सी० (भौतिकी) की उपाधि प्राप्त की ।

कानपुर के हलीम मुस्लिम कालेज में सन् 1959 में अध्यापन-कार्य प्रारंभ किया । सन् 1963 में राजकीय पॉलीटेकनिक कानपुर में सेवायोजित हुए । सन् 1970 से 1975 तक काबुल (अफगानिस्तान) के गाजी कालेज में अध्यापन किया । वर्तमान में राजकीय पॉलीटेकनिक कानपुर में ही कार्यरत ।

लेखन-कार्य सन् 1965 से प्रारंभ किया । सर्वप्रथम लेख 'विज्ञान प्रगति' में अक्टूबर, 1966 में प्रकाशित हुआ । अब तक 100 से अधिक लेख देश के प्रमुख हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित । लगभग एक दर्जन विज्ञान-कथाएं भी प्रकाशित ।

सन् 1971 और 1972 में हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र ट्राम्बे, बम्बई के द्वारा पुरस्कृत ।



Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu



ज्ञान भारती

४/१४ रूपनगर, दिल्ली-११०००७